शैतानकी आँख
राहुल सांकृत्यायन

शैतानकी आँख

राहुल सांकृत्यायन

प्रकाशक

रामनाथ त्रिवेदी

हिन्दी कुटिया

पटना

१९३७ ई०

निवेदन

यह पुस्तक श्री कुलेके अंग्रेजी अुपन्यास 'अिन दि सिक्रेट सी' का स्वतंत्र भावानुवाद है। हजारीबाग जेलमें अिसे दिल बहलाने केलिये लिखा गया था, किन्तु आज तक अपने और कितने ही साथियोंके साथ कोटरलीन रहा। आज तेरह वर्ष बाद अिसे प्रकाशमें आनेका अवसर मिला है।

पटना
२०-१-३७

राहुल सांकृत्यायन
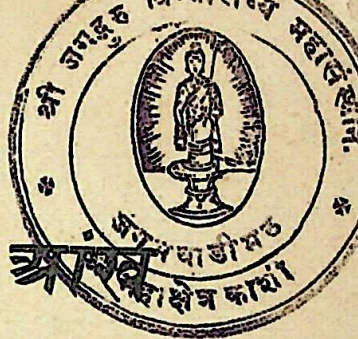
शैतानकी आंख

प्रथम अध्याय

समुद्रका उपद्रव।

मधुच्छत्र-द्वीपके दिखाई पड़नेकी पहिली रात, कप्तान प्रभुनाथ सूर्यास्तसे किरण फुटने तक प्रायः बराबर अपनी जगह पर उपस्थित रहे। उन्होंने सिर्फ एक घंटेके लिये, तीन और चार बजेके बीच विश्राम किया था। इसी समय एक अद्भुत घटना घटी। चौकीदारोंमेंसे मनोहरने, तारावोर्डमें प्रकाशकी सूचना देते हुए झूठी पगलो घण्टी कर दी। और किसीने भी उस प्रकाशको नहीं देखा। मनोहरने भी जिरहमें स्वीकार किया कि शायद मुझसे भूल हुई हो। अतः कप्तानको उठानेकी नौबत नहीं आई, और बात मजाक में उड़ गई।

"जो आदमी दो घण्टे बराबर अंधेरेमें ढूंढता रहे, तो यह बिल्कुल सम्भव है कि उसे तारे दिखलाई दें"—हरिकृष्ण ठाकुरने मुझसे दूसरे दिन कहा, जब कि मैं उनके साथ 'नकशाघर' में था। मनोहरने कहा था कि उसने आकाशमें एक प्रकार की लौ देखी। उसका चमकना और बुझना दोनों ही आधा सेकण्ड या, उससे कम ही में हुआ होगा; अतः उसके नोट करनेके लिये काफी समय नहीं था।

"शायद, वह बड़ा शक्की है"—मैंने कहा।

"हाँ! मैं भी उसपर एकदम विश्वास करने नहीं जा रहा हूं।" —तृतीय अफसरने मुसकुराते हुए कहा।

इस समय "इन्द्रायुध" द्वीपके पूर्वी ओर, दक्षिणी किनारे पर शरण लेनेके लिये जल्दी जल्दी सरक रहा था। मधुच्छत्रके टीलोंकी ऊँचाइयाँ कुहरोंसे छिपी हुई थीं। यद्यपि भूमिको देखकर हम लोग खुश थे, किन्तु यह प्राणि-शून्य प्रदेश ऐसा सुनसान मालूम होता था कि जिससे हृदय सिहरने लगता था। ऊपर, हजार हाथ ऊंचे ऊभड़ खाभड़ चट्टानोंकी पंक्तियों पर एक भारी कुहरा और बादलोंकी चादर, नीचे, चञ्चल समुद्र जहाजके लोह-गात पर फेन और लहरोंके थपेड़े मार रहा था।

हरिकृष्णने कहा—"कितने क्रूर हैं यह थपेड़े, किन्तु, तूफान के समय यही दशा सभी वन्दरोंकी होती है। पीताम्बर कहते हैं कि किसी शान्त स्थानमें बारह घंटे लंगर डाल मिलने पर इंजिन सुधार दिया जा सकता है। देखो तो माधव! 'नाविक' क्य बतलाता है।"

"अटलाण्टिक नाविक" मेज पर वैसा ही खुला पड़ा था, जैस कि कप्तान प्रभुनाथने उसे छोड़ा था। वहां एक पैरा पर पेन्सलां निशान किया हुआ था, मैं उसीको ऊंचे स्वरसे पढ़ने लगा—

"मधुच्छत्र—(अक्षांश ३५°—देशान्तर द. २५-४°, पश्चिम) इ लिये नाम पड़ा, क्योंकि इसके टीलों और उनके बीचके गड़हों इसका आकार मधुके छत्तेकी भाँति जान पड़ता है। किना सब जगह १०००-२००० फिट ऊंचा है। उतरने लायक एक

दक्षिण-पश्चिम घाट है, जहां सुरक्षित जल है, तथा पास ही गड्ढोंमें मीठा पानी है। इस द्वीपकी लम्बाई ५ मील और चौड़ाई चार मील है। पहाड़ियाँ प्रायः मेघाच्छादित रहती हैं। कहीं न वनस्पति है, न प्राणियोंका पता। यहां तक कि समुद्री चिड़ियाँ भी इस स्थान पर नहीं जातीं। भारतीय सैनिक जहाज 'बाज' १६०० में यहां टकरा गया और सभी व्यक्ति नष्ट हो गये।"

"नहीं सच मुच भयंकर है। उस वर्णनसे भी अधिक। लेकिन तो भी उपयोगी होगा"—हरिकृष्ण बोले।

उनके मुख-मंडल पर भी वही आतंक-रेखायें अङ्कित थीं, जो कप्तानसे लेकर लड़कों तकके मुखों पर दीख पड़ती थीं। यह आश्चर्यकी बात भी न थी। अपनी यात्राके चौदहवें महीनेमें "इन्द्रायुध" मोन्ते-वाइदोसे टेवुल-खाड़ीकी ओर जब जा रहा था, तो उस अक्षांशके लिये उस ऋतुमें भयानक वायव्य ट्रेडविंड उग्र हो उठी। विस्तीर्ण अगाध नील समुद्रने वायु और वृष्टिके सम्पर्कसे, एक विकट युद्ध क्षेत्रका रूप धारण कर लिया, जिसमें पर्वताकार लहरें बराबर हमारा पीछा करने लगीं। दूसरे दिन जहां धूप बिल्कुल नहीं थी, वहां बूंदकी झड़ी और गुर्राती हवाने भयं-करताको और अधिक बढ़ा दी। तीसरे दिन यह लक्षण और भी भयंकर अन्धकारपूर्ण तथा निराशामय हो गया। किन्तु इस सभी समय बूढ़ा "इन्द्रायुध" अपने मार्ग पर उसी मिहनत और बहादुरीसे, यद्यपि लुढकते और डगमगाते किन्तु अपनी प्रतिपक्षी लहरोंको चीरते हुए, अग्रसर हो रहा था। पुराने और कुरूप होने पर भी, यह 'इन्द्रायुध'की मजबूती और दृढ़ता थी, जिसके कारण पोतारोही

भय नहीं करते थे। उस समय मोमजामे विना कोई आदमी पोत-तल पर नहीं आ सकता था, और न कोई वहां आकर, विना सिहरे, विना नस नस ढीला हुये तथा बौछार खाये लौट पाता था। यह सब कुछ था, किन्तु नाविकोंके लिये; तबतक कोई चिन्ता न थी, जबतक इन्द्रायुधकी जीवन-अग्नि बनी थी। कप्तान प्रभुनाथ बड़े हिम्मतवाले आदमी थे। उनके ऐसे दृढ़ नाविक सप्तसिन्धुओंमें बहुत कम मिलेंगे।

यह तीसरा दिन था, जब कि वज्रपात हुआ—महान् समुद्रका धक्का, जिससे अपनी रक्षाके लिये पुराने पोतका महान् प्रयास, रगड़ खाते लोहोंका चीत्कार, पुनः नाड़ीका गत्यवरोध एवं इंजनकी सिसकाहटका अन्त। पतवारोंके जकड़ जाते ही आगकी शक्ति निरुपयुक्त हो गई। कुछ क्षण 'इन्द्रायुध' भीषण तरंग मालाओं पर, निस्सहाय लुढ़कता रहा, किन्तु अन्तमें उसे युद्ध-पराङ्मुख हो सीधा तूफानके पीछे चलना पड़ा। यह भगदड़ दो दिन दो रात रही, किन्तु सौभाग्यसे कोई व्यक्ति नष्ट नहीं हुआ।

तूफान अब चला गया। सूर्य्य अपने पीले और लज्जितसे मुख को बादलोंके पीछेसे दिखला रहा था। इस सारे ही समय इंजिनियर चुपचाप नहीं बैठे थे। वह बराबर इँजनको ठीक करनेमें लगे थे। उन्होंने कुछ भाग बल्कि सुधार भी लिया था। इँजन अब धीरे धीरे चलने लगा। पतवार फिर पानी हटाने लगे। यद्यपि पहली जैसी शक्ति नहीं थी, किन्तु एक बार फिर वृद्ध "इन्द्रायुध"ने पुनरुज्जीवित हो अपने मुखको पूर्व ओर फेरा। माँगेसे पूंछ तक की सारी शक्ति लगाकर, अब वह घंटेमें चार मील चलने योग्य हो सका

था। उस समय आफिसरोंने कर्त्तव्य-निर्णय किया। समीपतम आबाद स्थल त्रिस्त्रन्-द-अकुन् था। किन्तु, प्रथम तो ढाई सौ मीलकी यात्रा, यदि "इन्द्रायुध"ने इसे किसी प्रकार झेल भी ली, तो भी वहां कोई बन्दर नहीं था। मधुच्छत्र यद्यपि आबाद नहीं था एवं मार्गसे हट कर भी था, किन्तु वह सौ मील समीप था, तथा वहां एक सुरक्षित बन्दर था। अतः जहाज दक्षिण ओर चलाया गया। अब हम अपने अस्थायी मंजिलके पास पहुंच रहे थे।

धीरे धीरे खिसकते हुए, हमने दक्षिणीय किनारेको देखा। चारों ओर नंगे चट्टानोंकी विशाल दीवार और फेनिल अरार था, किन्तु जब हम अग्नि-कोणकी ओर हुए, तो चट्टानोंकी छायामें अपेक्षाकृत शान्तिपूर्ण पथ पर थे। अभी दूर ही 'इन्द्रयुध' ठैर गया।

एक नाव डाली गई, और प्रथम अफसर छै आदमियोंके साथ पता लगानेको रवाना हुए। यद्यपि तट साफ था किन्तु कप्तान प्रभुनाथ वह आदमी नहीं थे कि विना जाने अनावश्यक जोखिम सिरपर लेनेके लिए तैयार होते। जहां इतना समय व्यय हुआ, वहां एक घंटा और सही, स्थानका ठीक ठीक पता तो लग जायगा।

ऊपरकी छतसे हम लोग नावके अग्रसर होनेको देख रहे थे। मेरा सहाध्यायी उम्मीदवार विक्रम अपनी सम्मति वहीं खड़ा खड़ा जाहिर कर रहा था—"कैसा बुखार लाने वाला दृश्य है। कभी ऐसा माधव! तुमने और देखा? मर्जी है, इसे मधुच्छत्र कहो! किन्तु है कहीं यहां मिठास? वाह! मेरी रायमें इसे एक नया नाम देना चाहिए। तुम क्या कहते हो? "सर्वनाश-द्वीप" या "भूतोंका द्वीप"

या "प्रेत-द्वीप" ? इसके पता लगानेकी आवश्यकता नहीं कि यहां भूत, प्रेत हैं कि नहीं, हमें तो ऐसे निठुर स्थानके लिए कोई उपयुक्त नाम देना है।"

"तो, हमें तीनों ही प्रयुक्त करना चाहिये। किन्तु चाहे कुछ भी हो मुझे तो एक वार किनारे उतरना है।"— मैंने कहा।

"हाँ ! जरूर !! मैंने आते समय हीसे यह आशा नहीं की है कि मुझे समुद्र बाहर जाने देगा।"—विक्रमने नापसन्द करते हुए तानाके साथ कहा।

"कुछ नहीं, एक वार वहाँ जाकर लौट आनेसे ही हमें फिर समुद्र आनन्दमय लगने लगेगा।"—मैंने अनुत्साह-पूर्ण उत्तर दिया।

"कुछ नहीं, मुझे मरुद्वीपकी चाह थी, सो मिल गया; देखो कैसा है।"—उसने कहा।

"नहीं, आप तो मूंगाका द्वीप चाहते थे, और जहां सुनहला बालू, हरी घास, चारों ओर सुन्दर मधुर वन्य फल हों। क्यों ? और यह भी कि जहां सदा ही नीला आकाश और सूर्य्यका प्रकाश हो।"

"हाँ ! और कुछ भोले भाले जंगली जो मुझे अपना राजा बनालें"–विक्रमने रूखे स्वरसे कहा।

इसपर मेरी हँसी न रुक सकी, जिसे तिरछे देखते विक्रम कहने लगा—

"हमारी किंस्मतमें ऐसा ही तो किनारा बदा है। कैसा भद्दा और भयानक ! यदि यहां तकदीर खुलनेकी बात भी हुई, तो उनकी, जिनके कप्तान सम्बन्धी हैं, और जो तृतीय अफसरके बड़े भाई बनते हैं— इत्यादि। यदि यहां भाग्य खुलनेकी भी कोई बात हुई; तो अपने

लोग पहले देखे जायेंगे, दूसरोंके पल्ले पड़नेको कहां आशा है ?"

विक्रमसे पाँच मिनट भी विना उसके डाह भावके प्रकाशित हुए, बात करना असम्भव था, किन्तु मैंने उससे झगड़ना छोड़ दिया था। एक दिन विक्रमने मुझे क्रोधित किया था। फिर क्या था दोनों की गुत्थम-गुत्था हुई। यद्यपि मैंने उसे खूब पटकी मारी और जमीन पर रगड़ा। सबके देखने तथा विक्रमके ख्यालमें भी मैंने अच्छी प्रकार ठीक कर दिया था; किन्तु जब मुझे आप बीती याद आई। किस प्रकार मेरी नाक, हाथ, पैर चमड़े छिल गये थे। अंग अंग दर्द कर रहा था। तो मन ही मन मैंने फिर ऐसा करनेसे तोबा की। यही वजह थी कि मैं अब विक्रमकी बातोंका अधिक ख्याल नहीं करता था।

अब मैं वहांसे दूसरी जगह हटकर नावको देखने लगा। नाव अब चट्टानोंकी आड़से ही किनारेके पास चली गई थी। मेरा ख्याल अब विक्रमकी ओर गया। मैं भी सचमुच उसीकी भांति पहले स्वप्न देखा करता था। किस प्रकार अनेक द्वीप द्वीपान्तरोंकी सैर होगी। किस प्रकार वहांके कष्टों और बलाओंको पार कर एक सुखका साम्राज्य विजय करेंगे। जिसमें सोना, चांदी, अन्न, धन सभी चीजें अप्रयास हाथमें आयँगी; कोई चीज की कमी नहीं रहेगी—इत्यादि। किन्तु अब यथार्थ बात मालूम होती है। समुद्रमें कहीं लक्ष्मी फेंकी हुई नहीं है। वहां भी वैसी ही मिहनतकी जरुरत है, जितनी और जगह। मुझे यह सचाई तब मालूम न थी। इसी लिये मैं बहिन कमलाको निःसहाय अपने भाग्य पर छोड़ आया। मेरे लिये यह योग्य न था। जिसने कष्ट और प्रेम से,

माता पिताके अभावको विस्मरण करा मुझे बड़ा किया; जिसने अनेक कष्ट सह मेरी उन्नति और भलाईका मार्ग साफ किया; अवश्य मेरे लिए यह कापुरुषता थी, कि उसकी सहायता करनेके समय मैं इधर भाग आया। किन्तु क्या करूं? यही स्वप्न तो इसके कारण हुए।

मेरा विचार-सूत्र यहीं भंग हो गया, क्योंकि इसी समय औरोंने प्रथम आफिसरके वहांसे लौटनेकी बात कही। मैंने भी देखा, किनारे पर पहुंच उन्होंने उतरनेकी आवश्यकता शायद नहीं समझी। सब बात तो खुली थी, वहाँ विश्राम घर और उतरने के घाट तो बने नहीं थे। आफिसरने देखकर नाव मोड़ी। वह धीरे धीरे जहाजकी ओर आ रही थी। हाथमें हिलती हुई सफेद रूमाल हमें सूचना दे रही थी कि, सब ठीक है। कप्तान और अन्य अफसर पुल परसे भी उधर ही देख रहे थे।

यह जीवनका सन्देश था। थोड़ी देरमें "इन्द्रायुध" फिर धीरे धीरे अग्रसर हुआ। वह शनैः शनैः सरकने लगा जब तक कि नाव भी पास आ गई। प्रथम आफिसर अब सीढ़ी पर दौड़े। जब वह पोततल पर पहुंचे तो कप्तानने पूछा—

"सब ठीक तो है, महाशय समरसिंह?"

"हां जनाब! विल्कुल ठीक है। पूरा अवकाश, और साफ रास्ता, और तिसपर भी पर्याप्त तैराऊ जल। सचमुच इससे अच्छा स्थान नहीं मिल सकता। इतना ही नहीं—"

"वाह!" कप्तानने प्रश्नके तौर पर कहा, जिस पर समरसिंह मुसकराये—

'नहीं जनाब ! हमीं अकेले नहीं हैं। वहां खाड़ीमें एक और भी पोत खड़ा है ।

सभो कानों और हृदयोंने बड़े ध्यान और आश्चर्यके साथ इसे सुना। सैकड़ों मील रास्तेसे हटकर, दूसरा भी स्टीमर ! इस पर कितने ही सेकण्ड बीत गये जब कप्तानका मुंह खुला—

"कैसा स्टीमर है, कैसे यहां पहुंचा ?

"यह एक छोटा सा अमेरिकन स्टीमर है, महाशय ! न्यु-आर्लियन का। "मौड मूलर" उसका नाम है। स्टुअर्ट जेक्सन उसके कप्तान हैं। उसके मिल जानेसे इतनी देर लौटनेमें हुई। जरा एक मिनट ठहरें, मैं सब कहे देता हूं।"

वह अपने नौकारोहियोंको आवश्यक हिदायत दे, फिर सीढ़ीसे चढ़ पुल पर कप्तानके पास चले गये। इसके बाद कितने मिनट तक सब अफसर आपसमें बात चीत करनेमें लग पड़े। उनकी बात धीरे धीरे होती थी, इसलिये हमलोगोंकी जिज्ञासा और बढ़ गई।

द्वितीय अध्याय

रेतीली खाड़ीमें दो स्टीमर ।

"रेतीली खाड़ीमें तंग प्रवेश-मार्गकी दाहिनी ओर, तटसे प्रायः तीस गजकी दूरी पर "इन्द्रायुध" अब विश्राम कर रहा था। उस छोटी खाड़ीमें जिसकी लम्बाई कुल तीन सौ गजकी होगी वह बड़ा सा मालूम होता था। किन्तु हजार फीट ऊँचे टीलोंकी छाया में वह यथार्थमें बहुत छोटासा था। उसकी दाहिनी ओर "मौडमूलर" खड़ा था।

वह एक अत्यन्त सुन्दर अगिनवोट था। आकार "इन्द्रायुध" से बहुत छोटा। उसकी स्वच्छता और सुन्दरता किसको नहीं दो घंटा सामुद्रिक सैरके लिये प्रलोभित करेगी। हमारे लंगर गिरानेके आध घंटेके बाद ही उसके कप्तान अपने एक मित्रके साथ मिलनेके लिये आये। उनकी मुलाकातके समय मैं भी अपने कप्तानके पास ही था, इसलिये मैं उन्हें भली प्रकार देख भाल सका। कप्तान जेक्सन बड़े दुबले पतले आदमी थे। उनके चेहरे और दृष्टिसे उनका स्वभाव बहुत नर्म मालूम होता था। किन्तु यह खूब मालूम होता था, कि उनकी स्वच्छ नील आँखें सन्मुखागत प्रत्येक वस्तुको भली प्रकार भाँप लेनेवाली हैं; जिनके कितने ही अंश दूसरे लोगोंसे छूट जा सकते हैं। उनके साथी बड़े डीलडौल के आदमी थे। किन्तु यह देखते मात्रसे कहा जा सकता था, कि

वह नाविक नहीं हैं। वह एक वृद्ध पुरुष हैं, करीब ६० वर्षके। वह मामूली सूट और उपरसे एक मोटी काली ओवरकोट पहने थे। मूंछ दाढ़ी एकदम मुंड़ी हुईं, और बाल सफेद थे। चेहरा भरा हुआ, सुनहली कमानीके चश्मेंके अन्दर तीक्ष्ण नेत्र विशेष चित्ताकर्षक थे। यद्यपि देखनेमें वह बहुत सीधे सादे मालूम होते थे, किन्तु देखने मात्र हीसे मुझे उस व्यक्तिमें साहस मालूम होता था।

कप्तान शिष्टाचारसे पूर्ण अभिज्ञ थे। उन्होंने आते ही हमारे कप्तानसे कहा:--

'महाशय! ऐसी अवस्थामें, मैं यह तो निश्चित तौर पर नहीं कह सकता, कि मैं आपका दर्शन कर बहुत प्रसन्न हुआ। किन्तु मैं अवश्य कहूँगा कि आपकी सेवा और सहायताके लिये मैं बिल्कुल तैयार हूँ।'

दोनों कप्तानोंने हाथ मिलाये, तब कप्तान प्रभुनाथने कहा— 'मैं नहीं समझता हूँ कि हमें सहायताकी आवश्यकता होगी। हमारे पास सभी आवश्यक वस्तुएं हैं, और मेरे प्रधान इँजिनियर कहते हैं कि बारह घंटेमें हमारा जहाज बिल्कुल ठीक हो जायगा। किन्तु मैं आपसे, कप्तान जेक्सन! निवेदन किये विना न रहूंगा, यदि मुझे कोई आवश्यकता होगी। सचमुच ऐसे वीरान स्थानमें सुहृदोंका मिलना बड़े सौभाग्यकी बात है। मेरे प्रथम अफसरने मुझसे कहा है कि आप यहां कुछ समयसे ठहरे हुए हैं।'

कप्तान जेक्सन—'करीब एक माससे, और आशा है, एक मास और। हाँ, यहाँ 'रायो' विश्व-विद्यालयके प्रोफेसर डेलिंगसे मैं आपका परिचय कराना चाहता हूँ। यह हमारी पार्टीके मुखिया हैं।'

प्रोफेसर डेल्गिने झुक कर हाथ मिलाया। वास्तवमें वह कम बोलने वाले आदमियोंमेंसे हैं। कप्तान जेक्सनने अपनी बात को जारी रखते हुए कहा—

"हमलोग एक भूगर्भीय नापमें निकले हैं। विश्व-विद्यालयने प्रोफेसर महाशयको छै मासका अवसर दिया है; कि वह दक्षिणीय अटलांटिकके कुछ टापुओंको भूगर्भ-शास्त्रीय अन्वेषणकी दृष्टिसे देखें, और "मौडमूलर" एवं मुझे भी साथमें कर दिया है। साथ ही ब्राजील एवं अर्जण्टाइन प्रजातंत्रोंसे इस खोजका आज्ञा-पत्र भी ले दिया है। कप्तान प्रभुनाथ! आप जानते हैं कुछ भूगर्भ-शास्त्रके विषयमें ?"

हमारे कप्तानने मुस्कुराते हुए सिर हिलाया—

"कप्तान जेक्सन! मैं भी वैसा ही कोरा हूं, किन्तु इसमें सन्देह नहीं कि विषय बड़ा रोचक है अवसर हो तो प्रोफेसरसे बात करेंगे।"

"और मैं महाशय! इसके कहनेकी आवश्यकता नहीं समझता, कि न्युआर्लियनवासी स्टुअर्ट जेक्सन, विज्ञानके पवित्र कार्यमें नियोजित करके कृतार्थ कर दिया गया है। मैं उमीद करता हूँ कि थोड़े ही दिनोंमें इन टापुओंके विषयमें हमें एक बड़ा ग्रन्थ प्राप्त होगा, जिसमें मैं और मेरा पोत भी होगा। है न प्रोफेसर साहब ?"

यह प्रथमवार था, प्रोफेसरके मुख खुलनेको। वह सूखी मुस्कुराहटके साथ बोले—

"मैंने इसके लिये कप्तान जेक्सन! वचन दिया है, उसका पालन अवश्य होगा। मुझसे जहाँ तक हो सकेगा, आपको अमर करने

का प्रयत्न करूँगा। सचमुच आप ऐसे पुरस्कारके भाजन हैं!"

तब सब लोग हँसने लगे, जिसमें कप्तान जेक्सनकी हँसी खुल कर थी। तब सीधे वह लोग हमारे कप्तानके वासामें गये। वहाँ इस मुलाकातके उपलक्ष्यमें जलपान तय्यार रखा गया था। दश मिनटके बाद विदा होते समय कप्तान जेक्सनने कहा—

"मैं आपके सुधारनेके काममें बाधक नहीं होना चाहता, कप्तान प्रभुनाथ! तथापि मैं अपनेको बड़ा सन्मानित समझूँगा, यदि आप, या आपके अफसरोंमेंसे कोई, विदा होनेसे पूर्व 'मौड मूलर' पर तशरीफ लायें।"

इस निमंत्रणके साथ जिसको हमारे कप्तानने भी बड़े उत्साह पूर्वक स्वीकार किया, दोनों सज्जन सीढीसे नीचे उतर डेंगी पर सवार हुये, और अपने जहाजको लौटे।

सचमुच दोनों पुरुषोंने बड़ी समवेदना और शुभेच्छा प्रकाशित की जो ऐसे अवसरके लिये अत्यन्त उपयुक्त थी। यह वास्तविक मनुष्यता अथवा मानव-बन्धुताका असाधारण आकर्षण था; जिसने अपने आपद्ग्रस्त भाईकी दिलजोई पर एक दूसरेको बाध्य किया। उस समय मुझे यह उमोद न हुई कि, उससे भिन्न रूप में मैं फिर भी उन दोनों महानुभावोंको देख पाऊँगा।

उनके विदा होनेसे पूर्व ही, मरम्मतका काम आरम्भ होगया था। इंजिनियर महाशयने १२ घंटेकी ही देरी बतलायी थी, किन्तु इंजनके अतिरिक्त वहां और भी कई बातें सुधारनी थीं। बहुत जल्द सारा जहाज आरों और हथोड़ोंकी आवाजसे गूंज उठा। जब इधर यह काम हो रहा था, उसी समय जलकी अपेक्षा

समझ कप्तानने मुझे और विक्रमको तृतीय आफिसरके साथ पानी के जोगाड़ करनेमें लगा दिया। "नाविक"में लिखे अनुसार ही जलकुंड टीलेके सामने नीचे था। उस तंग तटप्रान्तका बालू साधारण समुद्रतटके बालुओंके सदृश न था। उसमें सूक्ष्म धूलि थी, जिसमें काले काले प्रस्थरखंड मिले हुये थे। पीछे पहाड़ी एकदम सीधी ५० फीट ऊंची दीवार सी खड़ी थी, जिसके ऊपर भी ज़रा पीछे हटकर दूसरी दीवार। इसी क्रमसे १००० फीट ऊंची। वह पहाड़ी मानो एक महाकाय आरेकी भाँति खड़ी थी। जिसपर ऐसी नीरवता छाई थी, जिसमें किसी सामुद्रिक पक्षीकी भी धीमी चहचहाहट नहीं सुन पड़ती थी।

हरिकृष्णने कहा—"इस भागके दूसरे सारे ही टापू सामुद्रिक-पक्षियोंसे पूर्ण हैं, किन्तु यहाँ, देखो, एक भी पर का पता नहीं। कैसा जीवनशून्य श्मशान-सदृश यह स्थान है ?"

"यहाँ उन्हें कुछ खानेको नहीं मिल सकता, इसीलिये तो" विक्रमने मुंह बना कर कहा।

"हाँ ! सचमुच देखो न, लेकिन पानी बहुत अच्छा है।"—तृतीय अफसरने कहा—

जल बहुत स्वादिष्ट और स्वच्छ था। हमलोगोंका काम दोपहर से पूर्व ही समाप्त हो गया था। हमारे कामके समाप्त होते ही विक्रमने एक प्रस्ताव पेश किया :—

"क्यों माधव ! एक वार ज़रा किनारेकी सैर कैसी रहेगी ? इस पहाड़ी पर चढ़कर ज़रा आस पास देखना चाहिये। जहाजमें एक जगह पड़े पड़े दिल ऊब गया है। चलो न ज़रा टहल आयें।"

मैं—"हाँ ठीक तो है । मेरी भी तबियत यही करती है। जाओ न फिर समरसिंहसे कहो ।"

विक्रम दाँत पीसने लगा । उसके लिये प्रथम अफसर जहर सा था। उसने बात मारके कहा :—

"तुम जाओ, बड़े भाईसे कहो। कहोगे तो मैं तुम्हें एक चीज दूंगा, कभी ।"

मैंने "एकचीज" वहीं विक्रमको भुगता दी, लेकिन हरिकृष्णसे जाकर इसके लिये कहा। उनकी इच्छा भी जरा घूमने की थी।

उन्होंने कहा—'मैं भी टहलना पसन्द करता हूं, मैं देखता हूं, कि इसके लिये हमें अवकाश है । लेकिन तुम दोनों बदमाशोंको एक साथ जाने देनेके लिये मैं तय्यार नहीं हूं।"

कप्तानने भी इसका कोई विरोध नहीं किया, किन्तु यह सचेत कर दिया—

"खबरदार, मधुच्छत्र इसका नाम व्यर्थ नहीं है, गड़हे खड्डोंको बचा कर चलना। यह भी ख्याल रखना, कि हमलोग बहुत समय बर्बाद कर चुके हैं; यदि तुमलोग रास्ता भूल गये, तो हम इसके लिये प्रतीक्षा नहीं करेंगे, सूर्य्योदय होते ही लंगर यहाँसे उठा दिया जायगा यदि सभी भाँति कुशल रहा।'

हमलोगोंने रसोई-घरमें जाकर कुछ खाना दाना किया, और वहाँसे निकल पड़े। जब मैं तट पर पहुंचा तो, मुझे यह विद्यालयके आधे दिनकी छुट्टीकी भाँति आनन्ददायक मालूम होती थी। मुझे इस समय अपना सहाध्यायी दोस्त मोहनस्वरूप याद आने लगा। मानों नालन्दा विद्यालयसे आधे दिनकी छुट्टी हो जानेसे आज राजगृह

पर्वतकी सैर तय पाई है। मुझे अब वहींका दृश्य सन्मुखीन होता मालूम होने लगा। आगे आगे मैं चल रहा हूं। पीछे मित्र मोहन आ रहा है। मैं इस ध्यानमें इतना मग्न हो गया, कि एकबार मैंने पीछे फिर कर देखा, किन्तु वहां मोहन न था। विक्रमने पूछा :—

"क्यों, क्या बात है ? क्या ख्याल पड़ा ?"

मैं—"कुछ ख्याल कर रहा था ?"

विक्रम—"वह क्या ?"

मैं—"एक पुराना सहाध्यायी मित्र याद पड़ा।"

वि०—"हाँ तुम मेरे बदले उसको यहाँ चाहते थे !"

मैं—"क्यों नहीं ?"

वि०—"तो क्या करियेगा, यहाँ तो मैं ही हूं वह तो है नहीं।"

हरिकृष्णकी इच्छा एक एक रौंदा करके ऊपर चोटी पर चढ़नेकी थी, कि वहाँसे फिर चारों ओरका दृश्य देखा जाय। किन्तु थोड़ी दूर चलने पर हमें एक रास्ता सा मालूम हुआ। उससे हम खाड़ीकी पश्चिमकी आर पर पहिले रौंदेके ऊपर पहुंच गये। वहांसे फिर उसी तरह दूसरी पैंडी पर पहुंचनेका निशान बना हुआ था। इस तरह चुपचाप चलते हुए हम ६ सौ फीट पर पहुंच गये। यहाँ कुछ विश्राम लेनेकी राय हुई। नीचे छोटीसी बावलीमें "इन्द्रायुध" और "मौड-मूलर" डोंगीकी भाँति दीख पड़ते थे। उनके बौने आदमी इधर उधर अपने अपने काममें व्यस्त थे। हथोड़ोंकी 'ठुक ठाक' बराबर सुनाई देती थी। हमारे ऊपर अब भी ऊंची दीवार थी। दीवार बहुत सख्त और लोहेकी भाँति काली थी। मैंने ख्याल करके देखा तो जान पड़ा हमारी पगडंडी परके टुकड़े न पत्थर थे न बालू ही।

मैंने कहा—"क्यों इतना सुनसान है ? यहाँ कभी सहस्रों सामुद्रिक पक्षी रहे होंगे, किन्तु अब एक भी नहीं।"

विक्रम—"क्यों उन्हें यह बुखारकी तरह लगने लगा, जैसे हमें ? यह देखो, नया रास्ता फूटा है। क्या इसपर चलें ?"

अब हमलोग आठ सौ फीट ऊपर थे। यहाँसे अटलांटिककी अनन्त जलराशि आकाशसे मिली मालूम पड़ती थी। यहाँ पहिले पहिल दीवारका सिलसिला टूटा हुआ मालूम पड़ा। यह एक प्रवेश-मार्गकी भाँति मालूम होता था। जो नीचेसे बिल्कुल ही दिखलाई नहीं पड़ता था। जितना ही यह अन्दरकी ओर जाता था, उतना ही विस्तार भी इसका अधिक होता जाता था।

हरिकृष्णने कहा—"यह रास्तासा मालूम होता है। यद्यपि यह खड़ासा नहीं है, किन्तु जरूर यह कहीं शिखर पर जा निकला होगा। देखें क्या है। कितना अच्छा हुआ होता, यदि चलनेसे पूर्व प्रोफेसर महाशयसे यहाँके बारेमें पूछपाछ कर लिये होते। वह जरूर इधर घूमे होंगे। अच्छा हम अपने नोट भी चलकर उनसे मिलावेंगे। देखेंगे हमने उनसे कोई नई चीज देखी।"

हमलोग क्रमशः आगे बढ़ने लगे। उस रास्तेको छोड़कर दूसरा कोई रास्ता आगे चढ़नेका नहीं दिखाई पड़ता था। दीवारें सीधी खड़ी थीं। रास्ता यद्यपि घूमता हुआ जा रहा था, किन्तु उसका मुँह ऊपरकी ओर ही था। सामने प्रायः मील भर पर हमें एक ऊँची चोटीसी दिखाई पड़ती थी। मालूम होता था, उससे ऊँची और कोई चोटी न होगी। हमने अटकल लगा लिया जब वहाँ पहुँच जायँगे, तो लौटने भरके ही लिये हमारे पास समय रह जायगा।

यह वही रास्ता था जिसमें आफत सिर पर पड़ी। हमलोगोंने कप्तानके आदेशके अनुसार गड़हों और खड्डोंकी ओर पूरा ध्यान रक्खा था। अब हमारी दाहिनी ओर एकबैक उतराई आ गई थी। हमलोगोंने उसकी परीक्षा करना आरम्भ किया। वास्तवमें अब हम एक बड़े गड़हेके मुँह पर खड़े थे। यह गड़हा गोल न होकर अंडेकी शकलमें था। ऊपर इसके कहीं कुछ छोटी छोटी झाड़ियाँ ढाँके हुए थीं। जिसी वक्त हमने इसे आँख भर देखा हमारे होश गुम हो गये। यह था एक ऊँची पहाड़ीके पेटमें भयानक गार, जिसके मुँह पर मृत्युकी नीरवता छाई हुई थी। क्या कभी कोई किस्मतका मारा इसमें गिरा होगा ?

"अरे राम !" विक्रमने फुसफुसाते कहा "मैंने अपनी जिन्दगी भरमें ऐसा भयानक गड़हा नहीं देखा। मालूम होता है, यह सीधा पृथ्वीके मध्य तक चला गया है।"

मैं—"हाँ ! जहाँ पृथ्वीकी जठरानल अहर्निश धधा धधा करती रहती है।"

विक्रम—"ऐसा ! नहीं मैं समझता हूँ, यहाँ नीचे पानी है। देखो, पता लग जाता है।"

उसने एक बड़े पत्थरको उठा कर नीचे फेंका। हमलोग स्वांस रोक कर थोड़ी देर खड़े रहे। अन्तमें एक धीमीसे अवाज सुनाई दी, जिसमें पानीमें उछलनेकीसी ध्वनि थी।

विक्रम—"यही पानी है, जिसने आगको बुझा दिया है। ओह !" वह यह कहकर मेरी ओर घूरने लगा। मैंने उससे जान बचानेके लिये और नजदीक वाली परसे झुककर नीचे देखना चाहा। इसके

बाद क्या हुआ, मुझे पूरा याद नहीं। और जो आदमी है उसका भी ख्याल करते ही हृदय काँपने लगेगा।

मालूम होता है, मैंने अपने कदम बढ़ाते वक्त फासिलेका ठीक अन्दाज़ नहीं किया। मैंने समझा था, गढ़ा कड़े पत्थरमें खुदा हुआ है। लेकिन मुझे यह नहीं मालूम था, कि इसकी वारी पर झाँई है। मेरे पैर रखते एक सेकण्ड भी अभी नहीं हुआ था। अभी मैं अपने खतरेका अनुभव भी न कर सका था, कि मेरे पैरके नीचेकी मिट्टी खिसक पड़ी। एक चीत्कारके साथ मेरे हाथ गिर गये और मैं नीचेकी ओर चल पड़ा। मेरी यह अवस्था देख, हरिकृष्ण मुझे पकड़ने दौड़े, किन्तु वह अपने आपको सँभाल न सके। मैंने अपनी बगलमें उन्हें भी नीचेकी ओर चलते देखा। विक्रमके विषयमें इससे अधिक नहीं जानता, कि हमारे गिरते ही उसकी आँखें चढ़ गईं। वह चिल्ला कर पीछेकी ओर भागा; और हमारे सामनेसे ओझल हो गया।

तृतीय अध्याय

महागर्तका तल।

उस दिनके बाद भी मैं अनेक आपत्तियोंमें फँसा, किन्तु उस दिन जिस प्रकारका आतङ्क मेरे हृदय पर छाया था, वैसा कभी नहीं देखनेमें आया। आज भी जब कभी स्वप्नमें भी मुझे वैसा दृश्य सन्मुख आता है तो जागकर भागनेकी चेष्टा करने लगता हूँ। मेरी नसें थर्राने लगती हैं. और शरीर पसीने पसीने हो जाता है। मुझे वह महागर्त भयंकर स्वप्नसा प्रतीत होता है।

मैं नीचेको गिर रहा था। मेरे कानोंमें अब भी विक्रमकी चिल्लाहट गूँज रही थी। मेरे पैरोंके नीचे अब भी वह टुकड़ा था। एक वार उस भयंकर गर्त और अपने परिणामका स्मरण आते ही मेरी आँखें अंधी हो गईं। गात्र शून्य हो गये। मन निश्चेष्ट हो गया। मैं उसी संज्ञाहीन दशामें गिरता गिरता जा रहा था। मुझे स्वप्नकी क्षीण स्मृतिकी भाँति मालूम होता है, कि कोई घाससी मेरे हाथ पड़ी थी। मैंने उसे पकड़ लिया। कुछ क्षणके लिये उसने भी मुझे रोक रक्खा। किन्तु अन्तमें उसे भी मेरे साथ ही रसातलकी ओर चलना पड़ा। इस प्रकार एक, दो, तीन स्थान पर वैसी ही घासें मिलीं। मुझे अब याद आता है कि, यह वही घासें ही थीं, जिन्होंने मार्ग ही में मेरी आत्माको शरीरसे पृथक् न होने दिया। यद्यपि सैकड़ों हाथ हम नीचे गिरे किन्तु एकवारगी नहीं। बीचमें तीन

चार बार थम थम कर । मेरी ही तरह हरिकृष्ण भी रुकते हुए नीचे पहुँचे । प्रकाशका अभाव तो बीच हीसे आरम्भ हो गया था, किन्तु हम जितना ही नीचे जाते थे, उतनी ही उसकी घनता भी बढ़ती जाती थी । उस अतल जलने एक बार तो मुझे अपने उदरमें छिपा लिया; किन्तु जब ऊपर आया तो देखता हूँ बिल्कुल अंधेरा । हाथ पाँव मार कर जब मैंने एक ओरसे दूसरी ओर अपना मुँह फेरा, तो मुझे एक छेदसे प्रकाश दिखाई देने लगा, यह छेद अण्डाकार था । उसी समय पीछेसे एक आवाज सुनाई दी—

"माधव ! ठीक हो न ?"

आह ! वह आनन्द-स्वार्थपूर्ण आनन्द. तथापि आनन्द, जिसने मेरे सन्तापको बहुत कुछ कम कर दिया । मैं उसके उत्तरमें चिल्ला उठा, और थोड़ी देरमें हरिकृष्ण, यद्यपि स्तब्ध, किन्तु वास्तवमें मुस्तैद मेरी बगलमें थे ।

हरि—"चोट तो नहीं लगी ?"

मैं—"न-नहीं" ! आपको ?"

हरि—"बहुत नहीं—"

अब हमने एक बार स्वतंत्रतासे स्वांस ली । हमलोग थोड़ी देर चुप रहे । किन्तु हरिकृष्ण कुछ सोच रहे थे । मैंने उन पर सोचना छोड़ दिया, क्योंकि मैं समझता था, कि वह दोनोंके लिये सोच रहे हैं । मुझे उस समय उनकी विचार शक्तिपर विश्वास हो गया । और मुझे आनन्द है कि पिछले अनुभवोंने उसे और दृढ़ बना दिया । यद्यपि अवस्थामें हरि २३ वर्षके अर्थात् मुझसे ६ वर्ष ही अधिक थे, किन्तु इतने दिनोंमें उन्होंने बहुत ऊँचा नीचा देखा था । तजर्बोने

उन्हें कितनी ही लाभदायक शिक्षायें दे दीं थी, जिनके लिये मेरी बारी अब शुरू हुई।

अन्तमें उन्होंने कहा—"हमें किनारे लगना चाहिये। मैं आगे आगे चलता हूँ, किन्तु तुम पास लगे रहना। यह अच्छा है, जो पानी बहुत ठण्ढा नहीं है। किन्तु, तो भी यह अधिक देर ठैरनेके योग्य नहीं है। नहीं तो इसकी ठण्ढक हमारे शरीरको शून्य बना देगी, और फिर हमारे हाथ पैर हमारे काबूमें न रहेंगे। माधव! आओ चलें।"

हमारे उत्तरकी प्रतीक्षा किये बिना ही वह चल पड़े। हमलोग नाविक थे, अतः हमारे लिये तैरना तो कोई बड़ी बात न थी। किन्तु चित्त उस समय फिर चकित और उदास होने लगा जब पचास हाथ मारने पर हमें गर्तका दूसरा छोर न मिला और वह प्रकाश छिद्र भी आँखसे ओझल हो गया। हमें यह आशा न थी, कि ऊपरकी अपेक्षा वह गड़हा इतना भारी होगा।

यदि हमारे साथ हरिकृष्ण न होते तो मुझे नहीं उम्मेद है, कि मैं कुछ कर सकता। किन्तु वह उस अन्धकारमें बराबर आगे ही बढ़ते जाते थे। चूँकि मुझे उनके पास लगा रहना था, मैं भी उस सिहरा देने वाले जल, उस भयानक अन्धकारमें बराबर आगे ही चलनेका प्रयत्न कर रहा था। आतंक इतना था, कि मैंने उस पर न विचार कर अपने मस्तिष्कको रिक्त रखना ही उचित समझा। कितनी देर तक वह अवस्था रही? यद्यपि हरिकृष्णने १० ही मिनट बतलाया, किन्तु मेरे लिये तो वह हजारों मिनटकी भाँति मालूम हुई। एक बार मेरे देहसे कोई चीज छू गई—जो शायद मेरे ही द्वारा

उखाड़ी घास होगी—तो मेरा होश जाता रहा । मैं फिर संज्ञाहीनसा होने लगा । इतने हीमें मेरे कानोंमें आवाज़ आई—

"पीछे पीछे चले आओ माधव ! हमलोग ठीक रास्ते पर हैं ।" उसी समय मेरे मुख पर शीतल वायु-तरंगका हल्का स्पर्श अनुभव हुआ । यह वही हवा थी, जो उसी छिद्रसे उस अन्धतामिस्र जल तल पर आरही थी । उसने मुझे बड़ा उत्साह दिया । मुझे विश्वास होने लगा, कि जरूर इधर कोई मार्ग है, स्थल प्रकाश और जीवनका ।

हरि—"बराबर सीधे । मेरा हाथ भूमिमें लगा ।"

एक ही क्षणके बाद मैंने भी भू-स्पर्श किया । थोड़ी ही देरमें जलसे बाहर हो हम सूखी भूमि पर चले आये । हरिकृष्णने मेरे हाथ, मुख और हृदयको स्पर्श किया । वह भी मेरी ही भाँति हाँफ रहे थे । उन्होंने कहा—'कोटिशः धन्यवाद ।'

इसके बाद थोड़ी देर तक हम वहाँ बैठ गये । अपने कपड़े और बालोंसे पानीको पोँछा । तब हरिकृष्णने कुछ देर सोचनेके बाद कहा—

"यह वायुवीची हमारे लिये मार्गप्रदर्शक थी । यदि यह रुक गई, तो समझलेना हमारा भी अन्त है । माधव ! अब चलें न ?"

मैं—"मैं आपके पीछे हूँ । खड़े खड़े, या रेंगते ?"

हरि—" रेंगते ही, अभी देखना है, कि मार्ग कैसा सुरक्षित है । मेरे पीछे ही लगे रहना ।"

अब हमें कुछ पता लगने लगा कि, हम एक प्रकारकी गुफाके अन्दर हैं । दाहिने और बायें पथरीली दीवार है । ऊपर ऊभड़ खाभड़ छत । अब इस अंधकारपूर्ण बन्दीखानेसे मुक्त होनेके लिये

हम वायुका अनुसरण करने लगे। हमलोग बड़ी सावधानीसे चल रहे थे; ऐसा न हो कि कहीं दूसरा पातालकुण्ड मिल पड़े। लेकिन मिलता भी तो उस समय हम क्या कर सकते; जब कि त्वचा इन्द्रिय और वायु-स्पर्शके अतिरिक्त हमारा कोई पथ-प्रदर्शक नहीं था। अब आगे भूमि भी कुछ ऊंची आगई थी, जितना ही हम आगे बढ़ते थे वायुकी गति भी अधिक मालूम होती जाती थी। अवश्य आगे कोई प्रवेश मार्ग होगा। मार्ग विषम था। मालूम होता है, वर्षाके दिनोंमें इधरही किसी रास्तेसे गर्तका अधिक जल समुद्र-की ओर जाता होगा। अच्छा है, जो वर्षाका मास नहीं, अन्यथा उस एक वायु-छिद्रके भी मुंद जानेसे हमारे लिये सर्वथा निराशा थी। कुछ भी हो, हमें अब समुद्रकी आकांक्षा थी। हमारे साथी अब भी समुद्रमें होंगे। 'इन्द्रायुध' तय्यार होगया होगा। अभी भी शायद हम जल्द किनारे पर तथा 'इन्द्रायुध' पर पहुंच सकते हैं। शायद विक्रम से पूर्व।

हमारी भूमि धीरे धीरे ऊंची होती जाती थी। अब वह रोमांच-कारी गर्तका वह ठंढा जल भी नहीं था। हम अब, पहिलेसे कुछ शीघ्रताके साथ, ५० गज आगये। यहां गुफाका कोना था। यह सम-कोण या सरलकोण नहीं था, किन्तु चापकोण, जहां इस गुफा का ऐसी ही दूसरी गुफासे संयोग होता था। इस कोनेको पार करते ही हरिकृष्णने जिस आनन्दमय दृश्यको देखा, उससे मुझे भी भाग्य-शाली बनानेके लिये, उन्होंने मेरे कन्धेमें अपने बायीं बांह डालकर उधर दिखाया। आह ! वह कैसा स्वर्गीय दृश्य मुझे मालूम होता था। प्रकाश ! अहा प्रकाश !! उसके महात्म्यको, उसके

मूल्यको मेरे ही जैसा आदमी जान सकता था, जो वैसे अन्धता-मिस्रनर्कसे निकल कर आया हो । जिसको वहांकी स्मृति बिल्कुल ताजी हो ।

अब यहांसे वह छिद्र चौथाई मीलकी दूरी पर मालूम होता था। रास्तेमें बड़े छोटे रोड़े और चट्टान थी, किन्तु अब प्रकाश था, इसलिये यह मार्ग वैसा कठिन नहीं प्रतीत होता था । हमें मोक्षद्वार सामने दिखाई पड़ता था। यह गुफा एक लम्बी नलीकी भांति मालूम होती थी, जिसके दूसरे छोरपर वह प्रकाश-छिद्र था। अब थोड़ी देर और सुस्तानेके लिये हम दोनों वहां बैठ गये ।

ओह ! उस प्रकाश प्राप्तिकी आकांक्षाको क्या कहूँ, रास्ता ऊभड़ खाभड़ था, लेकिन मैं बेताहाशा ऊधर ही आगे बढ़ रहा था। कितनी ही बेर पैरके नीचेका पत्थर खिसक गया, कितनी ही बार मैं भूमि पर गिर पड़ा, केहुनो और घुटने छिल गये, अंगुली और घुट्ठी फूट गई, कपड़े फट गये, उन पैने पत्थरोंने बीसों जगहों मेरे शरीरमेंसे खून निकाल दिया, किन्तु मुझे इन सबकी कुछ भी परवा न थी। मुझे किसीकी सुधबुध न थी। मुझे तो वही प्रकाश-छिद्र दिखाई पड़ता था, और उसके जल्दीसे जल्दी पानेकी तीव्र इच्छा। हरकिष्ण भी अब अगुआके बदले पिछुआ हो गये। वह बराबर मुझसे लगेही हुए चल रहे थे। बीच-बीचमें कभी-कभी एकाध बात बोलते भी रहते थे।

अन्त पर पहुंचनेसे पहले ही मैं बिल्कुल थक गया था, किन्तु मेरी हिम्मत कम न हुई थी। यद्यपि कपड़े भींगे थे, वहां गर्मी भी न थी, किन्तु बार बार मुझे सिरसे पसीना पोछनेकी नौबत आई। मेरे

और प्रकाश-छिद्रके मध्यमें किसी वस्तुके अवरोधक होने पर मुझे गुस्सा आने लगता था। जितना ही हम आगे बढ़ते जाते थे वह प्रकाश मार्ग भी विस्तृत होता जाता था। अन्तमें उसके द्वारा हमें पहाड़ी दिखाई देने लगी। वह भी वैसी ही थी, जैसी कि द्वीपके और भागोंकी। मुझे विस्तृत अटलांटिकके देखनेकी इच्छा थी। मुझे उन रूखी दीवारोंसे कोई वास्ता नहीं था। आखिर मैंने अपने आपको द्वार पर पाया।

मैंने एकबार अपने आँखोंको मला देखा तो मालूम हुआ कि हम एक ऊंची पहाड़ीके नीचे खड़े हैं। यहांसे नीचेकी ओर खाड़ी है। रास्ता पुरानी जल-प्रणाली है। पहिली ही नजरमें मुझे सामने खाड़ीमें खड़ा 'इन्द्रायुध' भी दिखलाई पड़ा। मैंने अविश्वास करते हुए एकबार फिर आँख मली, देखने पर वृद्ध 'इन्द्रायुध' ही मालूम पड़ा। किन्तु था कुछ भेद। खाड़ी कुछ अधिक विस्तृत थी, शायद पहिलेसे दूनी, और आश्चर्यकी बात यह थी, कि 'इन्द्रायुध' का आकार बहुत छोटा तथा सूरतमें भारी परिवर्तन।

मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। क्या कोई स्वप्न तो नहीं देख रहा हूं। कहाँ यह मनोरम स्वच्छ संगमरमर सदृश पोत! क्या किसोने जादू तो नहीं कर दिया; नहीं तो यह कायापलट कब सम्भव थी। मैंने एकवार फिर आँख मली. अब मुझे दिखाई पड़ा, कि यह 'इन्द्रायुध' नहीं हो सकता, न यह वह खाड़ीहो है। मेरे नीचेकी ओर थोड़ी दूर हटकर एक घर है। यद्यपि छोटा है किन्तु है घर, जिसकी छत टीनकी है, दीवार आदि सब लकड़ीके। देखनेमें बहुत सुन्दर स्वच्छ। दर्वाजे, खिड़कियां सब बाकायदा।

मुझे इन प्रत्यक्ष वस्तुओं पर अविश्वास होने लगा। खाड़ी, स्टीमर, बंगला सभी स्वप्नसे मालूम होने लगे। मुझे इनकी वास्तविकता पर यहाँ तक सन्देह होने लगा कि, मैंने पीछे फिर हरिकृष्णकी ओर मुंह फेरा। तब मैंने कहा. यह स्वप्न नहीं है। किन्तु तो भी मेरा आश्चर्य उतना ही रहा। मैंने कहा:—

"देखिये। क्या यह सचमुच है।"

हरिकृष्ण भी मेरी ओर हक्का-बक्का हो देखने लगे। मैंने दुबारा जहाजकी ओर नजर दौड़ाई। अब मेरा शिर शून्य होने लगा। सचमुच यह सम्भव है, या मैं स्वप्ना रहा हूं। क्या यह मेरे मनकी करामात तो नहीं है, जिसने एक अद्भुत खाड़ी, एक मनोहर जहाज, एक सुन्दर बंगला मुझे मोहनेके लिये निर्माण कर दिया है। आः! इस इन्द्रजालसे पार कैसे पाऊँ! कैसे अपने मस्तिष्कको, अपनी बुद्धिको स्वस्थ कर पाऊँ। क्या है। मैं कहाँ हूं।

इस प्रकार कल्पना करते करते मैं शून्यताकी सीमामें प्रवेश करना ही चाहता था कि उस बंगलेका द्वार खुला। उसमेंसे एक आदमी बाहर आया।

चतुर्थ अध्याय

बंगलेवाला आदमी ।

हाँ ! सचमुच आदमी । वह मकानसे बाहर आ, द्वारके पास ही खड़ा था। कुछ देर तक हम उसके मुखको न देख सके । वह हमसे परिचित न था । वह खाड़ी और जहाजकी ओर देख रहा था । वह एक नाविक मालूम होता था । शायद ऊंचे पदका । उसका कोट एक छोटे नाविक अफसरका था । किन्तु टोपी गोल मामूली मांझियोंकी सी । उसको देखकर हमारा आश्चर्य अधिक नहीं बढ़ा; क्योंकि, जहाज और घरके पास मनुष्यका रहना स्वाभाविक था। किन्तु अभी भी गुत्थी सुलझी न थी । उसपर भी इस आदमी की नीरवता, पुतलीकी भांति गतिविधि । मेरी कल्पना-शक्ति फिर शिथिल होने लगी, मैं कुछ न सोच-बोल चुप रहने ही में विश्राम अनुभव करने लगा । इसी समय हरिकृष्णने मेरा मनोरथ-भंग करते हुए कहा—

"आओ ! बन्दे मातरम् करें ।"

मेरे पास उसके लिये कंठ न था, अतः उन्होंने अकेलेही इस कामको किया। घोष भी बहुत धीमासा था। उसके कानमें पहुंचते ही उस व्यक्तिने शब्दके आनेकी दिशाकी ओर एकवार आँख उठाकर देखा । किन्तु फिर वही बेपरवाही, वही उपेक्षा, वही इच्छा-रहित

गतिविधि। कोई जल्दी और आश्चर्यका वहां लक्षण न था। हम लोगोंको देख लेनेपर भी वह चुपचाप खड़ा हमारी ओर ताकता रहा। मेरे मनमें अब फिर बेचैनीके लक्षण दिखलाई देने लगे। इसी समय यकायक हरिकृष्णकी आवाज आई—

"चलो नीचे चलें।"—

सचमुच मुझे यह ऐसा निरर्थक, सूखा व्यापार मालूम होता था, कि मैं हंस पड़ा। तब हमलोग नीचेकी ओर दौड़ पड़े, और तब तक न रुके, जब तक कि शर्करिला एवं बालुकामय भूमिसे होकर उसके आगे न पहुंच गये। जब हम समीप आये, तो मालूम हुआ कि वह एक वृद्ध आदमी है, साठसे ऊपरका। दाढ़ी मूंछ सभी श्वेत। बाल सन जैसे, चेहरे पर क्लान्तिकी रेखायें। किन्तु खास बात थी, उसकी दृष्टि हमारे वहां अकस्मात् जानेपर—हजारों कोश दूर, अनन्त जल-राशिके बीच, इस छोटेसे किन्तु रहस्यपूर्ण द्वीपके अत्यन्त रहस्यमय कोनेमें अपने देशके दो आदमियोंको इस प्रकार देखकर भी—उसमें आश्चर्य या जिज्ञासाका कहीं पता न था। नेत्र देखते थे, पलकें भी समय-समय पर उठती-पड़ती थीं, किन्तु मालूम होता था कि उनका सम्बन्ध मस्तिष्कसे नहीं था। इस व्यवहारको देखकर हरिकृष्ण भी एकबार चिन्तातुर हो उठे। उन्होंने साहस करके एक बार फिर कहा—

'बाबा।'

वृद्धने एकबार उन्हें शिरसे पैर तक नजर उठाकर देखा। किन्तु मुझे मालूम पड़ रहा था, कि उसकी नजरमें शंका, सन्देह तथा विरक्ति झलक रही है। उसने जब जबान भी खोली, तो भी

उसकी आवाज़से वही रहस्यमयता जाहिर हो रही थी, जो उसकी प्रत्येक चेष्टासे।

उसने कहा—"कैसे आप-आप आये ?"

हरिकृष्णने आगे बढ़कर कहा—"हम पहाड़ी परसे एक गड़हेमें गिर गये थे, उसमें नीचे पानी था, उससे तैरकर निकलने पर वर्षा-जलके रास्तेने हमें यहां पहुंचाया !"

वृद्धने एकवार आँखोंको हमारी ओरसे हटाकर उस तरफ डाला, जिधरसे हम आये थे। मालूम होता था. वह कुछ इसपर विचार कर रहा है। तब धीरेसे बोला—

"हाँ मैं जानता हूं उस पानीको। वह उस सुरंगके अन्त पर है। मैं कई वार वहां गया हूं, किन्तु वहाँ तो कोई गर्त नहीं मालूम होता था।"

हरि—"हमें तो तैर कर निकलना पड़ा, करीब दस मिनट।"

वृद्ध—"कुछ भी हो, आप भीगे हैं। कपड़ोंके बदलनेकी आवश्यकता है। मेरे भी बहुत साथी रहे हैं, किन्तु वह कभी उस सुरंगसे नहीं आये। मुझे यह बिल्कुल नहीं मालूम, कि वहां कोई रास्ता है।"

उसकी बातचीत उसकी चेष्टाओंकी भांति ही हमें हैरानमें डाल रही थी। हरिकृष्णने लाचार हो उक्ताकर कहा—

"हमारा जहाज बम्बईका 'इन्द्रायुध' है। वह रेतीली खाड़ीमें मरम्मत करनेके लिये खड़ा है। आपके जहाजका क्या नाम है।"

वृद्धने आस्ते और सीधे साधे तौरसे कहा—"इसे 'पुष्पक' कहते हैं।" आपको इसका नाम इसके माँगापर दिखाई देगा।"

हमने वहांसे एकवार फिर जहाजकी ओर देखा। सारी ही

वस्तुयें रहस्यमय और हैरानमें डालने वाली थीं। इसपर मृत्युकी वह स्तब्धता। बीचमें एक बड़ी झील जिसके चारों ओर ऊंची पहाड़ियोंकी दीवार। सभी जादूसा मालूम होता था।

हरिकृष्णने अन्यमनस्क हो कहा—"अच्छा, आपके साथ यहां कोई और नहीं है? क्या आप हमें कुछ सूखे वस्त्र और खाद्य-पदार्थ उधार दे सकते हैं?"

मालूम हुआ, वृद्धको इस समय कुछ अपने कर्त्तव्यका स्मरण आया, उसने कहा— 'वहां जहाज पर कपड़ोंका ढेर है। आप तो हमारे चीफ-इंजिनियरके कदके हैं, और यह महाशय, बिलकुल हमारे द्वितिय इञ्जिनियरके बराबर। उनका वासा निचले तल पर है, दसवाँ और ग्यारहवाँ कमरा। आप जाइये, वहां जो आपके लायक हो उसे पहिन आइये।"

हरि—"यह तो ठीक है, किन्तु वहां लोग देखेंगे, तो क्या कहेंगे? क्या, वहां वह लोग नहीं हैं?"

वृद्धने अपना शिर थामकर कहा—"नहीं, वहां कोई नहीं है। वह लोग द्वीपकी पड़ताल करनेके लिये गये हुए हैं। सभी लोग चले गये हैं, तभी तो आप यहां इतना सुनसान देख रहे हैं। यहांका भार हमें सौंपा गया है। लेकिन जो कुछ मैंने कहा है, वह वही है, जो कि मालिक अगर होते तो कहते। इसलिये कोई चिन्ता नहीं जाइये."

अब हमें कुछ भाव खुलता मालूम होने लगा। किन्तु, इतनी देर तक बूढ़ेने उसे क्यों छिपा रखा था? पहिले ही क्यों नहीं बता दिया। हरिकृष्णने मेरी ओर ताका, और मैंने भी उनकी ओर देख-कर मुस्कुरा दिया। मालूम हो गया। बूढ़ा होनेसे इसे यहां छोड़ दिया

गया है । और सारे लोग पड़तालमें गये हैं।"

हरि—"आप निश्चित हैं न, कि वह कुछ न बोलेंगे।"

"बिल्कुल" बूढ़ेने सीधेसे कहा। तब उसने हमें हाथसे लकड़ीके तख्तोंका बँधा एक घाट दिखाया. और कहा—"वह छोटी डेंगी है। शायद आप मेरे चलनेकी आवश्यकता न समझते होंगे! मैं जरा आज थका भी हूं, और मेरी जरूरत भी नहीं है। आप डेंगी लेकर जायं। वह बिल्कुल मजबूत है, आप पर्वा न करेंगे, जो चीज आवश्यक हो निस्संकोच ले लेंगे। मैं उसके लिये उत्तरदायी हूँ।'

अब अधिक कुछ पूछनेकी आवश्यकता न थी। हमलोग डेंगी पर जा बैठे। तब हरिकृष्णने पतवार ले जहाजकी ओर खेना शुरू किया, जो कि वहाँसे प्रायः ४० हाथकी दूरी पर होगा। हमारे डेंगी पर बैठते ही वृद्ध वहाँसे बंगलेकी ओर चल पड़ा। उसने एक वार भी पीछे फिर कर हमारी ओर नहीं देखा। उसने दर्वाजा खोला, और भीतर जा किवाड़ोंको बन्द कर लिया। सबसे बढ़कर तो हमें तब आश्चर्य हुआ, जब हमने वायु-प्रगति-शून्य उस शान्त स्थानमें भीतरसे ताला बन्द करनेकी खटक सुनी। हरिकृष्ण इसे सुनकर मुस्कुरा दिये, और बोले—

"निस्सन्देह, वह बड़ा अद्भुत आदमी है।" इसके बाद हम बूढ़ेको एक दम भूल गये।

जहाजकी बगलमें तीन हाथ लम्बी, कालीनसे खूब सुसज्जित चढ़नेकी सीढ़ी थी। यह श्रीगणेश था, जिसने जहाजके आन्तरिक स्वरूपका पूरा परिचय करा दिया। वृद्ध पुरुषकी अनुमतिका ध्यान करके, हमने ऊपर जाकर 'पुष्पक'के सभी

भागोंको देखना आरम्भ किया। यद्यपि हमने बन्द कमरोंको न खोला। खुले कमरोंमें भी बिना किसी वस्तुको हाथ लगाये ही देखा। सीढ़ीसे ही पता लग गया, कि 'पुष्पक' भाड़े वाला जहाज नहीं है। यह बहुत ही सुन्दर और सुदृढ़ करीब दो हजार टनका जहाज है। आराम और आवश्यकताकी सभी वस्तुयें मौजूद हैं। सारे ही कमरे बिजलीके पंखों और लम्पोंसे सुसज्जित हैं। स्नानागार और क्रीड़ागारके अतिरिक्त क्रीड़ाक्षेत्र, पुस्तकालय आदि सभीका खासा प्रबन्ध है। इसके अंग-अंगसे सुन्दरता और सुदृढ़ता टपकती है। नयासे नया भी उपयोगी आविष्कार काममें लाये बिना नहीं रखा गया है।

एक बड़े कमरेको, जो किसी सम्पन्न पुरुषका बैठका और पुस्तकालय मालूम होता था, देख कर हरिकृष्णने कहा—"यह, और भी कौतुकोत्पादक मालूम होता है। देखो, यहाँ हजारसे ऊपर पुस्तकें हैं। इन्हें एकबार देखना अच्छा होगा।"

मैंने दो चार जिल्दें उलटकर देखीं, किन्तु मुझे उनमें कोई मनोरञ्जक बात न मालूम हुई। सभी पुस्तकोंकी जिल्द एक प्रकारकी थीं, तथा उन पर लिखा था "भूगर्भशास्त्रीय समितिका कार्य-विवरण"। हरिकृष्णने कई जिल्दें "प्रश्न और सूचनाओं"की उठाईं। फिर कहा—

"बहुत पुरानी हैं। मैं समझता हूँ, इनका स्वामी कोई विज्ञानका प्रेमी है। लेकिन, यहाँ कुछ मासिक-पत्र भी हैं।"

मासिक-पत्रोंमेंसे उन्होंने दो तीनको लेकर देखा। वह तब दो तीन मिनट तक चुप रहे, किन्तु मैं पुस्तकालय देखने लगा

ही रहा। वह कुछ कहना ही चाहते थे, किन्तु न जाने क्यों रुक गये। और पत्रको वहीं रखकर दूसरे कमरेकी ओर उठ खड़े हुए।

यह कप्तानका कमरा मालूम होता था, और बहुत सुसज्जित था। हरिकृष्णने चारों ओर देखा। फिर एक बड़े मेजके पास गये, जिसके पीछे तीन छोटी-छोटी पुस्तकोंकी आलमारियाँ थीं। मेज ही से उन्होंने कुछ पुस्तकोंके शीर्षक पढ़े। उन्होंने चुपचाप कई एकोंको लेकर देखा। फिर सबसे निचली तहसे चमड़ेसे आच्छादित काली फुल्स्केप साइजकी एक पुस्तक उठाई। जिसके ऊपर सुनहरे अक्षरोंमें 'लॉग' (Log) लिखा हुआ था। मुझे ऐसे भी यह सारा व्यवहार मनोरंजक नहीं मालूम होता था, किन्तु हरिकृष्णका यह व्यवहार तो विल्कुल नापसन्द था। यद्यपि वर्तमान परिस्थितिमें ऐसी जिज्ञासा होनी स्वाभाविक है। किन्तु कप्तानकी 'लॉग' बुक उसकी प्राइवेट लेख-संचिका है। मैं हैरान था कि आज हरिकृष्णको क्या हो गया है ? उनका ऐसा व्यवहार तो मैंने कभी नहीं देखा था। वह क्यों किसीकी प्राइवेट लेख-संचिका देखने जा रहे हैं ?

हरिकृष्णने कुछ देख कर कहा—

"माधव, यह देखो।"

मैंने देखा। यह लिखे हुए पृष्ठोंमें अन्तिम था। मैं सबको न देख सकता था, किन्तु जो अंश वह देखनेके लिये कह रहे थे, वह यह था—

"पुष्पक" (कलकत्ता) की लॉग बुक।

स्वामी : महाराजा वीरेन्द्रकुमार, जगदीशपुर।

कप्तान : अर्जुन सिंह, रा. चौ.।

प्रथम अफसर : महेन्द्रनाथ सिंह।

यात्रा : ”

आगेकी पंक्तियाँ हरिकृष्णके हाथके नीचे थीं। तुरन्त उन्होंने इसके बाद पुस्तकको बन्दकर उसके स्थानपर रख दिया और कहा—

“अब हमें कुछ पता लगा। ‘पुष्पक’ वैज्ञानिक खोजमें निकला था। जगदीशपुरके महाराज इसके और पुस्तकालयके, जिसको हमने पहिले देखा है, मालिक हैं। बाकी हम उस वृद्धसे जानेंगे। माधव! हम लोग अपने यहाँ आनेका प्रयोजन ही भूल गये। अच्छा तो, पहिले निचले तल्लेके दसवें और ग्यारहवें कमरेमें चलना चाहिये। फिर उन चीनीके स्नानीय चहवच्चोंमें एक साङ्गोपाङ्ग स्नान। तुम तो महाराजके स्नान-घरमें जाओ, और मैं कप्तानके। है न?”

मैं—“हाँ! मेरी तबियत भी यही करती रही है।”

हमलोग, अब इंजीनियरके कमरेमें गये। सब चीजें बूढ़ेके कहनेके अनुसार ही मिलीं। मैं, वहाँसे एक ऊनी कमीज और एक जोड़ा ऊनी मोजा, एक सर्जका कोट और पतलून, एक टोपी और गुलूबन्द लेकर स्नानागारकी ओर गया। वहाँ साबुन, कंघी, शीशा, तेल, अस्तुरा, तौलिया सब तय्यार पाया। खूब मल मल कर, दिल खोलकर स्नान हुआ। मेरा स्नान हरिकृष्णसे पहिले समाप्त हो गया था, अतः मैं वरांडेमें आ उनके इन्तिजारमें बैठ गया। थोड़ी देरमें वह भी आ गये। मैंने अपने आपको एक नया आदमी पाया। हरिकृष्णकी मुखाकृति गम्भीर देखकर मैंने पूछा—

“क्यों, क्या है?”

हरिकृष्णने मुस्कराकर कहा—"कुछ नहीं, अब हमें चल चाहिये। बहुत बातें दर्याफ्त करनी हैं। यह अपने गीले कपड़े लेते चलने चाहियें, वहाँ सुखा लेंगे।"

इस समय पहाड़ियोंके ऊपर फिर गर्द या वही कुहरा एकत्रित चला था। वायुमंडल इतना स्तब्ध और नीरव था, कि धीमासा शब्द बहुत जोरका मालूम होता था। हम लोग जहाज, सीढ़ो औ कमरोंकी बात करते हुए अपनी नाव पर आ बैठे। बात करते हु भी मैंने देखा कि हरिकृष्णका मन किसी गम्भीर विचारमें मग्न है जिससे कि वह बात करते समय भी अलग नहीं होते थे। वह बोले–

"यह बड़ी ऊँची पहाड़ी है। वह बीचका धनुषाकार खोल दो मील दूरसे देखने पर विल्कुल नहीं मालूम हो सकेगा। मालू होता है, जब महाराजा पड़तालके लिये निकले थे, तो उन्हें यह रास्ता दीख पड़ा। और इसीसे वह सदल-वल 'पुष्पक' को यहाँ लाये। अब इस समय तो लौटकर 'इन्द्रायुध'के पास चल असम्भव है। रात सिरपर है। लेकिन कल हमें देर न करनी होगी। जितना जल्दी हो सके उतना, यहाँ से रवाना हो जाना होगा। मैं समझता हूँ, ऐसा करनेपर हम अपने सथियोंको ठीक उत्सुकता समय ही पा लेंगे। हाँ! अभी बूढ़ेसे भी बहुतसी बातें जिज्ञास्य हैं।"

अब हमारी डेंगी चलने लगी थी। मैंने कहा—

"हाँ! मैंने उस दिन आपसे नहीं कहा था, कि अब समुद्रोंके वह आश्चर्यजनक सफर नहीं हैं। न वह यकबयक तकदीरका खुलना ही, जो सन्दवादके वक्तमें था। अब तो चारों ओर कड़ीसे

कड़ी मिहनतकी आवश्यकता है। लेकिन तो भी हमारी यह यात्रा तो चिरस्मरणीय रहेगी"

हरि—"चिरस्मरणीय ही नहीं अद्भुत भी। तुम्हें याद है, माधव, वह जिल्द-बंधी पुस्तकें, महाराजाके पुस्तकालयमें ?"

मैं—"हाँ! वह भूगर्भशास्त्रीय मासिक पत्र न ?"

हरि—"हाँ! वही। मुझे मालूम होता है, महाराजा अच्छे विद्वान्. तथा भूगर्भशास्त्रके बड़े प्रेमी रहे हैं। लेकिन अमेरिकन जहाज भी तो इस द्वीपमें भूगर्भशास्त्रीय अन्वेषणके ही लिये 'रेतीली खाड़ी' में ठैरा हुआ है, और वह प्रोफेसर भी एक प्रसिद्ध भूगर्भशास्त्री हैं।"

मैं—"यह तो ठीक है, लेकिन इससे क्या ?"

हरि—"अभी हमें प्रतीक्षा करनी चाहिये, मैं कुछ भी निश्चित नहीं कह सकता। देखें क्या बात है।"

पञ्चम अध्याय

भगेलूकी राम-कहानी ।

वह छोटा बंगला सारा लकड़ी हीका बना हुआ था। पीछे पता लगा, कि जब महाराजने यहाँ आकर देखा, कि यहाँ कई महीने मुकाम करनेकी आवश्यकता होगी, तो उन्हें मकान बनानेकी सभी सामग्री लानेके लिये "मौन्ते-वायदो" (उरुगाय, दक्षिणअमेरिका) की यात्रा करनी पड़ी। वहाँसे सारा ही सामान यहाँ लाये। और उससे उन्होंने वह सुन्दर छोटासा लकड़ीका बंगला बनवाया।

हमलोगोंने दर्वाजे पर जा थपकी दी। किन्तु भीतरसे कोई आवाज न आई। इस पर फिर दूसरी थपकी दी, उसका परिणाम वही रहा। तब हरिकृष्णने कुंडा जोरसे खटखटाकर धक्का दिया। अबकी द्वारके तालेके खुलनेकी खटक सुनाई पड़ी।

दर्वाजा खुला। वृद्धकी दृष्टि वैसी ही शून्य थी। अबके उसके शिरपर टोपी न थी। सनकेसे बाल सिरपर बिखरे हुए थे। उसके चेहरेपर इस समय बुढापेका निशान अधिकतासे दिखाई पड़ा। हरिकृष्ण प्रथमहीसे उसके साथ बड़ी सहानुभूति दिखाते थे। उन्होंने कृतज्ञता प्रदर्शित करते हुए कहा—

"लो, हमलोग लौट आये। हमने आपसे बहुतसी चीजें उधार ली हैं, और आपके जहाजको भी देख लिया है। 'पुष्पक' सचमुच पुष्पक ही है।"

वृद्धने हमारे भीतर आनेके लिये रास्ता छोड़ दिया, फिर दर्वाजेको भेड़ दिया। तब उसी तरह चुपचाप, हमें लेते हुए एक कमरेमेंसे गया। यह १४ वर्गफीटका होगा। इसमें एक जंगला था, जिससे जहाज और खाड़ी दिखाई देती थी। इसमें एक अच्छा आरामदेह पलंग, एक छोटीसी मेज, कई एक कुर्सियाँ और गर्म रखनेके लिये एक सुन्दर कोयलेवाला चूल्हा था, जिसका धुंआकस बाहरकी ओर था। हमारे भीतर आनेपर उसने मेज पर लम्प जलाकर रख दिया। लम्प बहुत सुन्दर तथा अच्छा प्रकाश दे रहा था। अब हमें भूख खूब लगी हुई थी, किन्तु हमने देखा कि, उसने एक आदमी हीके लायक भोजन तय्यार किया है।

हरिकृष्णने पूछा—"मैं समझता हूँ, आपको हमलोगोंका स्मरण नहीं रहा"

वृद्ध—"नहीं, ऐसा नहीं। किन्तु मुझे निश्चय नहीं था, कि आप वास्तविक थे। मेरे पास न जाने कितने मुलाकाती आते हैं, किन्तु कोई उनमेंसे वास्तविक नहीं होता। वही बात मैंने आपलोगोंके बारे में भी समझी।"

हरि—"कैसे आप समझते हैं, कि वह वास्तविक नहीं होते?"

हरिकृष्णने बिना किसी प्रकारका आश्चर्य प्रकट करते हुए यह पूछा था। किन्तु उसके बादका दृश्य बड़ा ही करुणाजनक था। वृद्धने पहिले तो कई मिनट आँख उठाकर हमारे मुखोंकी ओर देखा। फिर समीप आकर, अपने हाथको मेरे कन्धे पर रखा, मेरी आँखोंकी ओर खूब ध्यानसे देखा, और मेरे ललाटको उठाकर

देखा। अब मैंने उसके दिलमें विश्वास आते समझा। उसने हम-लोगोंसे कहा—

"अच्छा, तब तक इसे आप लोग खायें. मैं अभी आध घण्टेमें भोजन तय्यार कर देता हूँ।"

इस पर हमलोगोंने कहा, कोई हर्ज नहीं। एक ही साथ खायेंगे। अब वृद्ध रसोई घरमें गया, जो बंगलेके एक कोनेमें था। हमलोगोंने भी चुपचाप बैठनेकी अपेक्षा बूढ़ेके काममें सहायता देना अच्छा समझा। हमारे वैसा करने पर वृद्धने कोई आपत्ति न की। वहाँ मिट्टीके तेल वाले कई चूल्हे तथा 'कूकर' थे। तवा, कढ़ाई, करछी, चम्मच सभी मँजा मँजाया रक्खा था। वृद्धने आलमारीसे कई टीन बाहर किये, किसीमें गोभी. किसीमें शलगम, किसीमें बैंगन आदिका शुष्का (झूरी) था। नमक, मसाला, तेल, सुरक्षित मक्खन—सभी डिब्बोंमें मौजूद था। उसने एक थैलीसे चावल निकाले। सभी चीजें बर्त्तनोंमें नीचे ऊपर रख कर 'कूकर'में बैठा दी गईं। आग बड़ी तेज़ थी, रसोई तय्यार होनेमें मैं समझता हूँ, शायद २० ही मिनट लगे होंगे। अब भगेलूने तीन थालियों और कई कटोरियोंमें दाल, भात, तरकारी सभी चीजें परोसीं। एक जमा हुआ दूधका टीन खोल कर, थोड़ा गर्मागर्म दूध भी तय्यार कर रख दिया। शीशोंमेंसे दो तीन तरहके अँचार भी निकाल कर सामने रखे।

वृद्धने कहा—"मालिकिनने चलते वक्त घरहीसे बहुतसा अँचार, मुरब्बा, अमावट सूखी तरकारियाँ रख दी थीं। आप सब खूब खायें, कोई हर्ज नहीं। सब चीजोंसे भंडार भरपूर है।

तीनों आदमी आसन पर बैठ गये। उस भोजन और उसके आनन्दका क्या पूछना है। जिह्वामें उसके वर्णन और कलममें उसके लिखनेकी शक्ति नहीं है। हर एक वस्तुमें अमृतका स्वाद आ रहा था। धीरे धीरे भोजन समाप्त हुआ। अब हमलोग थाली वाली धो-धा अपने कमरेमें आये। हरिकृष्ण वृद्धकी हर एक बातको बड़े ध्यानसे देख-सुन रहे थे। उन्होंने बड़ी नर्मीसे कहा—

"कैसे मुलाकाती आपके पास आते हैं? ज्ञात होता है वह प्रायः आया ही करते हैं।"

वृद्ध—"हाँ। रोज रोज। पुराने मित्र, जहाजके साथी, जितने भी हमारी सभी यात्राओंमें मिले थे, सभी आते हैं; किन्तु उनमेंसे कोई सचमुचका नहीं। सब भ्रमात्मक, अवास्तविक। प्रायः नित्य ही मालिक घाट पर आते हैं, जहाँसे कि वह गये थे। उनको बगलमें कप्तान, इंजीनियर सभी जहाजी साथी भी रहते हैं। एक दिन तो मुझे वह यहाँ तक वास्तविक मालूम पड़े, कि, मैं घाट पर दौड़ गया। लेकिन जब मैं हाथ छूने लगा, तो देखा कि वहाँ कोई नहीं।"

लैम्पके प्रकाशमें मैंने देखा, कि उस समय उन शून्य-दृष्टियोंमें कुछ आश्चर्य और करुणाकी झलक थी। उसकी करुणापूर्ण दृष्टि जो मेरे चेहरे पर उस समय थी, मेरे हृदयको डाँवाडोल कर रही थी। उसने अपनी बात जारी रक्खी—

"एक दिन 'माया' भी तैरती हुई ठीक सूर्यास्तके समय. जब थोड़ा थोड़ा अन्धेरा होने लगा था, ठीक घाटके सामने आ लगी। आप जानते हैं, पहिले उसीपर मैं और कप्तान महेन्द्रनाथ रहते थे। एक

बार हम लोग दक्षिणी अफ्रीकाके 'दर्बन' शहरमें मुसाफिरोंको लेकर भारत लौटनेके लिये तय्यार थे, उसी समय वहाँ नई सोनेकी खानकी खबर उड़ी। थोड़ी ही देरमें सारे मुसाफिर जहाज खाली कर उधर दौड़ गये। हमें ६ महीने खाड़ीमें चुपचाप पड़ा रहना पड़ा। 'माया' बिल्कुल 'पुष्पक'के पास ही खड़ी हुई। उसकी छत पर कप्तान महेन्द्र थे, वैसे ही लम्बे चौड़े, और मूंछें भी वैसी ही बड़ी। उन्होंने पुकारकर कहा—'भगेलू। तुम यहाँ हो? हम तुम्हें लेने आये हैं। देखो, बड़े तड़के ही तुम चले आना, हम तुम्हें घर ले चलेंगे'। मैंने कहा—"नहीं कप्तान महेन्द्रनाथ! मैं नहीं आऊँगा। देखते नहीं हो, मालिक मेरे ऊपर सब छोड़ कर सैर करने गये हैं। बिना उनके आये मैं यहाँसे कैसे टल सकता हूँ। यह तुम्हारे लिये ठीक नहीं, कि तुम मुझे उन्हें छोड़कर भाग चलने की सलाह दो।" तब मैंने कप्तान महेन्द्रको ठठाकर हँसते सुना। उन्होंने कहा—'अरे! यह वही बूढ़ा भगेलू है। यह मालिकके पीछे सत्ती होगा। यह कभी नहीं टससे मस होगा।' फिर जब मैंने सवेरे उठकर देखा, तो 'माया' वहाँ नहीं थी। लेकिन बाबू! क्या 'माया' सचमुच आई थी। नहीं, वह सिर्फ धोखा था।"

इसके बाद थोड़ी देर तक बिल्कुल सन्नाटा रहा। तब हरिकृष्णने कहा—"अच्छा, तो कृपा करके हमसे अपने मालिककी बात कहो। वह कितने दिनोंसे बाहर गये हुए हैं?"

भगेलूका, मालूम होता था, ख्याल कहीं दूसरी जगह था। उसने थोड़ी देरमें धीरेसे कहा—

"एक महीना हुआ होगा, या शायद कुछ दिन अधिक। जानते

हैं, मालिक, पहिले प्रथम अफसर, चीफ इंजीनियर और दस आदमियोंको लेकर गये। वह एक सप्ताह बाहर ही रहे, और जब लौटकर नहीं आये, तो कप्तान अर्जुन उत्सुक होने लगे। उन्होंने फिर दूसरी टोली भेजी कि देखें क्या हुआ। लेकिन वह भी न लौटी। तब आठ दस दिन बाद, कप्तान स्वयं दूसरी टोलीके साथ गये। वह रामकुमार, रामप्रसाद और मुझको यहाँ छोड़ गये।"

हरि—"और वह दोनों कहाँ हैं ?"

इस पर बूढ़ेकी शून्य-दृष्टिमें एक बार क्रोधकी आभा दिखलाई पड़ी, उसने काँपते स्वरसे कहा—"जिसके वह योग्य थे, वैसा ही हुआ। थोड़े ही दिनोंके बाद वह उकताने लगे। वह यहाँसे भाग जानेकी सलाह करने लगे। मुझे भी कहा। मैंने कहा 'भगेलू जब तक मालिक न आवेगें तब तक क्या यहाँसे टकसेंगे ? मालिकका नून खाकर हराम करना है थोड़ा ? मेरी सात पुश्त मालिक हीकी पाली पोसी है। नहीं मानते हो, तो जाओ, इसकी सिद्धि देखोगे।' इसपर वह दोनों बड़ी डोंगी और बहुतसा खाने पीनेका सामान लेकर, उसी रास्तेसे गये, जिससे हम लोग यहाँ आये थे। लेकिन दूसरे दिन नावका एक टुकड़ा रामप्रसादको यहाँ लाया, और साथ ही ज्वारने रामकुमारको भी यहीं पहुँचा दिया। मेरे पास इतनी लकड़ी कहाँ थी, कि उन्हें जलाता। कई दिन तक दोनों यहीं तैरते रहे। फिर एक बार भाटा उन्हें यहाँसे घसीट ले गया। मैंने कहा यही दिखानेके लिये आये थे, कि भगेलू! देखो जो नमककी शरियत नहीं देता, उसको क्या दशा होती है ?"

हरि—"तबसे, फिर तुम अकेले ही हो ?"

भगेलू—"हाँ। लेकिन जहाजमें सब चीज है, आपने तो देखा है। उस सबको देख भाल मेरे ही ऊपर हैं। जहाज और, इस बंगला दोनोंका भार मेरे ऊपर है। मुझे सब चीजोंको ठीक और स्वच्छ रखना है। जानते हैं, जो मालिक आगये तो गंदा देख कर मुझे क्या कहैंगे। मालिक तो बड़े अच्छे हैं, मुंहसे कुछ नहीं बोलेंगे, किन्तु मनमें तो उनके होगा न, कि भगेलू मुंह पर 'हूँ' 'हूँ' करता है। चार दिन भी हमें बाहर गये नहीं हुआ कि वह अपना काम ही भूल गया। इसोलिये चुपचाप बैठनेके लिये मुझे फुर्सत नहीं है। सबको झाड़ पोंछ तय्यार रखना होता है।"

हमलोगोंने जहाज देखा था। सभी चोजें कितनी साफ थीं। सचमुच यह एक आदमीके करनेसे अधिक काम था। बिचारा बूढ़ा मालूम होता है, सवेरेसे शामतक बराबर इन्हीं कामोंमे लगा रहता है।

हरि—"तुमने कहा कि हम लोग उधर उस पहाड़की ओरसे इस खाड़ीमें आये। क्या और भी किसी दूसरे रास्तेका पता मिला है? किस रास्तेसे महाराजा यहाँसे गये? तुमने उनकी टोलीका तबसे कुछ पता लगाया?"

भगेलू—"हाँ, बाबू! महाराजा द्वीपको पार करना चाहते थे। वह समझते थे कि, उत्तर ओरसे कोई आगे जानेका मार्ग होगा। यह रास्ता बड़ा कठिन है। बल्कि कोई रास्ता नहीं है। ऐसे ही ऊभड़ खाभड़ चट्टानें हैं। उन परसे जाना बड़ा कठिन है। मैं दो दिन खोजमें गया। पिछले ही सप्ताह तो। और अन्तमें उत्तरी पहाड़ीकी जड़में पहुँच गया। फिर उसके बाद आगे जाना बन्द था।

सिर्फ वहाँ पर एक गुफा थी । किन्तु मेरे पास पर्याप्त मोमबत्ती नहीं थी कि उसके भीतर जाकर देखता, इसलिये लौट आया । मैं थोड़ी और प्रतीक्षा करके फिर जानेका विचार रखता हूँ । लेकिन यह टापू ऐसी गुफाओं और खड्डोंसे भरा पड़ा है ।”

हरि- “हाँ ऐसा ही है ।”

भगेलू—“हाँ बाबू ! ठीक कहते हैं । और मुझे खुली जगह, खुली हवा खुला समुद्र अच्छा लगता है ।”

थोड़ी देर लोग चुप रहे । उस समय हमारे मानस चक्षुओंके सन्मुख तो था वह भयानक महागर्त, और भगेलूकी वह अन्धेरी गुफा । किन्तु अभी हमें और दर्याफ्त करना था । हरिकृष्णने पूछा—

“काहे महाराजा इस ऊजड़ टापूमें आये ? इतनी बड़ी कठिनाई उठाकर इतने दूर आनेका उनका अभिप्राय क्या था ?”

भगेलू—“कंकड़, पत्थर, देखनेके लिये,—इसे न जाने वह क्या कहते बाबू ! नाम ही नहीं याद आता ।”

हरि—“भूगर्भशास्त्र” ।

भगेलू—“हाँ ! यही यही । इसी खिलवाड़के वास्ते महाराज पृथ्वीभर मारे मारे फिरते रहे । घर-वार, लड़का-बाला, सब सुख छोड़, इसीका तो मालिकको न जाने क्या नशा हो गया था । इसीके लिये हम सबको लेकर देखो न, दक्षिणी अमेरिकाके पास, पृथ्वीके छोर पर चले आये । आओ न देखो, यह दूसरे कमरेमें ।”

भगेलू हाथमें लैम्प लेकर आगे आगे चल पड़ा । यह कमरा भी उतना ही लम्बा चौड़ा था । बीचमें एक चारपाई एक मेज और कई कुर्सियां उसी भाँति इसमें भी थीं । किन्तु विशेषता थी यह, कि

यहाँ दीवारके पास एक आलमारीसी खड़ी थी, जिसमें बहुतसे ड्रायर (खाने) लगे हुये थे। भगेलूने लैम्प मेज पर रख दी और एक ड्रायरको खींचकर कहा—"देखिये न, कितने छोटे छोटे पत्थर यहां हमने जमा किये हैं। सैकड़ों तो यहाँ मौजूद हैं, और निस्सन्देह अबकी मालिक लौटेंगे, तो और बहुतसा लावेगें। मालिक सब चीजोंको बड़े कायदासे रखा जाना पसन्द करते हैं। यह नहीं कि, जहाँ चाहो वहाँ उनका ढेर करदो।" पीछे फिरकर चारपाईकी ओर संकेत करके "और यह मेरा बिछौना है। सब नमूनोंके पास मालिकने मुझे सोनेको कहा है। वह दूसरी पलंग. उस कमरेवाली महाराजकी है। आप लोग उस पर सोवें। कोई चिन्ता न करें, मुझे निश्चय है, कि वह इसे बुरा न मानेंगे। मैं जिम्मेवार हूँ।"

इसके बाद उसने लैम्प उठा ली। और हमलोग साथ साथ दूसरे कमरेमें आये। बूढ़ेने फिर कहा—

"मैं भी जगदीशपुर ही का रहने वाला हूँ। हमारा खान्दान बहुत दिनोंसे, महाराजाके पुरखोंके समय ही से, सेवा करता चला आ रहा है। मेरे पिता बड़े सरकारके खास खवास थे। मैं भी महाराजके साथ बराबर उनकी सेवा में रहा हूँ। एक बार जवानीमें मुझे सनक सवार हो गई थी। तब मैं घरसे बिना पूछे-पाछेही भाग गया। मैं कलकत्तामें जा जहाज पर नाविकका काम करने लगा। उसके बाद कई वर्षों तक मैंने आष्ट्रेलिया, यूरोप, चीन, जापान, अमेरिका, अफ्रीकाके भिन्न भिन्न भागोंमें कई बार यात्रा की। पीछे जब मैं एक बार घर गया तो पिताने महाराजसे मेरी चर्चा की। महाराज, हां यही हमारे महाराज, तब महाराज हो गये थे। इन्होंने

बुलाकर कहा—'भगेलू! तुम हमको छोड़ कर बाहर ही बाहर कब तक रहोगे? देखो, तुम्हारे पुरुषोंका हमारा आजका सम्बन्ध नहीं है। अब तक जो हुआ सो हुआ। अब तुम हमारे पास रहो। बल्कि तुमने एक प्रकारसे इतने दिनों तक बाहर रह कर अच्छा ही किया। तुम अब एक अच्छे नाविक हो गये। हमैं भी बहुत सुमुद्रयात्रा करनी है।' बस तभीसे मैं बराबर मालिक हीके साथ हूं। आप समझ सकते हैं, कि क्यों मैं रामकुमार और रामप्रसादके कहनेमें नहीं आया।"

जिस समय भगेलू यह बातें कर रहा था, मैंने हरिकृष्णके चेहरे पर देखा, कि उसमें कितनी, वृद्धके अज्ञात शोकप्रवाहके साथ समवेदना है? वह छोटेसे कमरे और उसके लकड़ीके असबाबको कितनी हसरत भरी निगाहसे देख रहे थे? वृद्धने अन्तमें इस प्रकार अपनी कहानीका उपसंहार किया।

"मैं बराबर जरा देरसे सोता हूँ। दिन भर तो मैं अपने मालिकके काममें रहता हूँ। रातके समय भोजनके बाद थोड़ा रामायण वाँचता हूँ। मैं समझता हूँ आपलोगोंको सोनेमें देर होती होगी।"

हरि—"नहीं, अभी कोई जल्दी नहीं। लाओ हम भी रामायण सुनेंगे।"

तब वृद्धने रामायणकी पोथी सामने रखकर कहा—"देखिये, यह हमारी मालिकिनके हाथकी पोथी है। जब हमने पिछली बार यह यात्रा की, तभी महारानीने मेरे लिये यह पुस्तक मंगवा कर दी। मैंने कहा था—मालकिन, मैं रोज इसका पाठ करूंगा।"

वृद्धने बड़े करुणा भरे स्वरसे, भोजपुरी लय में तो दोहोंका पाठ किया। उस निस्तब्ध स्थान, उस महानिशाके नीरवतामें वह मुझे कैसा मालूम होता था, यह मेरा मस्तिष्क अब भी उत्तर देने योग्य नहीं हुआ है। पाठ समाप्त होने पर वृद्धने कहा—

"आपके पास लैम्प है, किन्तु, इसे व्यर्थ न जलने दीजियेगा जब काम हो जाय उसी वक्त इसे बुझा दीजियेगा। यहाँ तेल मोमबत्ती कम नहीं है। किन्तु काहेको उनका व्यर्थ व्यय किया जाय।

इसके बाद भगेलू अपने कमरेमें चला गया। तब हरिकृष्णने धीमे स्वरसे मुझसे कहा—"क्या तुमने कुछ समझा माधव ?"

मैं - "मैंने तो गाड़ीका गाड़ी समझा है, किन्तु उसको यहाँ कहनेकी क्या अवश्यकता है ? जो कुछ भी हो बुड्ढा बड़ा भला आदमी है।"

हरि—"इसमें क्या शक है ? और इससे भी बढ़कर अच्छी बात यह है, कि इसने सभी बातें भुला रक्खी हैं।"

मैं —"क्या ? भुला रक्खी हैं ?"

हरि—"हाँ। इस वक्त वह हम लोगोंको भी भूल गया होगा। उसे सवेरे यह स्मृति भी नहीं रहेगी कि, हम लोग वास्तवमें रातको यहाँ रहे थे। याद करो रामकुमार और रामप्रसादकी बात। क्या तुम समझते हो कि, एक दो सप्ताहके बाद उकताकर वह यहाँसे भागने लगे, जैसा कि बूढ़ा कहता है ? हर्गिज नहीं। वह कई दिन कई मास नहीं किन्तु सम्भवतः कई वर्ष यहाँ प्रतीक्षा करते रहे जब वह सब तरहसे निराश हो गये। जब उनकी भी सोचने

शक्ति क्षीण होने लगी ; तब उन्होंने इस भूल-भुलैयाँसे बचनेका प्रयत्न किया। इसका जो परिणाम हुआ वह तुमने सुना ही। कभी मत आशा करो कि महाराजाके नौकर, जो सम्भवतः अत्यन्त विश्वास पात्र थे, हजारों कोस दूर समुद्रके अन्दर एक भयानक खाड़ीसे एक डेंगेके सहारे, अकेले दो आदमी, इतने बड़े साहसके लिये सिर्फ दो सप्ताहके इस निर्जन-प्रवाससे ही तैयार हुये होंगे। भगेलू समझता है यह सभी बातें हफ्ते दो हफ्तेकी हैं। उसमें अब समयकी गतिका ज्ञान ही नहीं है। वह जानता है, दिन आया, अब रात आई. अब फिर...। किन्तु कितने दिन कितनी रात इसका उसे कुछ हिसाब नहीं। वह जीता है, क्यों जीता है, इसका भी उसे पता नहीं। वह घटनाओंको जानता है, किन्तु उनके घटनेके समयका उसे पता नहीं। उसके लिये सारी घटनायें आसन्न भूत,—बल्कि कलहीकी मालूम पड़ती हैं। समझे ?"

इसे सुनते ही मेरे वदनमें बिजलीसी दौड़ गई। मेरे दिमाग पर मालूम हुआ, मानो यक-बयक बज्र गिर पड़ा। मैं अभी आजकी इन घटनाओंको तलपरसे देखता था। मैंने उनकी गहराई, उनके अन्तर्-रहस्यका कुछ भी न पता पाया था, न उसके लिये कोई प्रयत्न ही किया था। हरिकृष्णके शब्द साफ थे। मैं यह भी जानता था, कि वह बड़े परिश्रमके परिणाम हैं। उन्होंने अपने अभिप्रायको और भी व्यक्त करते हुए कहा --

"मैंने जहाज पर यह बात इसलिये नहीं कही कि, इसका जरा और पता लगालें। लेकिन अब जो मैंने कहा उसे तुम शुद्ध सत्य समझो। तुमने देखा नहीं, वह पुस्तकें, वह पत्रिकायें कितनी पुरानी

थीं ? मैंने कप्तानके लॉगबुककी अन्तिम लेख-तिथि तुमको नहीं दिखलाई थी । जानते हो, वह थी ५ कर्क सम्वत् १९६१ । और आज यह है ४ कर्क १६८१ । इसलिये, समझमें आया, अगेल्ल इस निर्जन निष्ठुर द्वीपमें, इन रूखी पहाड़ियोंकी चहारदीवारीके अन्दर इस घर इस जहाज और अनगिनत भूत-प्रेतोंके साथ २० वर्षके ऊपर से रह रहा है ।"

—०:*:०—

षष्ठ अध्याय

जेलका भीतरी।

हरि—"माधव ! जागे हो ?"

मैं—"हाँ" ।

हरि—"तो हमलोग कुछ बात चीत करें। बहुत सोचना, मैं समझता हूँ , लाभदायक न हो, हानिकारक हो सकता है ।'

मैं सूर्योदयसे एक घंटा या उससे अधिक ही पहिलेसे जाग गया था। दिमाग मेरा विचार-तरंगोंमें ऊब-डूब हो रहा था। वही दशा हरिकृष्णकी भी थी, किन्तु मैं उनकी निद्रा भंग होनेके डरसे बोलना उचित नहीं समता था। हमलोग युवक थे। एक बार गहरी नींद आजाने हीसे सारी थकावट दूर होजानेवाली है ? हरिकृष्णने आस्ते आस्ते बात करना आरम्भ किया जिसमें कि, बूढ़ेकी निद्रामें विघ्न न हो। उन्होंने कहा—"यह कैसा वीभत्स स्वप्नसा प्रतीत होता है। मैं जितनाही सोचता हूँ, उतनीही तबियत घबराने और दिल सिहरने लगता है । २० वर्ष इस प्रकारके स्थानमें ! अवश्य, ऐसी अवस्थामें काल-ज्ञानका न होना ही अहोभाग्य है।"

मैं—"हाँ ! वह वाञ्छनीय है।"

हरि—"ठीक ऐसा ही। एक ओर यह काल-ज्ञानका अभाव, और दूसरी ओर कर्त्तव्य, विश्वास और भक्ति। शायद यह कालज्ञानके विस्मरण होनेसे पहिलेही आगये थे। या यों कहो इसीमें उसने और सब

कुछ भुला दिया। उसने इसी मार्ग पर चलते चलते मितव्ययिता भी सीख ली। यद्यपि जहाजमें सामान भरा है, तो भी एक आदमी इतने दिनोंमें बहुत अधिक खा सकता है। २० वर्ष बहुत होता है।

मुझे हरिकी बातोंकी सत्यता बहुत जल्द मालूम होने लगी। कोयला तेल आदि सभी पदार्थ यद्यपि अब भी जहाज पर थे, किन्तु अन्दाज करने पर हमें मालूम हुआ, कि वह सब हमारे तीनों आदमियोंके लिये तो ६ मासके लिये ही पर्याप्त हो सकेंगे। भगेलूने सर्वथा तपस्वीका जीवन व्यतीत किया है। यदि वह ही अकेला रहता, तो इसमें शक नहीं कि इस हिसाबसे अधिक दिनतक चला ले जाता। आखिर कितना करुणापूर्ण, कितना दिलको हिलादेनेवाला दृश्य! दिन प्रति दिन उस परिमित भाण्डारका व्यय होते होते क्षीण होता जाना!

हरि—"किन्तु, इतना ही नहीं। रात सोनेके वक्त सोचा था कि जल्दी जहाँतक हो सके, हम 'इन्द्रायुध' को पकड़ें। किन्तु अब वह बात मुझे बहुत दूरकी मालूम होती है। अब मालूम होता है, हमारे और इन्द्रायुधके बीचका फासिला न जाने कितने वर्षोंका है। बात अब सरल नहीं है।"

मैं—"नहीं है, हाँ।"

हरि—"तो क्या करना चाहिये? जिस मार्गसे हम यहां पहुंचे उससे तो लौटा जाया नहीं जा सकता है। अब बाकी एकही मार्ग है, जिससे 'पुष्पक' यहाँ आया है। किन्तु यहाँ एक ही छोटी सी डेंगी है-सो भी हमारी नहीं है। यह बूढ़े भगेलूकी है, जिससे वह जहाज और बंगलेके बीच यातायात करता है। उसे हम लेजा

नहीं सकते। ले जाने पर भी वह प्रयत्न, मैं समझता हूँ मूर्खतापूर्ण ही होगा। जब इससे कहीं बड़ी नाव द्वारा भी रामप्रसाद और रामकुमार नहीं पारकर सके तो, इस छोटी डेंगीकी क्या बिसात है? यदि उस तंग दर्रेमें तीक्ष्ण तरंग हुई, तो फिर, विद्युत्-संचालित बोट ही जा सकता है।" मेरे दिमागमें इसके हलकी कोई सूरत नहीं समाती थी। मैं उनकी बातोंमें बिल्कुल सचाई पाता था। मेरा कुछ भी बोलनेका उत्साह नहीं होता था।

हरि—"कप्तान प्रभुनाथ, विक्रमसे सुनकर अवश्य हमारी तलाश करेंगे। किन्तु उससे लाभ? मानलो थोड़ी देरके लिये, कि एक आदमी किसी तरह उस महागर्तके भीतर लटकाया गया। तो भी वहाँ क्या हाथ आवेगा? अन्धकार, और घोर अन्धकार या अगाध अदृश्य जल। इससे तो उन्हें जल्द निश्चय ही हो जायगा कि, हमारा काम तमाम होगया, अब वेशी खोजनेकी अवश्यकता नहीं। और यह ख्याल करना कि किसी प्रकार अपनी यहाँकी उपस्थिति की सूचना उन्हें दी जाय, सो भी असम्भव है। यदि बन्दूक भी छोड़ी जाय तो भी, आवाज़ इन ऊँची पहाड़ियोंके घेरेसे बाहर जा ही कैसे सकती है? इसके बाद वह लोग भी तो इस प्रकारके एक घेरेमें हैं। रहा लाँघकर पार जाना, सो तो शायद बकरियाँ भी नहीं कर सकतीं।"

मैं—"लेकिन क्या करना होगा। देर करनेसे 'इन्द्रायुध' निराश हो चला जायगा। और जानेके लिये यह अड़चनें। तो भी चुपचाप हाथ पैर मारना छोड़ कर अपनेको इस क्रूर अवस्थाके हाथमें समर्पण कर देना भी तो उचित नहीं प्रतीत होता। क्या, यह

अच्छा नहीं होगा, कि हम ज़रा आसपास घूमकर देखें !"

हरि—"मैं भी यही ठीक समझता हूँ। किन्तु, हमें बूढ़ेके दिलमें किसी प्रकारकी बेकली न पैदा होने देना होगा।"

प्रातःकालके उजालेमें, भगेलूको विना आहट देते, हमलोग आस्तेसे अपने विछोनेसे उठकर, घरसे बाहर चले आये, अब हमने आसपासकी भूमिकी देखभाल शुरूकी। अभी सूर्यका प्रकाश हमारे पास तक नहीं पहुँच सका था, किन्तु पहाड़ियों पर मालूम होता था; चारों ओर वही नीरवता अब भी अविच्छिन्न व्याप रही है। चारों ओर मृत्युकी छाया है। कहीं भी जीवनका चिन्ह नहीं मालूम होता। हरिकृष्णने मेरे कन्धेपर हाथ रखते हुए कहा—

"तैय्यार हो जाओ हिम्मतके साथ जवान! हमलोग कोई न कोई रास्ता निकाल लेंगे। आओ समुद्रके किनारे होकर घूमें।"

अब हमलोग उसी तरफ़से चल रहे थे। सचमुच हमारी समस्या बड़ी कठिन थी। मैंने बहुतसे जासूसी उपन्यास और कठिनाइयों से मुक्त हुए वीरोंके वृत्तांत पढ़े हैं, किन्तु मुझे तो ऐसी कठिनाई कहीं भी सुननेमें नहीं आई। यदि वह लोगभी इस परिस्थितिमें आते, तो मुझे उम्मीद है, उनकी भी मेरीही जैसी दशा होती।

यह द्वीप जिसपर हमलोग खड़े थे, वास्तवमें एक अत्यन्त प्राचीन, अन्तर्लीन ज्वालामुखीका शिखर था। 'रेतोलीखाड़ी' जिस में 'इन्द्रायुध' खड़ा था उसीका एक मुख विवर था, जो कालान्तर में निम्न होते होते, जल और वायुके प्रभावसे अन्तमें वर्तमान रूप में परिणत हो गया। किन्तु, ज्ञात होता है, इस ज्वालामुखीके दो

मुख थे । दूसरा यही रहस्यमयी खाड़ी जिसके किनारे हमलोग खड़े टहल रहे थे । दोनोंके बीचमें ६ मील तक भयंकर चट्टानी, पहाड़ियाँ थीं । करीबसे करीब जानेपर भी खाड़ीका काला मुख; जो पहाड़ियोंके बीचमें हमको दिखलाई पड़ता था, वह बड़ा ही रोमाञ्चकारी था । वहाँ पानीका वेग तीव्र एवं लहरें बड़ी खतरनाक थीं। मेरी समझ में कोई समझदार नाविक इस मार्गसे आनेकी हिम्मत नहीं कर सकता । एक तो महाराजाको उनकी ज्ञान-पिपासा के कारण इधर आनेकी अत्यन्त आतुरता थी । दूसरे शायद उस समय ज्वार रहा हो, इस लिये धार कम हो । इस मार्गकी चौड़ाई, यद्यपि तीन जहाजोंके एक साथ निकलने के बराबर है, किन्तु और बातें कदापि सन्तोषजनक नहीं हैं ।

युग बीत गये, जब यह मुख-विवर पिघले हुए लावा भाप और राख उगला करते थे । जब इनके मुखोंसे हजारों तोपोंकी एक साथ आवाजसी आ रही थी । यह पिघले हुए पत्थरोंका समुद्रसा उसके चारों ओर बहने लगा । जब वह आग उगलना थम गया । जब वह लावाकी बाढ़ रुक गई । तब धीरे धीरे वह सब ठंडा होने लगे ; और उन्होंने इन पहाड़ियोंका रूप धारण किया । कितने ही समयके बाद एक और परिवर्तन आया । अब यह खाली मुख-विवर समुद्रके जलसे भरने लगे । धीरे धीरे इन्होंने खाड़ीका रूप धारण किया । अपने पुराने रास्तेके अवरुद्ध हो जानेसे जब कभी अग्निने फिर बाहर जानेकी इच्छाकी, तो उसने दूसरे रास्ते बनाये, जिनमें ही शायद एक वह भी है, जिसमें हमलोग गिरे थे । और जो अब इसीकी भाँति जलपूर्ण है । यह गर्त, और यह

चट्टानें हैं जिन्होंने इस द्वीपको 'मधुच्छत्र' नाम दिया।
यह 'गुप्तसमुद्र' उत्तर दक्खिन एक मील और चौड़ा पौन मील के करीब होगा। तट पर काली ज्वालामुखीय रेत थी, जिसके पिछले भागमें पत्थर और चट्टान जिसके पीछे वही भीष्मकाय दीवारें; जिनमें जहाँ तहाँ हल्की हल्की रेखायें सी थीं। शायद इन्हीं से महाराजाने अपने नमूने एकत्रित किये थे। यह यात्रायें बहुत छोटी छोटी हुई होंगी। कोई कोई तो शायद कुछ घंटोंही की रही होंगी। शायद इन यात्राओंसे लौट थैलों भरे पत्थरों को फिर माहाराजा पृथक् पृथक् करके श्रेणीवार अलग अलग रखते होंगे। अनावश्यकको फिर फेंक देते होंगे। जहाज मुहानेसे दूर हटकर था। इतने दिन विना मरम्मतके हो गये। तब भी जहाज भला चंगा मालूम होता था, इसीसे पता लगता है, कि इसकी बनावट कैसी होगी। यद्यपि वारनिश और रंग कहीं कहीं अब उखड़ चला था। अब भी उसके रक्षकने पूरे प्रयत्नके साथ उसे इसके योग्य रखनेकी चेष्टाकी थी, कि मालिकके आते ही वह लौटनेके लिये विल्कुल तैय्यार होजाये! भगेलूकी दिनचर्या! उसका जीवन! यह प्राणिशून्य स्थान, जहाँ न बकरी, न स्यार, न कीड़ा न मकोड़ा, न चूहा न चींटी, यहाँ तक कि जरासी की कोई छोटीसी घास तकभी नहीं! यद्यपि समय समय पर इस गुप्तसमुद्र में ज्वार आता है, उसके साथ मुहानेसे कुछ शब्द भी आता है। इससे पानी दो, तीन हाथ ऊपर भी चढ़ जाता है, किन्तु कैसा आश्चर्य! भगेलू कहता है कि यहाँ मछली एक भी नहीं आती। यद्यपि मछलियोंके आनेसे शायद जीवन निर्वाहके लिये आशा बढ़ जाती,

किन्तु इसमें सन्देह नहीं, कि उस समय हमारा बँचकर यहाँ तक आना मुश्किल था। अवश्य उस अन्धेरी गुफाके जलमें उस समय घड़ियालों और नाकोंका वसेरा होता।

हम टहलते हुए तटके पास वहाँ तक चले गये जहाँसे आगेका रास्ता एक दम बन्द था। उसके आगे वही चट्टान, वही अलंघ्य काली दीवार। यहाँसे मुहाना कुछ और अधिक दिखाई देता था। हमें यही मुक्तिमार्ग जान पड़ता था, वल्कि इसीके दर्शनकी लालसासे हम यहाँ तक बढ़ आये थे, किन्तु हमने कुछ भी ऐसा नहीं देखा, जो हमारे लिये आसरा होता। यह सिर्फ एक मेहरावदार ऊँचा द्वार था, यहाँ आशा और अनुकम्पाका पता न था। हरिकृष्णका वह डर, कि रास्ता छोटी डेंगीके लिये बड़ा भयानक होगा, विल्कुल ठीक मालूम हुआ, क्योंकि वहाँ एक प्रखर धारसी चलती जान पड़ती थी। जब वहाँ खड़े हम उधर देख रहे थे, तो हरिने कहा—

"इसकी बनावट विचित्र है, किन्तु अकेला नहीं है। 'फर्नान्दो-दि-नन्हो' (ब्राजीलके पूर्व किनारे पर टापू) के उत्तरी भागमें भी ऐसा ही दृश्य है। किन्तु वह सर्व प्रसिद्ध, और यह तो सर्वथा अश्रुतपूर्व ! यह स्थान इतना भयानक है, कि कोई मल्लाह इस ओर आना ही नहीं चाहता।"

मैं—"तो आपको आशा नहीं है, कि हम इससे बाहर निकल सकेंगे।"

हरि—"हां, डेंगी द्वारा हर्गिज नहीं। और यहाँ बड़ी नाव है नहीं। जहाजके साथ अनेक नावें रही होंगी। उन्हींमेंसे एकको ले रामकुमार और रामप्रसाद भी चले थे। लेकिन वह क्या हुई ?"

मैं—"और अमेरिकन जहाज तो हम लोग भूल ही गये। वह कितने दिनोंसे यहाँ पड़ा है, और "इन्द्रायुध"के चले जाने पर भी उसे अभी कितने दिनों तक ठहरना है।"

हरि—"हाँ! बहुत कुछ आशा है, कि उसके आदमी यहाँ आवें। वह इस द्वीपकी पड़तालके लिये आया है। यदि पूर्णरूपेण उन्होंने खोजना शुरू किया, जैसा कि प्रोफेसरकी बातोंसे मालूम होता था, तो अवश्य वह लोग यहाँ आवेंगे, जैसे कि महाराजा यहाँ आये थे। और यह भी हमें आशा रखनी चाहिये, कि चाहे उन्हें हमारे मरनेका भी किसी कदर अनुमान होगया हो, किन्तु कप्तान प्रभुनाथ, प्रोफेसर और कप्तान जेक्सनसे हमारे विषयमें पूरा वचन लिये बिना नहीं गये होंगे।

अब सब बातें स्पष्ट मालूम होने लगीं। हम कहाँ किस अवस्था में हैं। हमारे लिये अब क्या रास्ता, क्या तदबीर बाकी रही है—सभी बातों पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता मालूम हुआ।

मैंने कहा—"तब पहिले क्यों न मुझे इन बातोंसे आपने सूचित किया। इतनी देर तक मुझे अन्धेरेमें रखनेका मतलब?"

हरिकृष्णने मेरे मुंहकी ओर स्थिर दृष्टिसे देखते हुए कहा—"मेरे दिमागमें भी यह विचार अपरिपक्व दशा हीमें था। हमारी परिस्थितिका दुःखमय पहलू ही मुझे अधिक दिखाई देता था। कोई निश्चय नहीं था, इसीलिये माधव! मैंने नहीं कहा था।"

मेरे हृदयमें अब प्रतिक्रियाके तरंगोंकी बाढ़सी आगई। मैं अब कुछ न बोल सका। मेरे मनमें आशा देवीकी सुनहरी मूर्त्ति दूरसे आती दिखलाई पड़ी। मालूम हुआ, २० वर्षसे इस कैदमें पड़ा

हुआ भगेलू, अब शायद बीस ही दिन और यहाँ रह सके। जल्द ही हमारी मुक्ति होगी। आः! कितना अद्भुत सफर होगा। बीस वर्ष तकका इस गुप्तसमुद्र और टापूका प्रवास, यहाँके सारे रहस्य, लोगोंको जब ज्ञात होंगे, तो उन्हें कितना आश्चर्य होगा।

अब हमलोग बंगलेकी ओर लौटने लगे। जब हम उससे सौ गजकी दूरी पर थे, तब दर्वाजा खुला। भगेलू बाहर आया। वह हमारी तरफ नहीं देखता था। उसकी दृष्टि पहिले जहाजकी ओर गई, फिर गुप्तसमुद्रके उत्तरी भागकी ओर जहाँ चट्टानोंका अंधकारमय जंगल था। वह वहाँ कितने ही मिनटों तक खड़ा रहा।

हरिकृष्णने कहा—"अपने मालिकको देख रहा है। हाय रे! भगेल!" उसके व्यवहारसे मालूम होता था, कि मानों वह हमें भूल गया है। किन्तु जिस समय हम आगे बढ़े और उसकी नजर हमलोगोंके ऊपर पड़ी तो उसे याद आई, उसके चेहरे पर प्रसन्नताके चिह्न दिखलाई पड़ते थे।

हरिकृष्णने आगे बढ़कर, 'वन्दे मातरम्' किया। और कहा—

"हमलोग ज़रा टहलनेके लिये चले आये थे। मुहानेको देख रहे थे, कि किस प्रकार खुले समुद्रमें पहुंच सकते हैं।"

भगेलूने इन सारे शब्दोंमें मालूम होता है, दो ही शब्द पकड़ पाये। उसने कहा—"खुले समुद्र, खुले समुद्र"।

हरि—"हाँ, तुम क्या समझते हो? हमें किसी प्रकार अपने जहाज पर पहुंच जाना है!"

बूढ़ेने सिर हिलाते हुए कहा—"नहीं बाबू! इस रास्तेसे नहीं। यह रास्ता बड़ा भयंकर है। वह मुहाना चौथाई मीलका है, किन्तु

अत्यन्त भयंकर, तीक्ष्ण धार, और तेज़ धार वाले चट्टान अगल बग-लमें हैं। जानेका उत्तम समय वही है, जब ज्वारसे पानी खूब भरा हो, किन्तु तब भी एक मजबूत बेड़ेकी आवश्यकता होगी।"

मेरे दोस्तने कहा—"तुम्हारे पास एक ही डेंगी है, और नावें क्या हुईं? एक औरको मैं जानता हूँ जिसे रामकुमार और रामप्रसाद ले गये थे, किन्तु यहाँ और भी नावें रहीं होंगी।"

उस शुष्क चर्म-अस्थि-अवशिष्ट चेहरे पर शोककी छाया दौड़ती दीख पड़ी, उसने कठिनताके साथ कहा—"यही मेरा दुःख है। हमारे पास एक बड़ा सुन्दर अगिनवोट और एक रक्षक नाव थी। वह बराबर 'पुष्पक'के पास ही में रहते थे। ओह! अपने अभाग्यको क्या कहूँ। एक रातको, जब कि ज्वार जोरका आया था। मेरी गलती, मैंने उनको मजबूतीके साथ नहीं बाँधा था, और समझता था, कि वह सुरक्षित हैं, किन्तु प्रातःकाल जब मैंने देखा तो वह चले गये थे। मेरी तबियत घबड़ाने लगती है, जब मैं इस बातका ख्याल करने लगता हूँ। मालिक पूछेंगे, तो मैं क्या कहूँगा, और कप्तान साहबको क्या उत्तर दूँगा—"

हरि—"इसकी चिन्ता मत करो, वह तुमसे हर्गिज रुष्ट न होंगे। वह अच्छी तरह समझेंगे, कि तुम्हारा इसमें कोई कसूर नहीं है। तो, तुम्हारी समझमें निकलनेका कोई रास्ता नहीं है?"

बूढ़ेकी दृष्टि ही इसके लिये पूरा उत्तर था। फिर मेरे मित्रने मामूली तौर पर कहा—"तो, हमें कोई दूसरा रास्ता सोचना चाहिये, या यहाँ प्रतीक्षा करनी चाहिये।"

मगेलू—"नहीं बाबू! जल्दी करनेकी कोई जरूरत नहीं।

मालिक बराबर बाहर ही थोड़े रहेंगे। अबकी बार ज्यादा देर लग गई है, परन्तु अब दो चार दिनमें आवेंगे कि।"

यह कहते हुए हमें लिवाये वह घरमें चला गया। जब तृण वनस्पतिका वहाँ पता ही नहीं तो दातवनकी क्या आशा थी। भगेलूने हमें दन्तमंजन और ब्रुश दिया। जब हम मुँह हाथ धो, अपनी कुर्सियों पर बैठे तो, भगेलूने गिलासोंमें गर्म दूध और कटोरियोंमें मीठी टिकिया नाश्ताके लिये रक्खी। तीनों आदमी बैठकर नाश्ता करने लगे। भगेलूने टिकियोंकी ओर इशारा करके कहा—

"मालिकिनने बहुतसी चीजें बनवाकर हमारी यात्राके लिये रख दी थीं। मालिकने तो बहुत कम ही खाया था। अभी तो बहुतसा खजूर, शक्करपारा, पेठा,—डब्बों और बोतलोंमें बन्द रक्खा पड़ा है। चलो न बाबू! देखें वहाँ।"

हरि—"तो तुम रोज जहाज पर जाते हो?"

भगेलू—"हाँ! रोज़ सबेरे। महाराजकी सब चीज़-वस्तु न वहाँ है? उनको झाड़ पोंछ कर रखना होता है। कमरोंको भी झूठ-साँच झाड़ू-बहारू दे ठीक करना पड़ता है। न जाऊँ, तो कैसे बने?"

हरि—"लेकिन बाबा! जब तक हमलोग यहाँ हैं, आपके काममें कुछ सहायता देना चाहते हैं। हम समझते हैं, कि आप हमारी इच्छाको स्वीकार करेंगे। क्या यह अच्छा नहीं होगा, कि आप यहाँका काम देखें; और हम दोनों आदमी जाकर वहाँका काम कर आते हैं।"

यह सुन कर पहिले बूढ़ेके मनमें कुछ आनाकानी हुई । किन्तु हरिकृष्णके मृदु व्यवहारने उसके हृदयको अपना लिया था, इसीलिये भगेलूने थोड़ी देरके विचारके बाद, स्मित-मुखसे स्वीकार किया। अपने ऊपर उसने बंगलाके झाड़ू-बहाड़ू तथा बर्तन माँजनेका काम लिया, और हमलोगोंको वहाँका काम सौंपा। हमको यह भी बतला दिया कि, वहाँ कौन कौन काम करना होगा । इस प्रकार हम दूसरी बार जहाजकी ओर चले। थोड़ी देरमें हम उसी सुसज्जित सीढ़ीसे होकर 'पुष्पक'के संगमर्मर सदृश पोत तल पर पहुँच गये। वहाँ पहुँचते ही हरिकृष्णने कहा—

"माधव! अब थोड़ा मैं एक नीच काम करने जारहा हूँ। तुम तब तक जाकर काम करो, मैं कप्तानके कमरेमें उल्टापल्टी करूंगा। मुझे आशा नहीं है, कि कप्तानने यहाँसे जाते समय कोई अपना अन्तिम सन्देश लिखे बिना छोड़ा होगा। मैं उसीको खोजना चाहता हूँ। मुझे उम्मेद है, उससे बहुत बातों पर प्रकाश पड़ेगा। समझा ?"

कल जो बात मुझे अरुचिकर मालूम होती थी, आज वही अत्यन्त प्रीतिकर प्रतीत हो रही थी। मुझे अब समझमें आगया था, कि पत्रों, पत्रिकाओंकी पुरानी प्रतियाँ और भगेलूकी बातोंसे उठे सन्देहों ही ने, उन्हें कल वैसा करनेको बाध्य किया था।

मैंने कहा—"हाँ! बेशक आप देखें। मैं काम करने, जा रहा हूँ किन्तु जैसे ही कोई आवश्यक बात मिले, मुझे उसी समय सूचित कीजियेगा।"

हरि०—"हाँ! उसी वक्त।"
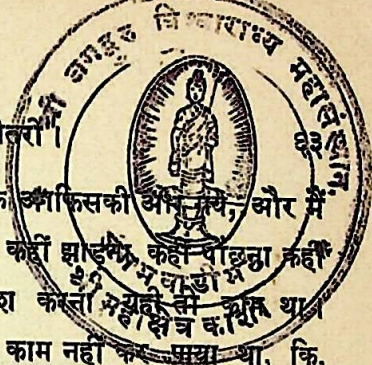
इस प्रकार हरिकृष्ण तो कप्तानके आफिसकी ओर गये, और मैं मगोलूके बताये कामको करने गया। कहीं झाड़ देना, कहीं पोंछना कहीं किसी चीजको रगड़ना और पालिश करना यही तो काम था। अभी मैंने दश मिनट भी अपना काम नहीं कर पाया था, कि, हरिकृष्णने पुकारा—"माधव हो !"

मैं बिना स्वांस लिये उधर दौड़ पड़ा। हरिकृष्ण कप्तानके आफिसमें मेजके पास कुर्सी पर बैठे हुए हैं। उन्होंने उसी लॉग बुक को खोल कर सामने रक्खा है। किन्तु अबकी उनकी दृष्टि, जहाज विषयक लेखों पर नहीं है। उनका हाथ बहुतसे फुलस्केपके खुले हुए पन्नों पर है।

हरि—"जैसा मैंने ख्याल किया था, वैसा ही है। देखो इन पन्नोंको कप्तानने अपनी लॉग-बुकमें लिख कर रक्खा है, कि जिसमें नवागत जिज्ञासुको इन्हें पानेमें दिक्कत न हो। कल हमलोगोंको जल्दी थी, नहीं तो कल ही इन्हें खोज लिये होते।"

मैंने उनके कन्धे पर झुक कर उधर देखना आरम्भ किया। उसके लिखे जानेकी तारीख १ कर्क १९६१ विक्रमीय थी। तारीखके नीचे मोटी कलमसे सुर्खीके तौर पर लिखा था—

"यदि मैं न लौटूं।"

सप्तम अध्याय

कप्तानका सन्देश।

हमने उसे इस प्रकार पढ़ा :

"मैं इसे एक अनिश्चित और भीषण अवस्थामें लिख रहा हूँ। मुझे इसमें बड़ा सन्देह है, कि इसे कोई दूसरा पढ़ने पा सकेगा, सिवाय इन तीनों बेचारोंके, जिनके ऊपर कि मैं जहाज सौंप कर जा रहा हूँ। किन्तु इस ख्यालसे कि, शायद कोई हमारी वर्तमान परिस्थितिसे अपरिचित दृष्टि इधर पड़े, इसलिये जल्दीमें जहाँ तक हो सकता है, विस्तारके साथ लिखनेकी कोशिश करता हूँ, कि क्यों मैंने अपने दिलमें यह इरादा किया।

"चार मास बीते, जब हमने 'रेतीली खाड़ी'में पहिले आकर लंगर डाला। महाराजा जगदीशपुर, दक्षिणी अटलांटिकके टापुओंके भूगर्भ-शास्त्रीय अन्वेषणके ख्यालसे हमारे साथ यात्रा कर रहे थे। हमारे आनेके एक ही सप्ताह बाद, जब महाराजको घूमते हुए इस खाड़ीका पता लग गया, तो उन्होंने 'पुष्पक'को यहाँ लानेकी आज्ञा दी। इस खाड़ीको देख कर महाराज बहुत खुश हुए। उन्होंने मुझसे कहा, यह दूसरा 'क्रेटर' भूगर्भ-शास्त्रीय अध्ययनके लिये अत्यन्त ही उपयोगी होगा। एक सप्ताह यहां ठहरनेके बाद, उन्होंने कहा, कि यहां हमें अधिक दिनों तक मुकाम करना होगा। इसलिये हमलोगोंने यहाँसे 'मौपले टापू'की यात्राकी, कि वहाँसे लकड़ी

तथा अन्य आवश्यक वस्तुयें एक विश्राम गृह बनानेके लिये लावें। उनके कहनेके मुताबिक ही, हम खाद्य पदार्थ भी इतना लाये, कि जो हमारे सबके लिये बारह माससे अधिकके लिये पर्याप्त था। उन्होंने इसका कारण नहीं बताया, किन्तु उनके ढंगसे मालूम हुआ, कि उन्हें यहाँ अपने कामकी इतनी चीजें मिलनेकी आशा है, जिन्हें देखनेके लिये उन्हें अधिक ठहरनेकी जरूरत है। सचमुच, एक बार उन्होंने यहाँ छै मास रहनका इरादा प्रकट किया, और कहा, कि उसके बाद फिर एक बार यहाँ लौट कर आना होगा, किन्तु यह सब कुछ आगामी कामों पर निर्भर करता है। किनारे किनारे महाराजने जो खोज किया, तो उसमें बहुत अच्छे अच्छे नमूने उन्हें हस्तगत हुए। जितना ही समय बीतता जाता था, उनकी दिलचस्पी भी उतनीही बढ़ती जाती थी। वह इस संग्रहके कार्यमें इतना व्यस्त हो गये कि, उन्होंने और दूसरी बातचीत तथा औरोंके साथ मिलने बैठनेको भी एक प्रकारसे छोड़ दिया। यद्यपि वह बातूनी न थे, किन्तु वैज्ञानिक विषयों पर वार्त्तालाप करना उन्हें बहुत पसन्द था। जब बंगला तय्यार हो गया, तब तो और भी उनकी प्रवृत्तिमें फर्क आ गया। वह कभी कभी तीन तीन, चार चार दिन बंगले ही में सोते थे, जहाज़पर एक बार भी न आते थे। उनका कार्य था, आसपाससे तरह तरहके पत्थरोंके नमूनोंको संग्रह करना, उनका सूचीकरण और पृथक्-करण। उन्होंने बंगलेकी जिम्मेवारी भगेलूको, जो कि महाराजके ग्रामका तथा उनका अत्यन्त विश्वासपात्र आदमी है, सुपुर्द किया। भगेलूने भी उसी प्रकार अपने और जहाजी साथियोंसे मिलना कम कर दिया।

मेरे साथ यद्यपि महाराजका व्यवहार पूर्ववत् ही मित्रतापूर्ण था, किन्तु मैं समझता था, कि वह कार्यकी अधिकताही थी, जो उन्हें मेरे साथ भी वार्तालापके लिये पहिलेकासा अवसर न देती थी। जो कभी कुछ कहते भी थे, तो भूगर्भशास्त्रकी कोई सामान्य बात लेकर। अपना काम, उन्होंने इस द्वीपमें क्या किया, इस पर कुछ नहीं कहते थे। यद्यपि मेरा ज्ञान भूगर्भशास्त्रके विषयमें अत्यल्प था, किन्तु मैं उसका एक अच्छा श्रोता था, किन्तु इस समय महाराजको श्रोता की इच्छा ही नहीं थी।

"एक महीनेके बाद महाराजकी राय हुई, कि ज़रा दूर तकका चक्कर लगाना चाहिये। उन्होंने मुझसे कहा, उत्तरी भागकी पड़ताल करते हुए मैं पहाड़ीके उत्तर किनारे तक पहुँचना चाहता हूँ। लेकिन भूमि बहुत ही नीची ऊँची तथा अनिश्चित थी, इसलिये उन्होंने कई आदमियोंको रसद पहुँचानेके लिये ले जाना पसन्द किया। मैंने अपनी सम्मति भी उनके मुवाफिक दी, और कहा कि आपके साथ आठ या दस आदमी जाने चाहिये। भूमि खड़ी और ऐसी बीहड़ है, कि कई जगह पैर जमानेके लिये जगह भी बनानेकी आवश्यकता पड़ेगी। महाराज साथ साथ हर जगह भूगर्भशास्त्रीय अन्वेषण भी जारी रखना चाहते थे। आपसमें वार्तालाप के बाद यह पक्का हुआ, कि यह चढ़ाई एक सप्ताहके लिये होनी चाहिये। महाराजने कहा—'यदि हम एक सप्ताहके बाद न आवें, तो आकर हमारी खोज लेना। लेकिन अर्जुन, तुम जानते हो न, मधुच्छत्र कितना बदनाम स्थान है?

"मैंने कहा—बदनाम? सचमुच मुझे तो इसका पता नहीं।"

"इसपर महाराजने एक छोटो पुस्तक उठाई, जो मेजपर रक्खी थी, और कहा—'यह एक पुराना पुर्तगीजी विवरण है, इसमें इस तरफके समुद्रोंकी एक यात्राका वर्णन है, जो सत्रहवीं शताब्दीके पिछले भागमें हुई थी। इसमें एक स्थानका विवरण है, जो मुझे विश्वास है कि इसी द्वीपका है, यद्यपि वहाँ नाम दूसरा दिया है।

"उन्होंने उसके कई पन्ने उलट कर एक ऐसा पृष्ठ खोला, जिस पर लाल पेन्सलका निशान दिया हुआ था। मैं 'पुर्तगीज' भाषा समझनेमें असमर्थ था, अतः महाराजाने उसका अनुवाद करके मुझे सुनाया। मैं उसे यहाँ यादकरके लिखता हूँ, जो मुझे आशा है, विल्कुल वैसा ही होगा।"

"उन्तीसवाँ दिन—आज हमने एक प्राणिशून्य पथरीला द्वीप देखा, जिसे मल्लाह लोग गड़होंका द्वीप कहते हैं क्योंकि इसमें असंख्य गड़हे या गर्त हैं। इसकी भीषणतासे कोई भी यहाँ मुकाम नहीं करना चाहता, यद्यपि यहाँ एक अच्छा लंगरगाह और पास ही पीनेका पानी है। लोग कहते हैं, कि यहाँ एक गुफा है जिसमें शैताननें डेरा डाला है। अगर कोई अनभिज्ञ पुरुष उसके निवास स्थानके पास चला जाता है, तो वह उस पर अपने भयंकर नेत्रोंको खोलता है, और वह वहीं गिरकर मर जाता है। इसलिये हम यहाँसे वायव्यकोणकी ओर अग्रसर हुए।"

"महाराजने कहा—'मुझको इसमें विल्कुल सन्देह नहीं है, कि यही वह गड़होंका द्वीप है। अब तुमको मालूम हुआ, कितना बदनाम यह द्वीप पहिलेसे ही है?

"मैंने अस्वीकार करते हुए कहा—'वह बेहूदा, एक मिथ्याविश्वास

था कि'। जिस पर महाराजके ओठों पर एक अद्भुत हँसोकी रेखा दिखाई पड़ी, मानों वह उससे अधिक इस विषयमें जानते हैं, किन्तु उसे कहना नहीं चाहते ।"

'उन्होंने कहा—'निस्सन्देह यह एक कहावत, एक मिथ्या-विश्वास है, किन्तु शायद इसका युक्तियुक्त कोई अर्थ हो । शायद मुझे ऐसी कोई गुफा मिले। आपको मेरे पड़तालकी प्रतीक्षा करनी चाहिये। हाँ ! तो अर्जुन, यदि एक सप्ताह बीतने पर भी मैं न लौटूं, तो तुम मेरे खोजनेके लिये, घण्टी, पुस्तक और मोमवत्तीके साथ आना। शैतान सचमुच बड़ा निष्ठुर जेलर होगा।"

"मैंने उनके साथ वार्तालापका एक संक्षिप्त नोट 'लॉगबुक' में कर लिया ।'

"दो दिन बाद महाराज निकल पड़े। उनके साथ दस आदमी थे, जिनमें प्रथम अफसर श्रीहरिहर सिंह और चीफ इंजीनियर श्री गिरीशदत्त त्रिपाठी भी थे। हम उन्हें नावपर बैठाकर खाड़ीके उत्तरी तटतक पहुँचानेके लिये गये। पीछे उसी शामको आदमियोंमेंसे दो रामकुमार और रामप्रसाद लौट आये। हमने देखा कि वह वहीं पानीके तटसे हाथके इशारेसे बुला रहे हैं पीछे मालूम हुआ कि, राम-कुमारने एक मील चलते चलते कहीं अपनी घुट्टी तोड़ ली है, इसी लिये रामप्रसादको उसके साथ करके लौटा दिया गया। इन आदमियोंने बताया, कि यात्रा बहुत कठिन है, अतः बहुत धीरे धीरे आगे बढ़ना हो रहा है। वह सीधे उत्तरकी ओर बढ़ रहे हैं, किन्तु बाधायें असंख्य हैं ।"

"यह अन्तिम समाचार था, जिसे हमने महाराज आदीशपुरके

बारेमें पाया। सप्ताह बीत गया, किन्तु वह लौटकर न आये।"

"मेरी घबराहट और भी बढ़ गई, क्योंकि महाराज अपने प्रोग्राम और बातके बड़े पक्के थे। यद्यपि उस वक्त मेरे हृदयमें यह भी ख्याल आया, कि शायद उनको कुछ दिन और ठैर जानेकी अवश्यकता प्रतीत हुई हो। किन्तु मेरे लिये इसके सिवाय कोई चारा न था कि, पता लगानेके लिये एक दूसरी टोली भेजूं। यह टोली पहिली से बड़ी होनी चाहिये, क्योंकि इसे अपनोंके अतिरिक्त उनके लिये भी रसद लेचलना है। मैंने अपने बचे आदमियोंसे ग्यारह मजबूत जवानोंको इसके लिये निर्वाचित किया। अबतक मेरे चित्तमें कोई भारी सन्देह नहीं हुआ था।

"कई कारणोंसे इस टोलीका अगुवा मैंने स्वयं न होना चाहा। मैंने अपने द्वितीय अफसर श्रीरामबहादुर लाल, एक बहादुर और चतुर नवयुवकको इसका नेता बना करके भेजा। मैंने उन्हें इसे भली भाँति समझा दिया, कि उन्हें कितनी सावधानी और दृढतासे काम लेना चाहिये। टोलीने बड़े उत्साहके साथ कूच किया...... और उसके बाद कुछ भी समाचार उनलोगोंका न मिला।

"मैंने इसके बाद दो सप्ताहतक प्रतीक्षाकी। कहींसे भी किसी प्रकारकी आशा अब न रही। हमलोग अब दस ही मजबूत आदमी बाकी रह गये। इतने आदमियोंसे जहाजको घर लौटा कर देश ले जाना भी असम्भव था। मैंने इस ख्यालको अपने सामने आने ही नहीं दिया। मेरे दिलमें इन दुष्ट चट्टानों और भीतरी वस्तुओंके प्रति अपार घृणा उत्पन्न होगई! मुझे धीरे धीरे अब विश्वास हो चला, कि अवश्य उन पर कोई आफत पड़ी। किस बुरी साइत में हमने यह

यात्रा की! मेरी तबियत इसके विषयमें कुछ भी जाननेके लिये अधीर थी, किन्तु यहाँ कुछ न था। उत्तरी तट और उसकी काली दीवार वैसी ही नीरव थी।

"किन्तु, यह मेरे लिये, असम्भव था कि मैं यहाँ चुपचाप बैठा बाट जोहता रहता। मुझे अब इस परिस्थितिका मुकाबिला करना होगा। मैंने अपने मित्र श्रीकामेश्वर प्रसाद, जो स्वयं भी मेरे साथ आग-पानीमें कूदनेके लिये तय्यार थे, के साथ विचार करने पर, सब नाविकोंको एक साथ अपने आफिसमें बुलवाया। मैंने सारी परिस्थितिको बिना चूँचिरा, बिना कुछ घटी बढ़ीके सबके सामने खोल कर रख दिया—'जहाजके मालिकको गये एक मास हो गया। वह और उनके साथियोंका तबसे कुछ पता नहीं। दूसरी टोलीके लोगोंको भी गये आज दो सप्ताह हो रहे हैं। उनकी भी वही दशा है। इससे पता लगता है, कि उनके ऊपर कोई आफत आई है, नहीं तो वह लौटे बिना अथवा अपना समाचार भेजे बिना न रुकते। यदि ऐसा हुआ तो उनके पास रसद थोड़ी थी उसके समाप्त होते ही उनके ऊपर यह दूसरी विपत्ति पड़ेगी। इस द्वीपमें सिर्फ पत्थर ही पत्थर हैं। अतः यह आशा नहीं कि उन्हें किसी मानवी शक्तिने रोक रक्खा होगा।' मैंने उनके सामने एक सहायक टोली भेजनेका प्रस्ताव किया, जोकि उनके मार्गका अनुसरण करते हुए आगे बढ़े। उन्होंने क्या राय दी?

"वही जो एक भारतमाताके पुत्रके लिये योग्य थी। किसीने भय और कायरताकी गंधतक अपने हृदयमें न आने दी। सबने एक स्वरसे, बड़े उत्साहसे कहा—'हम अपने कप्तानके आदेश पर, जलते

तवे पर शिर आँखोंके बल चलनेके लिये तय्यार हैं।' उनके उत्साह को वढ़ाते हुए श्रीरामबहादुरने कहा—'देखो महाराज कितने पवित्र कामके लिये कितने महत्वपूर्ण कामके लिये अपने घर-बार, अपने सुख-स्वर्ग सभीको परित्याग कर, हजारों कोस दूर इन सुनसान खड्डों में आये। उनके श्रेणीके राजाओं और नवाबोंमेंसे आज कितने हैं, जो विद्यानुरागमें देशकी यशोवृद्धिमें इस प्रकारका त्याग दिखावें। उन्हें तो अपने शरीरका सुख-अपनी इन्द्रियोंका सुख—यही सब कुछ है। भला कौनसा ऐसा आदमी होगा, जो ऐसे महापुरुषकी सहायता के लिये, उसके विपद्ग्रस्त साथियोंके उद्धारके लिये अपना कदम आगे बढ़ानेसे रुकेगा। कप्तान साहब! आप चलिये, हमें जानेके लिये आदेश कीजिये। हम महाराजका समाचार बिना लिये, बिना उनको लिवाये नहीं लौटेगें।

"इसके बाद मैंने कहा, कि तीन आदमियोंको यहाँ देखभालको छोड़ जाना चाहिये। रामकुमार, रामप्रसाद जहाज पर और भगेलू तो महाराजकी चीजों और बंगले पर है ही। इसके बाद यात्राके लिये सब सामग्री बाँधी-बूँधी जाने लगी, और दूसरे दिन सबेरे चलनेकी ठैरी।

"इस अन्तिम घड़ीमें मुझे विश्वास नहीं, कि मैं ठीक कर रहा हूँ। एक तो यह, कि शायद मैं इन्हें मौतके मुँह लिये जा रहा हूँ। और दूसरे यदि वह लोग जीवित और सुरक्षित हैं, तो तब तक वह यहाँ पहुँच जायंगे। किन्तु द्वीपकी भयानक मूर्त्ति, उसकी काली गुफायें और काली दीवारें सभी यह बता रही हैं, कि उन्हें कोई भारी विपत्तिका सामना करना पड़ा। कुशल नहीं है।

"वर्त्तमान अवस्थामें यद्यपि शीघ्रसे शीघ्र यहाँसे रवाना हो जाना ही अच्छा है। किन्तु मेरे हृदयमें इस समय कई प्रकारके सन्देह हैं। मुझे आशा नहीं है, कि मैं लौटकर भारतमाताके पवित्र चरणोंको इन आँखोंसे फिर देख सकूंगा। मुझे यह भी उम्मीद नहीं कि मैं महाराजसे मिल सकूंगा। मेरी समझमें महाराजके ऊपर जो पड़ना था सो अब तक पड़ गया होगा। मुझे आशा नहीं, मैं महाराजके परिवारको देख पाऊँगा या उनके किये यहाँके कामोंको अपने देशवासियोंके कानों तक पहुँचा सकूंगा।

"जब यह पंक्तियाँ किसी अपरिचित बन्धु द्वारा पढ़ी जायँगी, मुझे आशा है, कि तब तक हमारा काम तमाम होगया रहेगा। मैं उनसे प्रार्थना करूँगा, कि वह हमारी सहायताके लिये अपनी शक्ति और समयसे किंचन्मात्र भी व्यय न करेंगे, क्योंकि निश्चय वह व्यर्थकी अपने ऊपर आफत बुलानी होगी, जिससे हम लोगोंको कुछ भी लाभ न पहुँच सकेगा। उनसे यही हम आशा रखते हैं, कि यदि यहाँ छोड़े गये व्यक्ति जीवित मिलें, तो उन्हें उनके घर पहुँचा देना, तथा 'पुष्पक'की इस घटनाका समाचार पत्रोंमें शीघ्रसे शीघ्र प्रकाशित कर देना, जिसमें इसके लिये उत्सुक व्यक्तियोंको सूचना मिल जाय।

"मेरी वसीयत मेरे प्राइवेट कागज पत्रोंमें है, जो कि डेस्कमें हैं, जिसे मैंने आज ही लिखा है।

"अर्जुन सिंह, कप्तान, राष्ट्रीय नौसेना"।

हमने सन्देशको पंक्तिशः, एक एक शब्द करके पढ़ा। जब यह समाप्त हो गया तो हरिकृष्णने कुछ नहीं कहा। उन्होंने एक बार मेरी

ओर ताक कर भी नहीं देखा। उन्होंने चुपकेसे उन कागजोंको मोड़ कर उस किताबमें रख, जहाँका तहाँ रख दिया। अब भी मैं उस महान् स्तब्धतामें भगेलूकी गतिविधि देख रहा था। अन्ततः मैंने कहा—

"तब ?"

हरि—"उनमेंसे एक भी मुड़कर नहीं आया, और कुछ दिनोंके बाद रामकुमार, रामप्रसाद और भगेलूने इस कागजको देखा। उनमेंसे दोने, किसी प्रकार यहाँसे जान बचाकर निकलना चाहा, किन्तु भगेलू इसके लिये तय्यार न था। उसको अब भी आशा है —या, शायद उसे भय मालूम हुआ—या, शायद उसने वैसा करके अच्छा ही किया, क्योंकि इससे दूसरा काम बड़ा भयंकर निकला। इस प्रकार वह ठहर गया। पीछे कुछ दिनोंके बाद उसके दिमागने जवाब दे दिया। अब वह कलकी भाँति जीता है। उसको मालूम नहीं उसे कितने दिन यहाँ रहते हो गये। यदि उसे यह मालूम होता, तो निश्चय है, कि वह अब तक जीता न रहता।"

मैं—"तो फिर इनलोगोंका क्या हुआ ?"

हरि—"हम केवल अनुमान कर सकते हैं। हमलोग स्वयं जैसे एक गर्तमें गिरे, वैसे ही शायद किसी गर्तमें यह लोग भी गिर पड़े। किसी प्रकारकी बला इनके ऊपर आई, यह निश्चय है। पुरानी पुर्तगीजोंकी कहावत, यद्यपि उसे रंग देकर वर्णन किया गया है, अवश्य किसी सच्चे आधार पर है। उन भोले भाले नाविकोंके लिये शैतान एक सच्ची वस्तु थी, इसीलिये सभी विपत्तियोंके साथ उसका सम्बन्ध जोड़ देना उनके लिये अनिवार्य था।......किन्तु सचमुच

माधव ! तुमको दुःख है, कि हमलोगोंको क्यों यह पत्र मिला ?"

मैं—"दुःख ! नहीं, यद्यपि यह हृदयविदारक है। यह नहीं कि इसने बहुतसी बातोंको खोल दिया, प्रत्युत इसने सबसे भारी रहस्यमय मार्गका पर्दा चाक कर दिया।"

हरि—"हां ! भाई, और इस सबको पढ़ कर समाप्त करनेके बाद अब हम ठीक उसी रहस्यमयताके सामने खड़े हैं।"

इसके बाद वहाँसे उठकर हमलोगोंने अपना काम पूरा किया। इस रहस्यका आतङ्क ऐसा हमारे हृदयों पर छाया था, कि हम अपने कामोंको पुतलीकी भाँति कर रहे थे। अब 'पुष्पक'की किसी भी वस्तुको वैसी बारीकीसे नहीं देखते थे, क्योंकि, अब हमारी दृष्टिमें उनका कुछ भी वास्तविक मूल्य न था। सचमुच हमलोग खुश थे, जबकि हमारा काम हो गया और किनारे जानेके लिये तय्यार हुए।

बूढ़ा भगेलू हमारे लौटनेकी प्रतीक्षा कर रहा था। हमारे किनारे पर पहुँचते ही वह हमारे पास चला आया। मैंने भगेलूके मुखको देखा, किन्तु वहाँ भी मुझे केवल रहस्य ही रहस्य दिखाई पड़ा। पीछे मुड़ कर 'पुष्पक' की ओर दृष्टि डाली, उसकी सूरतसे अपार करुणाकी वृष्टि हो रही थी। दोनों हो जगहें असंख्य प्रश्नोंका उद्गम स्थान थीं। किन्तु था वहाँ प्रश्न ही प्रश्न—उत्तरका पता नहीं।

जब मैंने देखा, कि इसका परिणाम क्या होगा ? आखिर इसी जगह मुझे सबका उत्तर भी झलक गया।

—०—

अष्टम अध्याय

भयंकर बुलबुला।

पिछले दिनोंमें इन विचारोंके अतिरिक्त हमारे दिमागमें दूसरे विचारोंको भी स्थान मिलता, तो वह महान् रहस्य हमारे सामनेसे ओझल हो जाता, अथवा भूल जाता। उस समय इस कथाका रूप कुछ दूसरा ही होता, अथवा संसारकी अज्ञेय वस्तुओं हीमें रहती। किन्तु सूर्योदयसे सूर्यास्त तक हमारे सामने उस रहस्यके अतिरिक्त दूसरा था ही क्या ? हमारे सन्मुख वस्तुयें थीं, किन्तु हमें उनका आकार स्वप्नसा, विस्मृतसा, अव्यक्तसा जान पड़ता था। किन्तु वह रहस्य ? बिल्कुल स्पष्ट, सर्वथा मूर्तिमान्। निराशापूर्ण, जनशून्य 'पुष्पक' क्या था ? उत्तर ओरकी दीवारों और चट्टानोंकी कालिमा क्या थी ? पुष्पकारोहियोंका नामलेवा कौन था ? जिधर भी हमने नजर डाली, वही प्रश्नपरम्परा, उत्तर-रहित अथवा वही एक उत्तर। रात्रिका अन्धकार हमारे लिये मंगल वस्तु थी, वह उस सर्वव्यापक वस्तुको आच्छादित करके हमारा हित करती थी। उससे भी बढ़कर निद्रा थी, जो माताकी भांति हमें अपनी प्यारी गोदमें लेकर सब कुछ भुलवा देती थी। हम उसी मनुष्यकी पलंगपर सोते थे, जो फिर लौटकर न आया। उसी कमरेमें, जिसे मानों उसने हमारे ही लिये बनवाया था। उस रात्रिकी नीरवतामें उस चिर एकान्तवासीकी नियमित श्वासकी आवाज हमारे कानों तक पहुँचती थी।

वह फिर हमारे अन्तःकरणको विकल करना आरम्भ कर देती थी। ओह! यह कैसा भोला है? इसका विश्वास कैसा पक्का है? अब भी आशा किये है, कि मालिक आवेंगे, आज नहीं तो कल आवेंगे। धन्य आशे! तू भी बड़ी दयावती है। इसके अपार दुखको, इसके अवसानरहित कारावासको, कुछ भी इसे पता न दे, तू चुपचाप इसे एक ही बार सबसे मुक्त करा देना चाहती है।

कभी कभी हमें इस पर आश्चर्य होता था, कि क्यों बूढ़े भगेलूने हमको अपने मालिकका घर और विस्तरा सोने बैठनेके लिये दिया? हम लोग रोज नियमपूर्वक जहाजपर जाते थे, किन्तु कभी वहाँ न सोये। यद्यपि बंगला भी वैसाही एकान्त और हृदयवेधक था, किन्तु उस रहस्यमय समुद्रके उस सूने जहाजमें तो मालूम होता था कितने ही हजार भूत आकर बसेरा किये हैं।

इस प्रतीक्षाके स्वप्न, और इच्छारहित बातचीत और कामोंमें एक पक्ष बीत गया। अमेरिकन अब भी न आये। बूढ़े की भाँति हमभी उत्तरकी दिशाको रोज शाम सबेरे देखते थे। ज्वार आया और, उस पथरीले मुहानेसे घर्घर करता हुआ निकल भी गया, किन्तु वहाँ किसी भी नाव या मनुष्यके शब्दका पता न था।

हरि—"हाँ, वह दूसरे भागमें द्वीपका पड़ताल कर रहे होंगे; किन्तु वह अवश्य अन्तमें यहाँ आवेंगे।"

यह पन्द्रहवाँ ही दिन था, जब कि मुझपर भगेलूकी बीमारी आनी शुरू हुई. मैं बोल उठा—

"वह क्यों यहाँ आने लगे? ऐसी आशामें सार? हो सकता

है, कि वह लोग आवें ही नहीं! अब सच्चाईको छिपा कर इस आत्मवंचनासे लाभ?'

हरि—"इसमें सच्चाईके छिपानेका प्रयत्न नहीं। हम वही बोल रहे हैं, जो कुछ कि, समझमें आता है।"

मैं—"हाँ, ठीक है। किन्तु मेरा कहना है, उनके आने न आने दोनोंकी सम्भावना बराबर है। शायद इस वक्त तक वह चले गये हों।"

मैंने विना जाने हुए यह सब कहा था, किन्तु हरिकृष्णको यह सब बातें पहिले ही सूझी थीं। मैंने और भी असन्तोष प्रकट करते हुए कुछ कड़े स्वरमें कहा—आह! तुम क्यों मुझे सदा बच्चा बनाना चाहते हो? क्या हम दोनों एक ही नावमें नहीं हैं? क्या, हम लोग सीधे सीधे साफ शब्दोंमें बिना लगाव-लपटावके बात-चीत नहीं कर सकते? ऐसा कहना हमारे लिये लाभदायक न होगा। यह खेल नहीं है, तुम इसे भली बात जानते हो।"

हरिकृष्णने इसे सावधान हो सुना। थोड़ी देरके लिये उनके मुख पर गम्भीरता छा गई। अन्तमें उन्होंने हँस दिया। यह उनका स्वभाव था। वह रत्ती मात्र भी सत्य छोड़ना पसन्द नहीं करते थे, चाहे गाड़ी भर निर्बल तर्कों पर ही वह अवलम्बित हो।"

हरि—"समाहित हो माधव! हमें झगड़ना न चाहिये। यह सचमुच बहुत अच्छा होगा, यदि हम अपने पेटकी सभी बातें खोलकर कहें। मैं अपनी भूलको स्वीकार करता हूं, भविष्यमें इसे भूल जाऊँगा कि मैं तुमसे पांच वर्ष बड़ा हूँ। मैं अपनी आशा और भय

दोनोंको उसी समय तुम पर प्रकट कर दूंगा, जिसी वक्त कि वह मेरे हृदयमें आवेंगी।"

मैं—"तो आप समझते हैं, कि शायद अमेरिकन हमें न मिलें।"

हरि—"नहीं, मुझे विश्वास है, कि वह जरूर आवेंगे, किन्तु यहाँ आशा सौ हिस्सेमें एक हिस्सा नहीं आनेके पक्षमें भी है। यही कारण है, कि मैं बराबर कोई और तदबीर ढूंढनेकी फिकरमें हूं।"

मैं—"छोटी नाव।"

हरि—"छोटी नाव ? तोन हम, उस पर रसद ! और फिर महान् अटलांटिकसे युद्ध ! और जबकि समीपतर भूमि सैकड़ों कोस दूर ! सोचो माधव, तुम्हें मालूम हो जायगा।"

मैं—"तो 'पुष्पक' ? बूढ़े मगेलूको उस पर डालकर ताला बन्द कर दो। भाप तय्यार करलो, लंगर उठा लो और इस मायाजालसे बाहर।"

हरि (मुस्कुराकर)—"प्रत्येक नौसैनिक अफसरको कुछ इंजीनियरिंग जानना लाजिमी है, किन्तु सौदागरी नाविक-अफ़सरके बारेमें यह बात नहीं है। हम तीनोंमेंसे किसीको भी इसका जरा भी ज्ञान नहीं है। फिर पुष्पकको इस भयानक गुफाके मुंहमें डाल देना कितना साहस है ?"

यह हरिकृष्णकी प्रकृति थी। आप उनसे बात कीजिये, उनके उत्तरमें सदा सारे ही पहलुओं पर विचार करनेका निष्कर्ष पाइयेगा। उन्होंने शान्तभावसे कहा—

"यद्यपि यह भयंकर साहस है, किन्तु इसका भी समय आयेगा। लेकिन अभी नहीं माधव, मेरे भाई, उस समय हम पंख जमा कर

उड़ेंगे। बीस वर्ष यहाँ बन्द होनेके लिये नहीं रहेंगे। किन्तु अभी वह नहीं। मेरी समझमें अमेरिकनोंको एक मास देना चाहिये; और इसी बीचमें ऋतु भी कुछ अनुकूल आ जाती है।"

आः! उन्हें इतना दृढ़, इतना परिस्थिति पर काबू वाला, इतना गम्भीर विचारक, इतना स्थिरसंकल्प, देखकर मुझे कितना आनन्द हुआ। इस सत्यताने मुझे बड़ी शान्ति, मानसिक सन्तोष प्रदान किया। मानों वह सर्वव्यापक हृदयद्रावक रहस्य एक बार मेरे सामनेसे मैदान छोड़ भागा। उन्होने मेरी आंखोंमें परिवर्त्तनके चिन्ह देखे, तब फिर कहा—

"यहाँ एक और भी प्रश्न है। क्या चुपचाप बैठे यहाँ प्रतीक्षा करनेके बदले, हमलोग कुछ और कर सकते हैं? देखो यह रहस्य हमारे साथ है, चौबीसो घण्टे साथ है। यह दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। मालूम होता है, यह एकदम हमारे ऊपर गिरकर हमको चूर चूर कर देना चाहता है। आधी रातको मैं जागता हूँ, उस समय, मैं समझता हूँ, यदि तुम पास न होते, तो शायद चिल्ला उठता। यही चित्तकी विलीनताका आरम्भ है। इसीने बेचारे भगेलूकी वह दशा की है।"

मुझे अब मालूम हुआ, कि हरिकृष्णकी भी आन्तरिक दशा मेरे सदृश ही थी, किन्तु उन्होंने उसको इतनी गम्भीरता-पूर्वक ग्रहण किया था, कि बाहर कुछ पता नहीं लग सकता था। मैंने तो समझा था, कि वह बिल्कुल अनभिज्ञ और बेपर्वाह हैं।

उन्होंने फिर कहा, "इसी वजहसे तो मैं समझता हूँ, कि

यदि एक पक्ष और हमलोग इसी प्रकार रहे, तो वह जादू हम पर असर किये बिना नहीं रहेगा।"

मैं—"क्या ? अपका अभिप्राय यह है, कि आप-हम, चलकर किसी कुंजीका पता लगावें ?

हरि—"हाँ यही। क्यों न ऐसा किया जाय ?"

यही बात मेरे दिमागमें भी चक्कर लगा रही थी, इसीलिये मैं हरिकृष्णके चुपचाप बैठकर प्रतीक्षा करनेपर अत्यन्त असन्तुष्ट हो गया था। मुझे यह आशा न थी, कि वह मुझसे सहमत होंगे। मैं अब उनकी मुँहकी ओर बड़ी उत्सुकता भरी दृष्टिसे देखने लगा।

हरि—"इस यात्राके लिये एक सप्ताह काफी है। यदि इस बीचमें अमेरिकन यहाँ आगये तो तब तक अपना खोजका भी काम करेंगे, और हम देख भालकर लौट भी आवेंगे।"

मैं हृदयसे इस प्रस्तावके पक्षमें था। मेरे दिलमें उस समय एक अभिमानकी हल्की लहरसी भी उठी। मैंने कहा—क्या हम भारत-सन्तान होकर चुपचाप बैठे रहें, और जो हमारे काम करनेका काम है उसे अमेरिकन कर लें। किन्तु खतरा, इसमें सन्देह नहीं, उतनाही हमारी राहमें भी था, जैसा अगलोंकी में।"

हरि—"हाँ ठीक है, भाई! किन्तु उसमें इतनी शक्ति नहीं है, कि तुमको या मुझे आगे बढ़नेसे रोक रक्खे। मैं पुर्तगीजोंकी शैतानवाली कहावत पर विश्वास नहीं करता। मेरा विचार है, कि यहाँ कोई और भी बड़ा भारी गर्त है, जिसमें धोखेसे सारे ही पुष्पकारोही जा पड़े। किन्तु हम भुक्तभोगी हैं। हमें हर बातका पद पद पर ख्याल रखना होगा। यदि इतनेपर भी विपत्ति आती है, तो

आने दो इस कायरता पूर्ण आत्मसमर्पणसे वह मृत्यु भी अच्छी होगी।"

"हाँ ! सचमुच हमें वैसी गल्ती नहीं करनी होगी।" अब चूँकि खुले दिलसे बात करनेकी प्रतिज्ञा कर ली थी। इसलिये कुछ देर और निस्संकोच भावसे महाप्रस्थानके प्रत्येक अंगपर वार्तालाप किया। और तब जाकर हमने अपना इरादा भगेलूसे कहा।

हमलोग जभी उसकी नज़रसे बाहर जाते थे, मालूम होता है, वह हमें भूल जायासा करता था। किन्तु यह अच्छा था, कि हमारे सन्मुख आतेही वह फिर वही प्रेममय व्यवहार करने लगता था। उसने अपनी रामकहानीके अनेक अंश दुहरा दुहरा कर कई बार कहे। उसे यह मालूम ही न होता था, कि उसने उन्हें पहिले कहा है। किन्तु उसके अतिरिक्त और कुछ जाननेके लिये किये गये हमारे सारे ही प्रश्न निष्फल हुए। उसने महाराज, जहाजके साथियों और पुराने दिनोंके विषयमें बहुतसा कहा, किन्तु पिछले बीस बरसोंके लिये उसकी स्मृति कोरी थी। जादूने उसके ऊपर वह सब बहुत पहले ही कर दिया था. जो कि वह हमारे ऊपर अब करने जा रहा था।

हरिकृष्णने उससे कहा—"महाराजसे मिलनेके लिये हम जाना चाहते हैं, तुम्हारी क्या राय है ? आज दोपरहके बाद हम इसी पर विचार कर रहे थे।"

भगेलूने इसपर बड़ी शान्तिपूर्वक विचार किया। फिर थोड़ी देरके बाद उसके चेहरेपर आनन्दकी आभासी प्रकाशित होती दीख पड़ी।

उसने कहा—"यह बहुतही स्तुत्य विचार है बाबू, मुझे निश्चय

है कि महाराज इससे बड़े प्रसन्न होंगे। आप शायद महाराजके बहुतसे नमूनोंका ले आनेमें मदद कर सकेंगे, मुझे डर है, अब तक उनके पास उनका एक बड़ा ढेर जमा हो गया होगा।"

हरि—"हाँ ठीक! किन्तु रास्ता बड़ा बीहड़ है, सम्भव है हम किसी दूसरी ओर निकल जाँय और महाराजको न पासकें। उनके ढूंढनेमें बहुत दिन लगें। इसके लिये हमें रसद साथ ले जानी होगी। कमसे कम एक सप्ताहके लिये हमें तय्यार होकर जाना चाहिए। क्या आप हमें इतने दिनोंका पाथेय साथ लेजानेकी आज्ञा देते हैं?"

थोड़ी देरतक मितव्ययिताने उसको मानों रोकदेनेकी कोशिश की। किन्तु अन्तमें उसने कहा—

"आपको बहुत ज्यादा नहीं लेजाना चाहिये, किन्तु आवश्यक सामग्री ले जानेमें तो कोई हर्ज नहीं, वह तो यहाँ भी रहने पर खर्च करनी ही पड़ती। आप बाबू, जितना चाहें उतना लेजाँय, मुझे पूरा भरोसा है कि, महाराज भी ऐसाही चाहेंगे।"

हरि—"तो ठीक। अब हम जहाजपर जाँये; वहाँसे यात्राकी आवश्यक वस्तुयें एकत्रित करें।"

इसके बाद हमारा दो घंटा चीजोंको एकत्रित करनेमें बीता। बूढ़े भगेलूको अनेक धन्यवाद है, कि उसने 'पुष्पक' पर सभी सामग्रियाँ उसी क्रमसे रहने दी थीं। सबकी सूची और स्थानको खोज पानेमें हमको देरी न हुई। हमलोग इसके लिये बड़े सावधान थे, कि उस चीजको न लें, जिसके बिना भी हमारा काम हो सकता है, और उसे छोड़ न जाँय जिसके बिना काममें बाधा पड़े। इसके लिये वलिष्ठ दो दिमागोंकी उपस्थिति बहुत अच्छी हुई। कितनीही बार हम हँस

पड़ते थे, जब उन चीजोंको हाथमें लेते थे, जिनके लेबिलपर, पटना, बनारस और आगराकी किसी दुकानका नाम पाते थे। हमारीही भाँति वह भी सुदूर उस सुनहरी भूमिसे आये थे, उनके भागमें भी यही बदा था, कि इस प्रकार बीस वर्ष पुष्पकपर बिताकर, फिर हमलोगोंके सहायक हों। सचमुच "दाना छितराना तहाँ जाना जरूर है।"

खाने पीनेकी चीजोंके अतिरिक्त हमने वहाँसे दो तमंचे और कई दर्जन कार्तूस भी जरूरतके वक्तके लिये लिये। सब चीजों को आसानीसे ले चलनेके लिये उन्हें स्वयंसेवकी झोलोंमें खूब ठीक तरहसे रख लिया। इन दो गठरियोंके अतिरिक्त एक गठरी कम्बलों की भी बनाई, क्योंकि रातको सोनेके लिये इनकी अवश्यकता होगी। यद्यपि शीत ऋतु बीत गई थी, किन्तु खुली जगहमें सोनेके लिये रात अब भी ठण्डी थी। यह सब बोझ इतना ही था, कि जिसे लेकर हम आगे बढ़ सकते थे। यद्यपि कहीं कहीं चढ़ाईमें शायद कुछ अधिक तकलीफ होगी, किन्तु इस ख्यालसे कि दिन पर दिन तो यह कम ही होता जायगा, हमने उसे और कम करनेकी अवश्यकता न समझी। हरिकृष्णने यह भी कहा—"यह आवश्यक नहीं कि सभी बोझ बराबर लादे ही फिरना होगा, मौका देख कर प्रत्येक दिन के विश्राम पर कुछ चीजें छोड़ते जायंगे, जिन्हें लौटते वक्त हम उपयोगमें लायेंगे।"

हमलोग अपनी गठरियोंको किनारे लाकर भगेलूके सामने परवानगीकेलिये ला रखे। यह भी तै पाया, कि सबेरे नाव पर चढ़ कर तीनों आदमी समुद्र के उत्तरी तट तक चलेंगे, वहाँसे हम

दोनों तो आगे बढ़ेंगे और भगेलू डेंगी लौटा ले आवेंगे। तब हमलोग बिल्कुल एक विचित्र दशामें अपने बिस्तरेपर सोने केलिये गये। मेरे दिलमें बड़ा जोश और बड़ा ही आनन्द मालूम हो रहा था।

दूसरे दिन सबेरे जब मैं जगा, तो उस समय इतना सबेरा था कि, अभी और सब सोये ही हुए थे। मैंने किसीको जगाया नहीं, चुपकेसे उठकर धोती और तौलिया उठाई और समुद्रमें जाकर स्नान कर आनेका इरादा किया। समुद्रपर अब भी वही नहूसत छाई हुई थी। आज इतने दिनोंके बाद मुझे पहाड़ियोंके शिखरोंके पिछले भागमें हल्कीसी पीली सूर्यप्रभा दिखलाई पड़ी। यह दृश्य मेरे लिये कितना आनन्दप्रद था, इसने मेरे हृदयमें एक प्रकारकी गर्मी पैदा कर दी। मैं आनन्दमें बेसुधकी तरह किनारे गया। इस स्नानमें यद्यपि कोई आनन्द न था। पानी मानो जमा हुआ था, उसमें हल्कीसी भी कोई लहर न थी। हवा बिल्कुल बन्द थी। मैं कपड़ोंको किनारे पर रख, अन्दर घुसा। छाती भर पानीके भीतर जाकर खड़ा हुआ। मैं ख्याल कर रहा था, कि पानी ठण्डा होगा, किन्तु मेरे आश्चर्यकी सीमा न रही, जब मैंने देखा कि वह खासा गर्म है।

इसमें कोई सन्देह नहीं। यह बात आश्चर्यकर और आनन्दकर दोनों ही मेरे लिये हुई। नहाते समय मुझे राजगृहके गर्मकुण्ड याद आने लगे। मुझे यह ख्याल कर और भी आश्चर्य होने लगा, कि मैंने कभी नहीं इसे इतना गर्म पाया था।

कुछ देरतक पानीकी उष्णता बड़ी भली मालूम होती थी

किन्तु, थोड़ी ही देरमें मुझे उसमें भी जादू दिखलाई देने लगा। मैं इसके कारण पर नाना भाँतिसे विचार करने लगा। मैंने सोचा, शायद यहांके पानीका यह स्वभाव ही हो। जब ज्वारकी लहरें आकर इसे भर देती हैं, उस समय यह गर्मी नहीं मालूम होती, किन्तु उनके हटते ही पानी फिर अपने रूपमें आजाता है। लेकिन इस कल्पनाको धीरे धीरे मैंने भयावना रूप धारण करते देखा, इसलिये वेशी इस पर विचारना ही छोड़ दिया।

जिस समयमें अपने बदनको मल रहा था, उसी समय मैंने एक और अद्भुत बात देखी। मुझसे कोई चालीस हाथ पर पानीमें मुझे हलचल जान पड़ी। फिर क्रमशः छोटे छोटे बहुतसे बुल-बुले पैदा और विलीन होने लगे। पहिले मेरे दिलमें ख्याल हुआ कि, शायद कोई मछली हो, किन्तु थोड़ी देरमें एक बहुत ही भारी बुल-बुला जलतलपर दिखलाई पड़ा। यह पहिले पहिल आदमीके शिरके बराबर था, किन्तु जैसे ही वह मेरी ओर आता था उसका आकार बढ़ता जाता था। मैं अपनी जगहसे हटकर अब घुटने भर पानीमें आगया था। मैंने उसे बढ़ते बढ़ते अपने पहिले आकारसे दश गुनाका हो जाते देखा। इसके बाद वह एकबयक फूट गया। मैंने देखा कि उसके भीतर कुछ न था। पीछे मुझे उसमेंसे एक प्रकारकी गन्ध जानपड़ी, जो कि बड़ी अरुचिकर थी। गन्धको तो मैंने जाना, किन्तु मुझे यह न मालूम हो सका, कि वह किसकी थी। अभी मैं इसपर कुछ ख्याल दौड़ा ही रहा था, कि मैंने पीछेसे आवाज आती सुनी। देखा तो हरिकृष्ण बंगलासे निकल आये हैं।

मैंने कहा—"पानी खासा गर्म है। क्या यह आश्चर्यकर नहीं

है ?" उन्होंने कुछ भी आश्चर्य न प्रकट करते हुए कहा—"वाह! इसमें क्या है। हमलोग चारो ओरसे इस प्रकार वन्द हैं। और शायद यहां गर्मसोता होगा।"

मैं—"दक्षिणी ध्रुवसे शायद ?"

हरि—"इसके लिये मत माधव! वालकी खाल निकालो। ठंडा होनेसे इसका गर्म होना ही अच्छा है। कितने ही आदमी इसे वहुत पसन्द करते हैं।"

इन बातों और आगेके कामोंके कारण मैं उस भयंकर बुलबुलेकी बात ही कहना भूल गया। इसके बाद हमलोग नाश्ते और रास्तेकी तय्यारीमें लग गये। एक घंटेके वाद हम यात्राके लिये विलकुल तय्यार हो गये। उस समय हमारा हृदय इतना हल्का था, कि, मानों किसी आमोद विहारके लिये ही जा रहे हैं। हम तीनों आदमी अब सामान लेकर डेंगी पर बैठे, और उस रहस्यपूर्ण उत्तरीतटकी ओर चले।

बूढ़ा मगेलू पूर्ववत् ही चुप और शान्त था। जैसे ही हम लोग विदा होंगे जरुर वह हमें भूल जायगा। और हमारे लौट आने ही पर स्मरण कर सकेगा। हमारे जाते ही उसकी फिर वही बीस वर्ष वाली जिन्दगी शुरू हो जायगी। जब हमलोग किनारे पर उतर गये। जब वह नाव लौटानेको हुआ उसी समय उसने कहा—

"वावू! कृपा करके एक बात मेरी ओरसे कहना न भूलियेगा। जब आप लोग महाराजसे मिलें, तो मुझे आशा है, आप अवश्य उन्हें समझा देंगे, कि वह जो वोट बह गये, उसमें बूढ़े मगेलूका कोई कसूर नहीं है। वह रातको चले गये, क्योंकि मैं मालिककी चीजोंके

पास सोया था। अगर दिनमें या मेरे सामने जाते, तो मैं कदापि न जाने देता। याद रहेगा न ?"

हरिकृष्णने उसे विश्वास दिलाते हुए कहा—"जरूर, हम अवश्य महाराजसे यह बात कहेंगे, जैसे ही उनसे मुलाकात हुई। हम कभी नहीं भूलेंगे। मैं तुमको यकीन दिलाता हूँ, कि महाराज उसके लिये तुम्हें कुछ भी नहीं कहेंगे। अच्छा वन्देमातरम् भगेलू बाबा।"

भगेलूने भी "वन्देमारम्" कहा, और अब वह नावको फेर कर, उसी एकान्त बंगलेकी ओर चला। जब हम उसको लौटते देख रहे थे उसी समय हरिने कहा—"माधव ! तुम समझते हो, कि वह हमारी जुदाईसे दुःखी हुआ होगा ?"

मैं—"नहीं"

हरि—"तो, खुश हुआ होगा ?

मैं—"नहीं, यह भी नहीं, तथापि—"

हरि—"हाँ। तथापि उसकी दृष्टिसे मालूम होता था, मानो, उसके सिरसे कोई बड़ा बोझा उतर गया है। बेचारा भगेलू ! हम लोगोंने आकर उसके कार्यक्रममें गड़बड़ी डाल दी थी। अब वह फिर उसी चिराभ्यस्त दिनचर्या का आश्रयण करेगा।"

हमारा मुंह अब अपने रास्तेकी ओर था। सारा ध्यान उसकी नीचाई ऊँचाई, और उससे गुजरे हुए यात्रियोंके विषयमें विचारनेमें लग गया। स्वयंसेवकी झोला एक कन्धे पर, और दूसरे पर कम्बल, सामने वह मृत्युका काला खोह था। उस समय समझदार जगत्का कोई आदमी हमें देखता तो क्या कहता ?

———

नवम अध्याय

महापथ।

जब हम गुप्तसमुद्र और द्वीपके उत्तरी तटके बीचके चट्टानों पर कोई सौगज बढ़े, तो उसकी भयंकरताको देख कर हमने उसे 'महापथ' कहना आरम्भ किया। शायद यह दूरी पांच मील भी न रही होगी, किन्तु, यहाँ यात्राकी कठिनाई दूरी पर अवलम्बित न थी, वल्कि मार्गकी अवस्थापर। उस महापथके वारेमें हरिकृष्णने कहा था—यहाँ भूमि है ही नहीं। भूमि न होने पर भी उन पाँच मीलोंने दस घण्टाका कठिन परिश्रम लिया।

शायद हमारी चाल असन्तोषजनक मालूम हो। किन्तु स्मरण करिये आप अपनी किसी पहाड़ी यात्राको—जैसे नैपाल जाते समय चन्द्रागढ़ीकी चढ़ाई। यदि पहाड़ी मामूली हुई तो, आप जरा देरमें सौ गज चढ़ जांयगे, किन्तु जो कहीं बीच बीचमें बड़े बड़े चट्टान हों, जिन पर कूदकर चढ़ न सकते हों; और आपको उनकी परिक्रमा करते हुए चढ़ना पड़ता हो। पैरके नीचेके ढोंके भी मिट्टीसे ढंके न हों, और हिलते हों। इस पर भी आपके झोलेमें बोस, पचीस सेरका बोझा तथा कन्धे पर मोटा कम्बल हो, तो ऐसी यात्रामें अवश्य आपकी आंखे निकल आवेंगी। उस समय फिर आप हमारी कठिनाइयोंको अनुभव कर सकेंगे। हमने अपने जीवन भरमें कभी ऐसी भयानक और कठिन यात्रा न की थी।

पहिले घंटे या उससे थोड़ी देर बाद तक तो मालूम हुआ, श्वास-रहित ढकेले जाते हुए, हमारी नसें पिसने और पिंडुली फटने लगी। हमने सोचा, कि यही हालत बराबर न रहेगी, कुछ ही देरमें हम इन चट्टानोंको पारकर किसी अच्छी जगह पर आवेंगे। किन्तु थोड़ी देरकी मिहन्तसे मालूम हो गया, कि यहां परिवर्तनकी आशा नहीं। तब हमने अपनी पागलोंकोसी चेष्टाको बदल दिया। अब बकरीके बच्चोंकासा चढ़ना हमने अहितकर समझा। अब हम एक वार अपने रास्तेका दृश्य अन्त तक देख कर, जितनी भी आसानी और सावधानीसे जा सकते थे, वैसे ही जाते थे। ऐसा करनेसे यद्यपि पहिले जैसे जल्दी नहीं जा सकते थे, किन्तु जाने लगे आसानीसे। इससे हम लोगों को जरा ढारस भी बंधी। दोपहर तक हमने अनुमान किया, सात मील चले आये होंगे। सात मीलकी चढ़ाई और दो मील और चलना, पूरे नौ मीलकी यात्रा, इसपर हमारा थका भूखा होना कोई बुरा न था। हमलोग वहीं बैठ गये, खजूर, टिकिया, नमकीन सेव, और शर्बतका अच्छा आनन्ददायक भोजन हुआ। सौभाग्यसे इस महापथपर जगह जगह गड्ढोंमें हमें पानी मिलता जाता था, यद्यपि हमने भीं अपनी छोटी कानविसकी मशक पानीसे भर ली थी।

मैं—"मुझे तअज्जुब नहीं होना, कि क्यों विचारे रामकुमारने अपनी घुट्ठी तोड़ डाली।"

हरि—"और फिर उसने फिरकर इस रास्तेपर पैर नहीं रक्खा। वही बात रामप्रसादने भी की, याद है न? सचमुच वह बड़े होशियार आदमी थे।"

मैं—"मैंने सोचा था, कि यहां दूसरे मुसाफिरोंका कुछ पता-निशान मिलेगा, किन्तु वह कहाँसे हो सकता है। वीस बर्षका लम्बा अर्सा तिसपर भी इस अक्षांशकी कड़ी वृष्टि ,भला इनके हाथसे कैसे कोई चिन्ह बाकी बच सकता था।

हरि—"कैसी वीरान, कैसी हृदयविदारक यह जगह है ! पम्पासरके पासकी पहाड़ियोंके विषयमें तो कहते हैं, सुग्रीव और वालिने चट्टान फेंककर लड़ाई की थी और उसीकी पहाड़ी बन गई। किन्तु यहाँ ?"

मैं—"यहाँ मैं समझता हूं, वह भयंकर खिलाड़ी ज्वालामुखी रहा है।"

हरि—"निस्सन्देह, यह टापू एक ज्वालामुखीका शिखर है। 'रेतीली खाड़ी' और 'गुप्तसमुद्र' उसके दोनों क्रेटर (मुख-विवर) थे। इसकी फुंफकारसे निकले.—यह गले पत्थर यहां इर्द गिर्द जमे हुए हैं, अथवा यह किसी पुरानी चोटी के टुकड़े हैं, जो ज्वालामुखीसे भी पूर्व यहां रही होगी, और जिसके अन्दर खड़ी सुरङ्ग बना ज्वालामुखीने अपने अस्तित्वकी दुन्दुभी बजाई। सहस्रों वर्षोंके तूफान, वर्षा, और धूपने इन्हें बहुत ही जीर्ण-शीर्ण कर दिया है, तो भी यहां अभी उनका बहुत अंश बाकी है। कुछ सहस्राब्दियोंके और बीत जाने पर, यह घुलकर एक प्रकारके मिट्टीके रूपमें परिणत हो जांयगे, जो वनस्पतिके लिये बड़ी उपकारक होगी।

मैं—"हां ! ठीक, अब ज्वालामुखी भी सुप्त ही नहीं मृत है"।

हरि—"मैं भी यही कहूंगा, क्योंकि इसके सबसे अन्तिम प्रकोप को हुए दस हजार वर्ष बीत गये होंगे। जानते हो, अटलांटिकमें

ज्वालामुखीय द्वीपोंकी एक माला है, जो यथार्थमें किसी समय पर्वतोंके शिखर थे। उनमें नीचेकी ओरके सारे सुप्त हैं, किन्तु ऊपर उष्णकटिवन्धवालोंमेंसे कितने ही अब भी जीवित-उग्र-हैं।

"गुप्तसमुद्रका पानी आज सुवह गर्म था"—मैंने कहना आरम्भ किया, किन्तु हरिकृष्णने मुस्कराकर कहा—

"यह कोई असाधारण बात नहीं है, 'त्रिस्त्रा-दो-अकुन्' में एक झील है, जिसका पानी कभी नहीं जमता, यद्यपि वह बहुत ऊंची हिमरेखापर है। जबसे इन टापुओंका पता लगा, बल्कि उससेभी हजारों वर्ष पूर्वसे इधर कोई भी जागृत ज्वालामुखी नहीं दिखाई पड़ा।"

बहुत समय नहीं बीता कि मुझे इसके लिये पर्याप्त प्रमाण मिल गया, कि हरिकृष्ण यहां गलती पर थे। इतना पीछे तक कि १८६३, विक्रमी में इधर एक पनडुब्बे ज्वालामुखीके जागृत होनेका वर्णन प्रामाणिकताके साथ आप 'अटलांटिक नाविक' में पायेंगे। उससे अनभिज्ञ होनेके कारण मैंने केवल तर्कके लिये कहा—

"इन्द्रायुध परके एक आदमीने जो एक दिन कहा था, कि उसने आकाशमें एक लौ देखी। हमलोगोंके इस द्वीपमें पहुंचनेसे थोड़ा ही पहले।"

हरि—"अरे वह भांगकी लहर थी, मैंने कहा नहीं ? जाने दो।"

इसी ससय मेरे दिलमें उस भीमकाय बुलबुलेकी बात भी आई, किन्तु मैं अब भी उसे न कह सका, और इसके बाद उसको जानकारी भी व्यर्थ थी।

उसी तरह चलते ही, सायंकालको हम उस बड़ी पहाड़ी

दीवारकी जड़में आगये, जो कि टापूकी उत्तरी सीमा थी। इसी भीमकाय चहारदीवारीके उस पार समुद्र था। जब हमने दाहिने और बाएंसे उसपर गौर करके देखा तो, वहां कोई भी उपाय फाँदनेका न था। बहुत सी जगहों पर तो वह सीधी खड़ी थी, और जहां कुछ तिर्छाई भी लिये हुए थी, वहाँ भी दस ही पाँच कदमका रास्ता था, उसके बाद फिर वही अलंघ्यता। उस समय मेरी दशा बड़ी निराशाजनक थी। मैं एकबार दिलमे उस ख्यालको हटाकर दीवार के चारों ओर देखने लगा।"

हरि—"आज अब हमें इसके सामने ही सो जाना होगा। सम्भव है प्रातःकालकी किरणें किसी नयी बातपर प्रकाश डालें। मेरी समझमें हमें जरा और पच्छिम ओर खिसक जाना चाहिये, वहां अधिक टूट फूट दिखाई देती है। रात्रि विश्रामके लिये कोई सायादार, आड़की जगह हो तो अच्छा है।"

इसके अनुसार ही, हमलोग पच्छिम ओर बढ़ चले, यद्यपि हम दिनभरके थके थे किन्तु हमैं अपनी मंजिल सामने दिखाई पड़ती थी। इसलिये इस अन्तिम घड़ीमें हमैं वैसी कठिनाई नहीं मालूम हुई, जैसीकी सुबहसे जान पड़ी थी। बल्कि इधरका रास्ता भी बहुत कुछ अच्छा था।

मैंने ही पहिले पहिल विश्राम-स्थानको ढूंढ़ निकाला, किन्तु मुझे उसके आगे की कुछ खबर न थी। वहाँ हमें कुछ ऊपरकी ओर चालीसफीट चढ़कर एक टीलेपरसे जाना पड़ा, वहाँ एक चबूतरा सा मालूम हुआ। हमारा रास्ता एक पानीका रास्ता था, और चबूतरा पहाड़ीसे गिरी चट्टानें थीं, जो समय और ऋतुके प्रभावसे

चबूतरेकी तरह बन गई थी । जिस वक्त मैं आगे आगे चबूतरेकी ओर चल रहा था, तो मैंने मालूम किया कि वहाँ पर चबूतरेकी दीवार कुछ भीतरकी ओर घुस गई है। मैंने समझा—हमारे विश्रामके लिये यह अच्छी सायादार जगह होगी, किन्तु, मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, जब कि ऊपर चढ़कर मैंने देखा, कि दीवार मेरे अनुमानसे कहीं ज्यादा पीछेकी ओर घुसगई है। मैं आखिरपर पहुंच कर चिल्ला उठा—

"गुफा, गुफा।"

निस्सन्देह यह एक गुफा थी, किन्तु यह एक ऐसी गुफा थी, कि जिसका मुंह बहुत कुछ उन चट्टानोंसे ढँक गया था, जो हजारों वर्षोंसे, पहाड़ीसे गिर रहे थे। चबूतरेसे गुफाका तल थोड़ा नीचे था। थोड़ी देरमें हरिकृष्ण मेरी बगलमें आ खड़े हुए, हम दोनोंने अन्धेरेमें झाँका। अन्तमें उन्होंने कहा—

"अच्छा यह विश्रामके लिये बहुत सुन्दर जगह है, पानी, छाया, और प्रातःकाल कुछ करने देखनेके लिये भी। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है, माधव! कि समुद्र तक पहुंचनेके लिये यही एक मात्र रास्ता है।"

मैंने कान लगाकर कहा—"मैं तो इधरसे कुछ नहीं सुनता हूं।"

हरि—"सो कैसे सम्भव है? शायद वह एक मील दूर हो। लेकिन मुझे तअज्जुब है;"

मैं—"बहुत ठीक?"

हरि—"कि शायद यह वही गुफा है, जिसका ज़िक्र कप्तानने किया है, और पुर्तगीजोंकी कहावतोंमें भी है।"

मैं—"शैतानकी गुफा ? आः ! आओ भी।"

हरि—"हाँ, क्यों नहीं। किन्तु कुछ भी हो, शैतान महाराजको हम सवेरेतक कोई तकलीफ न देंगे, जिसमें कि वह हमारे ऊपर आँख गड़ावें। अब यहाँ एक रात, विश्राम करो, फिर कल देखा जायगा।"

आग तय्यार कर रखनेका वहाँ हमारे पास कोई सामान न था, और उसकी अवश्यकता भी न थी। रातको हवाका नाम न था। मैंने तीन मोमवत्तियाँ निकालकर जलाई और उन्हें गुफाके द्वार पत्थरके किनारे पर चिपकाकर रख दिया। हवामें गति न होनेसे टेम सीधी ऊपरको जा रही थी, लेकिन हरिकृष्णने तुरन्त ही दोको मुंहसे फूंककर बुझा दिया—

"तुम बेवकूफ लड़के हो माधव! हमैं गुफामें जाने और लौटनेके लिये इनकी बड़ी अवश्यकता होगी। तुम्हें पता है, वहाँ कितनी वत्तियाँ लगेंगी ? इस सन्नाटेमें एकही तीनके बराबर वलेगी। जवतक यह बुझेगी तबतक हम गाढ़ निद्रामें पहुंच गये रहेंगे। अच्छा अब खानेका डीलडौल करो।

हमने दीवारकी जड़में थोड़ी जगह कम्बलसे झाड़ झूड़कर साफ करली, और फिर वहीं कम्बल बिछा दिये। डट कर आनन्दपूर्वक भोजन हुआ, इतनेहीमें खूब अन्धेरा-धुप हो गया। हमलोग वहीं कम्बलपर पैर फैलाकर लेट रहे। दिनभर की चढ़ाई उतराईमें हमारी एक एक नसमें मानो हजार हजार फोड़े हो गये थे, अथवा किसीने मुंगरी लेकर सारे बदनको खूब कूँच दिया था। यदि हम इतने थके न

होते, जिसके कारणही नींद हमारे पहुंचनेसे पहिले ही वहाँ आकर मौका ताक रही थी, तो मैं समझता हूं, उस भयानक अज्ञात गुफा और उसके निवासोका ख्याल आये विना न रहता। हरिकृष्णने सोते समय कहा—"माधव, भगेलूको देखा न !"

मैं—"हाँ तो ?"

हरि—"ख्याल किया, कितनो खबरदारी वह अपने सोनेके कमरेकी, जिसमें कि महाराजके नमूने रक्खे हैं, रखता था ? उसने सिर्फ एकवार हमलोगोंको वहाँ लेजाकर दिखाया था।"

मैं—"हाँ, वह बूढ़ा बड़ाही विचित्र आदमी है।"

हरिकृष्णने इसपर कुछ बुर्वराया, फिर तुरन्तही मैंने देखा, कि वह खर्राटा लेने लगे। इसके बाद मैंने उन्हींका अनुकरण करना विचारा। इस वीचमें एकवार मेरा ख्याल घरको दौड़ गया, जहाँ मुझे अपने विद्यार्थीजीवनकी घटनायें सामने आने लगीं। इसके वाद बीच हीमें मैं निद्रामग्न होगया, किन्तु वह ख्याल अब स्वप्नके रूपमें परिणत हो गये। भिनसहरेके समय स्वप्नमें देख रहा हूं, कि मैं सवेरे छात्रावाससे उठकर नालन्दाके विद्यालयके क्रीड़ाक्षेत्रमें बैठा हूँ। सूर्यकी लाली पूर्वदिशामें छिटक रही थी! गर्मीकी ऋतुमें हवाके ठण्डे ठण्डे झोंके बहुत भले मालूम होते थे। मैं इन्तजार कर रहा था, मोहनके आनेका। उसे देर करते देखकर मैं मन ही मन उसको कुछ कड़वो मीठी कह रहा था। उसी समय मेरे कानमें उसके स्नेहपूर्ण शब्द आये—

"माधव, हो !"

मैं नहीं कह सकता, स्वप्नमें मैंने इसे कितनीबार सुना। किन्तु उसी समय मेरी निद्रा खुल गई। इसकेलिये मुझे खेद हुआ। देखता हूं, अब दिनका उजाला हो गया है, मोमबत्ती खतम होगई है। मुझे उसवक्त कुछ भी ठण्डक नहीं मालूम होती थी। मैंने एकबार अपनी आँखोंको मला और अंगड़ाई ली—

"माधव! हो!"

फिर वही शब्द मेरे कानमें आये। मैं हैरानमें पड़ गया, क्या अबभी स्वप्नही देख रहा हूँ? मेरा ज़बड़ा नीचेको गिर गया। मेरे कानोंमें अबभी वही शब्द गूँज रहे थे। एक मिनट हो गया, दो-तीन मिनट हो गये—अबकी फिर एकवार वही शब्द स्पष्ट कानोंमें सुनाई दिया। अब मेरी तबियत घबराने लगी। सारे वदन पर रोमांच हो गये, मानों एक ठण्डी हवाका झोंकासा मेरे शरीरमें लग गया है।

दशम अध्याय

मुर्दोंकी गुफा।

"क्या है माधव ?"

हरिकृष्णने पूछा। वह मेरी चेष्टाको कितनीही देरसे देख रहे थे। मैंने सावधानीसे अपने पैरोंके बल बैठनेकी कोशिशकी, और काँपते स्वर में कहा—

मैं—"मैंने इसे सुना।"

हरि—" क्या सुना ?"

इस शान्तप्रश्नने एकवार मेरे विकीर्ण विचारोंको एकत्रित करने में सहायताकी। मैंने एकवार शिर उठाकर चारों ओर नज़र डाली। क्या मैं सचमुच स्वप्न देख रहा था ?

मैं—"मैंने सुना जैसे कोई मुझे पुकार रहा है।"

हरिकृष्ण खड़े होगये और बोले—"वह यही गुफा है, निस्सन्देह यह प्रति शब्दोंसे भरी है। हवा, समुद्र, गिरते हुए पत्थर सभी की प्रतिध्वनियाँ इसमें भरी हैं। मैंने भी रातमें कई वार उन्हें सुनते हुए अनुभव किया।"

मैं ठकुआ गया। मेरे होश इक दम उड़ गये। मेरे कानोंमें अब भी वह शब्द ज्योंका त्यों भरा था।

मैं—"वह सर्वथा वास्तविक था। जब मैं बिल्कुल जागकर उठ बैठा था, तब मैंने उसे सुना। वह मेरे एक बालमित्रकी थी।"

हरि—"ठीक, किन्तु स्वप्नभी बाज वक्त बड़े विचित्र रूपमें आते हैं, नहीं मालूम ? अच्छा अब चलो चलें उस गड्ढ़ेपर, वहाँ शौच से निवृत्त हो 'स्टोव' जलाकर थोड़ा गर्म दूध और नाश्ता तय्यार करें, फिर तब बात करेंगे।"

कम्बलोंको चौपेतकर अब हम पानीके किनारे गये। वहाँसे हमें कलके रास्तेका कुछ भाग दिखाई दिया। हमलोगोंने एकबार नजर फैलाकर उधर देखा। कलके परिश्रमपर हमें कुछ सन्तोष और हिम्मत हुई। मुझे अब ख्याल हुआ, कि मैंने सचमुच मोहनकी आवाज नहीं सुनी। रातको सोते समय जो ख्याल किया था, ज्ञात होता है, उसे ही मैं स्वप्नमें देखने लगा। इसी बीचमें कोई अस्पष्ट शब्द गुफासे मेरे कानोंमे आई होगी, जो मुझे मोहनकी आवाज मालूम हुई। बहुत दिनोंसे प्यारे मोहनको मैंने नहीं देखा। मेरी तबियत उसे बहुत मिलनेको कर रही है सही, किन्तु यहां कहाँ उस की सम्भावना ? सचमुच, कैसा अच्छा होता, जो इस समय मोहन हमारे साथ होता ! उसे इस यात्रासे बड़ा आनन्द आता !

जबखाने बैठे, तो मैंने सब बात कही। कैसे हम स्कूलमें रहते थे ! कैसे जब हमदोनों छोटे छोटे थे, तो अपने गाँवके तालाबके किनारे खेलने चले जाते थे। कभी कभी आँख मिचौनी खेलते खेलते हमें बड़ी देर हो जाती थी, तो किस प्रकार कमला मेरी बहिन, और मोहनके पिता हमें पकड़कर ले जाते थे। मोहनके पिता कहते थे, जो फिर इस तरह देखा, तो बच्चू ! कान उखाड़ लेंगे। किस तरह जब हम पढ़ रहे थे, तभी हमें कामकी ओर आनेकी अवश्यकता हुई। किसप्रकार हमदोनों कलकत्तामें, जहाजके काममें भरती हुए।

जहाँसे हमारा 'इन्द्रायुध' तो ब्राजील और अर्जण्टाईनकी ओर आया, और उसका जहाज अष्ट्रेलियाको । आः ! कितना मैं दुखी हुआ था, जब हम दोनों एक दूसरेसे अलग हुए ।

हरि—"हाँ मालूम हुआ, कैसे तुम दोनों बैठ बैठ कर खेला करते और तरह तरहके स्वप्न देखा करते थे । अन्तमें जीवनकी बाढ़ आई, उसने तुम दोनोंको वहाकर समुद्रमें पटक दिया। कभी वह भी दिन आवेगा, जब फिर तुमको यहाँसे निकालकर किनारे पहुंचा देगी। अभी क्या होगा कौन जानता है ?"

मैं हरिकृष्णके मुंहकी ओर देखने लगा। उन्होंने हँसकर कहा—

"क्या है ? मेरे ख्याल भी उसीप्रकार दूर दूरका सफर कर रहे थे, जैसे तुम्हारे । मैं तुमसे उसे छिपाना नहीं चाहता माधव ! मेरे दोस्त ! मेरे हृदयमें बराबर एक व्यक्ति बस रहा है, किन्तु यह पुराने दिनोंका कोई वालमित्र नहीं है। हाँ ! य—वह एक लड़की है, जिसे मैंने एकवार और सिर्फ एकवार अपनी जिन्दगीमें देखा है, यहाँ तक कि उसका नाम तक भी मुझे मालूम नहीं ।"

मैं—"क्या ? एक लड़की ?"

हरि—"हां, प्यारे माधव ! एक लड़की । सुनो मैं उसीके वारेमें कहने जा रहा हूं । तुम्हें मालूम है न, मैं मुम्बासा 'इन्द्रायुध' में सवार हुआ। पहिले मैं कलकत्ताके 'तिलक'में काम करता था। मुझे कलकत्ता छोड़े छै मास हो गये। उसी समय मैं एक दिन अपने जहाजके मालिककी कोठी पर धर्मतला गया। किन्तु वहाँ मालूम हुआ कि सेठ इस समय अपने घर पर तुलापट्टीमें आनेको कह गये हैं। मैं जब उनके घर पर पहुंचा, तो सभी

सेठजी भोजन कर रहे थे, इस लिये मुझे थोड़ी देर बैठ जाना पड़ा। मुझे ख्याल है, वहां एक लड़की थी। उसने मुझे बड़े आदरसे कुर्सी बैठनेके लिये ला दी, तथा समय अच्छी तरह बितानेके लिये 'भारतमित्र' की एक प्रति भी ला दी। उसने यह कार्य इतनी खूबी से किया, तथा वह इतनी स्वच्छ, सुन्दर और मधुर थी, कि जिस समय वह वहां से हट कर दूसरे कमरे में चली गई, जहां कि वह सेठजी की बालिकाको पढ़ा रही थी, तो मेरा चित्त समाचारपत्रकी ओर न जाकर उसी की ओर जाने लगा। उस दिनके बाद, जब कभी भी मैं अपने कामसे छुट्टी पाता हूं, तो एकान्तमें अवश्य मुझे उस युवतीका ध्यान आता है। अब भी जब कि मैं सो गया था, तो मेरे सामने उसकी वही मनोहारिणी मूर्ति आविर्भूत हुई। उसके वही मधुर बर्ताव अब भी थे। मैं इसी आनन्द में मग्न था, किन्तु इसी बीचमें मेरी निद्रा खुल गई।"

मैं—"हाँ! यह एक बड़ी मनोहर कथा है। क्या आप फिर भी उससे मिल सकेंगे? अच्छा, उस कोठी का नाम क्या था?"

हरि—"लक्ष्मीशंकर माधवदास। हाँ, मुझे आशा है, कि मैं फिर उसे देख सकूंगा। किन्तु उसके वहां बराबर रहने में सन्देह है। शायद उसे कोई उससे भी अच्छी जगह मिल गई, तो वह वहां चली जायेगी।"

मैं—"उसकी सूरत कैसी थी?"

हरि—"पतली, मेरे कन्धेके बराबर होगी। बड़ी २ आँखें और काले लम्बे बाल। उसके नेत्र, ललाट और नाक बिल्कुल तुम्हारे ही सदृश थे, यही कारण है, कि बहुधा तुम्हें देखते हुए मेरा चित्त उसकी

ओर चला जाता है। उसका स्वर कोमल और साफ था। उसकी मुस्कुराहट मधुर और अकृत्रिम थी। वह आपादचूड़ एक देवी थी।"

मैं—"उँह! यह सभी लक्षण अस्पष्ट हैं। क्या वह अच्छे कपड़े पहिने थी? उसके शरीर पर आभूषण थे?'

हरि—"यद्यपि उसके कपड़े बहुत स्वच्छ थे, किन्तु उनमें कोई तड़क भड़क न थी। हाँ! मैं भूल गया, उसके गलेमें एक चार अशर्फियोंकी हमेल थी। मुझे खूब ख्याल है, वह अशर्फ़ियां अकबरशाही थीं।"

मैं—'बस बस मालूम हो गया। वह चारों अशर्फियाँ मेरी प्यारी माताने मेरी बहिन को दी थीं। कमला मेरी बहन उसको प्राणके समान रखती है। जब मैंने एक दिन उसे उनके कंठे जुड़वा कर पहिने हुए देखा, तो मैंने कहा भी,—बहिन अब यह तेरी खास पहिचान होगी। मेरी बहिन कितने ही दिनोंसे सेठ लक्ष्मीनारायणकी कन्याओंको पढ़ाती है। मेरी ही शिक्षा दीक्षाके लिये उसने यह नौकरी कर ली थी। सेठजी मेरे पिताके तभीसे बड़े मित्र थे, जबकि वह कलकत्तामें एक समाचारपत्रके सम्पादक थे। वह कमलाको अपनी कन्याओंके समान ही मानते हैं। सचमुच हरि! वह ऐसी रूप-गुण-सम्पन्ना है। मैं और वह दोनों अपनी माँको पड़े हैं।"

हरिने बड़े ही आश्चर्यके साथ कहा—"सच? ऐसा माधव!"

मैं—"यदि फिर भी हम 'इन्द्रायुध'पर जा सके, तो मैं तुम्हें उसके पत्र दिखाऊँगा।"

हरि—"धन्य सुयोग! तुम्हारे कोठीका नाम पूछते हो, मुझे सन्देह होने लगा था, कि शायद तुम्हें कुछ पता है।"

हमारी बात यहीं समाप्त हुई। अब हम लोग नाश्ता करके तय्यार हो गये थे। मैंने देखा, कि हरि कितनी ही वार मेरी ओर आश्चर्य भरी निगाहसे देखता था। अब हमारे सन्मुख गुफामें प्रवेश करनेका सवाल था। हमारे दोनोंमेंसे किसीके भी दिमागमें, यह साफ नहीं मालूम होता था, कि क्यों हम उसके अन्दर जानेका इरादा करते हैं। शायद हमारे दिमागोंने यह चकमा खाया था, कि उसपार समुद्रमें हमारी प्रतीक्षामें कोई जहाज खड़ा है। हमने यद्यपि अपने इस भावको एक दूसरे पर प्रकट नहीं किया, किन्तु बिना कहे ही हुए हमने यह दिलमें पक्का कर लिया, कि गुफाको पार करना होगा बड़ी सावधानी और दृढतासे। शैतानवाली पुर्तगीजों की पुरानी किम्वदन्ती अब भी हमारे दिमागमें गूंज रही थी। हम लोग चबूतरे पर चढ़ गये, फिर वहांसे शनैः शनैः गुफाके भीतर उतरे।

यह एक रास्ता था, जो दिनकी गर्मी और प्रकाशसे अनन्त रात्रिके अन्धकार और जादूकी ओर ले जाता था। कोई तीस चालीस गज तक दिनके उजालेने अपने छोटेसे छोटे रूपमें हमारा अनुसरण किया। इससे वियुक्त होते ही हमारे दिलने न जाने कैसा सा महसूस किया। चलनेमें फर्श ऊमड़-खाभड़ और खुर-खुरा जान पड़ा। हरिने खड़ा होकर कहा—'अब हमें रोशनीकी जरुरत है, नहीं तो आगे बढ़नेमें खतरा है। अगर मशाल होते, तो इस समय अच्छा होता। देखो न अन्धेरा कितना गाढा है? मोमवत्ती यहांके लिये

बहुत दुर्बल है। अच्छा तो वत्ती एक साथ जलाओ। इन्हें एक हाथमें उठाये ले चलो। जब तुम्हारा हाथ थकने लगे तो कहना, फिर मेरी वारी आवेगी।

तव हम लोग धीरे धीरे आगे बढ़ेंगे। रोशनी सचमुच धीमी थी, किन्तु हमलोग बहुत ही पास पास चल रहे थे। थोड़ो ही दूर आगे चलनेके बाद मुझे अपने इस प्रयत्न पर आश्चर्य होने लगा। मैं कौनसी मूर्खतामें पड़ गया हूँ ? मैं क्यों इस प्रकार अपने समय और शक्तिको बर्वाद कर रहा हूँ ? हमको अन्तमें अपने किये पर पछताना होगा।

गुफाका दृश्य—एक आश्चर्यंकर जादू भरा दृश्य है। मेरे दिलमें इस प्रकारके भाव उठने शुरू हुए, किन्तु पहिले ही दस मिनटों के बाद वह सभी विलीन हुये। अब हमें उस अर्द्ध अंधकारमें कभी खिसकना कभी आगे पीछे चलना, कभी एक पंक्तिमें कदम बढ़ाना पड़ता था। कभी हमारी बगलमें गुफाकी दीवार होती थी और कभी पानीका रास्ता, जो अब सूखा था। कभी हम छोटे छोटे पत्थरों पर चलते थे; और कभी घुट्टी डूबने भर बालूपर जो कि शायद समुद्रके किनारेका सा था। बीच बीचमें हरिकृष्ण किसी किसी पत्थरकी ओर झुककर देखने लगते थे किन्तु मैं बराबर अपने ध्यानको मोमबत्ती और अपने पैरों ही पर रखता था। सन्नाटेका आधिक्य इतना था, चारों ओरके अन्धकारका ख्याल इतना डरावना था, कि आखिरकार मैं डरने लगा। हाँ। सच मुच मैं डरने लगा। मैं इसकेलिये लज्जित नहीं हूँ।

यही कारण था कि मैंने बात-चीत करना आरम्भ किया,

जिसमें कि मेरे ऊपरसे भयका प्रभाव कम हो जाय। यद्यपि हरि-कृष्ण मेरे साथ छायामें चल रहे थे, किन्तु उन्हें बातकरनेकी इच्छा नहीं थी। मैंने पूछा—

"आपको उम्मीद है, कि कोई और भी कभी इस गुफासे आया होगा ? कोई चिन्ह आपको इसका मिला ?"

मैं अपने शब्दोंकी प्रतिध्वनि सुन कर भौंचकसा हो गया। मालूम होता था, उसने मीलों तक तार बाँध दिया है।

हरिकृष्णने शिर थाम कर कहा—"ऐसा सम्भव नहीं प्रतीत होता।"

यह मनुष्यके हाथकी रचना नहीं है। निस्सन्देह, किसी ज्वाला-मुखीय हलचलने इसका निर्माण किया है। यह एक सुप्त ज्वाला-मुखीकी एक नाड़ी है। हमलोग एक महान् अग्नेय-पहाड़की खोखड़ में घूम रहे हैं।

हमलोग थोड़ा और आगे बढ़े। अब भी हम वैसे ही अन्दरकी ओर जा रहे थे, गुफाकी बनावटमें भी हमें कोई परिवर्तन नहीं जान पड़ा। यहाँ चौड़ाई बहुत ज्यादा थी, अब हम बीचमें चल रहे थे। नजर डालने पर हमें अगल बगलकी दीवारें दिखाई पड़ती थीं, और छत इतने ऊंचे पर थी कि अन्धकारसे हम उसे पृथक् नहीं कर सकते थे, किन्तु एक बात सन्तोषजनक थी, हवा यहाँ पर्याप्त थी। यद्यपि कहीं कहीं इसमें कुछ भारीपन था, किन्तु साधारणतया वायुमंडल शुद्ध था। वायु दोनों ही छोरोंसे आती मालूम होती थी, जिसमें समुद्रकी ओरसे इसकी गति स्पष्टतर थी।

हम इस घने अन्धकारमें बीस मिनट तक चलते रहे। अभी तक

कुछ भी न दिखाई पड़ा। हरिकृष्णने अनेक वार पत्थरों, और पैरके नीचेसे बालुओंको लेकर परीक्षा की, तो भी वहाँ विचारणीय कोई बात न थी। यकायक हमारे हृदयों पर धक्कासा लगा, हममें से एकने किसी चीजको ठुकराया, जिसकी आवाज किसी धातुकी पत्थरसे टकरानेसी मालूम हुई। मेरे दिलमें इसके लिये बहुत ख्याल न था, किन्तु हरिने कहा—

"ठहरो!"

मैं यकदम खड़ा हो गया। हरिने कहा—

"हटना मत, मालूम होता है तुमने कुछ गिरा दिया।"

मैं—"नहीं तो, शायद किसी चीजको ठुकराया है।"

तब वह फर्शपर ढूंढने लगे, मैं खड़ा हो प्रकाश दिखलाने लगा। वहाँ कुछ भी चमकीला, अथवा फौलादकी तरह नीला दिखलाई दिया। किन्तु ठीक उसी समय हरिने कोई चीज उठा ली।

हम दोनों आदमी उसपर झुककर देखने लगे,पहिली दृष्टिमें हमें न पहचान मिला कि वह क्या चीज है। यह भूरे रंगकी पतली स्वस्तिकके आकारकी कोई चीज थी, किन्तु, जब हमने गौर करके देखा, तो हमें वास्तविकताका पता लगे बिना न रहा। यह एक प्राचीन छूरा था, जिसकी मूंठपर तलवारकी भाँति कब्जा लगा हुआ था। इसके फलका बहुत भाग मुर्चा लगकर गल गया था, इसलिये और भी इसके पहिचाननेमें दिक्कत थी।

मैंने हरिकृष्णके हाथको, जिसपर वह चीज थी, देखा, कि हिल रहा है। यहां एक सच्चा साक्षी मिला। हमको पता लगा कि हम ही अकेले इस गुफाके पता लगाने वाले नहीं हैं, किसी औरने भी हमसे

बहुत पहिले इसमें कदम रक्खा था। हम अब एक दूसरेकी ओर देखने लगे।

मैं—"मालूम होता है किसी नाविकका छूरा है।"

हरि—"हाँ, या पुराने समयके किसी सैनिककी तलवार है। इन दोनोंमेंसे कोई एक चीज अवश्य है, और यह यहाँ शताब्दियोंसे पड़ी है।"

मैं—"हैं, शताब्दियों से?"

हरि—"क्यों नहीं? देखो इसकी अवस्थाको। यह जगह सर्वथा शुष्क है, यहां सीड नहीं है। ओह! यह अवश्य शताब्दियों से पड़ी पड़ी, माधव, यहां हमारी बाट जोह रही थी।"

मैं इसपर हँस पड़ा। थोड़ी देर तक और हम उसको देखते रहे, किन्तु वहाँ और किसी बातका पता न था। उन्होंने कहा—

"हमलोग, साफ करके, इसकी परीक्षा करेंगे, किसी वक्त। उसे हरिने अपने पाकेटके हवाले किया, और यात्रा फिर शुरू हुई।

यद्यपि चकू हमसे कुछ न बोला, किन्तु इसने हमारे ऊपर एक खास प्रभाव डाला। अगर हम इसे पाये न होते, तो शायद बहुत आगे न बढ़ सके होते, किन्तु जब हमने कोई चीज पाई तो हमें आशा होने लगी, कि आगे शायद और भी कुछ मिलें। अब एक नई उत्सुकता और नई उमंगसे आगे बढ़ने लगे। मैंने देखा, कि मेरी मानसिक कठिनाइयाँ आतंक और सन्देह सब न जाने कहाँ चले गये। अब पीछेके ख्यालकी जगह हमारे चित्तमें आगेका ख्याल आने लगा। अब दूसरी वार हमें क्या मिलेगा?

इसी अवस्थामें जब हम आगे बढ़ रहे थे, तो हमारी यात्रा का एक विशेष स्थान हमारे सामने आया।

हमारे अगल बगलमें अभी कोई जानने योग्य परिवर्तन नहीं आया था। अबभी घनी-भूत अन्धकार हर चीजको ढाँके हुए था। अब भी वही गहरा प्रतिध्वानक गुम्वद, वही रोमाञ्चकारी वायुमंडल वही विस्तृत पथरीला घर था, जिसमें सूर्यका प्रकाश कभी नहीं गया। रास्ता अब सीधा जाता मालूम होता था। यदि यह किसी बहुत बड़ी वक्र आकृतिका खंड हो, तो नहीं कह सकता। मैं हैरान था कि कबतक हम इसी तरह चलते रहेंगे? कितनी देरमें समुद्र तक पहुंचेंगे? शायद हरिकृष्ण भूल तो न गये, वह कहते थे कि यह रास्ता टापूके किनारे समुद्रको जा रहा है। उस समय मैंने प्रश्न न किया। उस समय बात करनेकी मेरी इच्छा भी न होती थी।

अब गुफा, जो पहिले धीरे धीरे ऊंचेकी ओर जा रही थी, नीचे की ओर होती मालूम हुई। यह नीचेकी ओर उसका झुकना तीन मर्तबामें हुआ था। सबसे पिछले फर्शकी बनावट समथर सी मालूम हुई। यह फर्श प्रायः बीस गज़ तक रहा होगा। इसके बाद धीरे धीरे फिर अब चढ़ाई शुरू हुई। हमारी रोशनी बहुत दूर तक न जाती थी, इसलिये थोड़ी थोड़ी दूर पर ठहर जाना पड़ता था। वहाँसे आगे नज़र डालकर फिर आगे बढ़ते थे। जिस वक्त एक पत्थर पर खड़ा होकर मैं आगे देख रहा था, और चाहता था कि, अपना पैर आगे बढाऊं, उसी समय मेरी ऊंचीकी हुई मोमबत्तीसे एक गड़हासा दिखलायी पड़ा। उधर देखते ही अकस्मात् मेरी दृष्टि एक ऐसी

चीज़पर पड़ी, कि जिसे देखकर मैं एकदम चिल्ला उठा।

हरिकृष्ण दौड़कर मेरे पास आगये, उन्होंने पूछा—

'क्या है ?'

मैंने बड़ी धीमी आवाजमें कहा—"वहां उस जगह मैंने कुछ देखा है—प्रकाश।"

हरि—'प्रकाश !'

किन्तु 'वहां' ही सबसे अधिक अंधेरी जगह थी। वह बिल्कुल गुफाके दीवारके पास थी। उस अन्धकार और छायाकी ढेरमें हमारी निर्बल मोमबत्तीका प्रकाश अशक्त था। तथापि मैंने कहा—

"हां, एक प्रकारकी झलक ?"

हमदोनोंने खड़े होकर अंधेरेकी ओर देखा। मेरा हृदय दहलने लगा।

हरि—"अच्छा लेकिन मैं कुछ नहीं देखता हूं। थोड़ा बत्तीको ऊँचा उठाओ तो।"

मैंने दोनों मोमबत्तियोंको अपने शिरसे और ऊपर उठाया, अबकी फिर मैंने प्रकाश—अद्भुत प्रकाश देखा, जो अन्धकारके बिल्कुल मध्यसे आ रहा था। वह झलकमें, ऐसी आश्चर्यकर प्रकाशवाली, सूक्ष्म, तथा तेज़ थी, कि मैंने कठिनतासे उसको देख पाया। चाहे वह कुछ भी रही हो, किन्तु यह तो निस्सन्देह था, कि वह, जंगली जानवरकी टिमटिमाती आँख न थी।

मैं—"वहाँ ! आपने देखा ?"

हरि—"मैंने कुछ नहीं देख पाया।"

मैं—"वहां क्यों ? वही तो अबकी फिर थी। मालूम होता है,

वह कोई चमकीली चीज थी, जिसे मोमबत्तीके प्रकाशने पकड़ लिया। शायद कोई काँचका टुकड़ा था।"

हरि—"ओह! कोई चमकीली धातुका टुकड़ा, या शायद स्फटिक-खंड रहा होगा। अब मैंने समझा। चलो नजदीक, चलें।"

अब ज्ञात हुआ, कि वहां कोई भय करनेकी चीज नहीं है। मेरी भी हिम्मत अब कुछ बढ़ चली। इस लिये हम तीसरी पैंडीपर बढ़े। उसके बाद एक पंक्तिमें फिर गड़हेके फर्शपर। एक वार फिर जब मैं घूमा, तो फिर मुझे वही चमक दिखाई पड़ी। थोड़ी देरमें हम गुफाकी दूसरी दीवारके पास आधी दूर तक चले गये।

हरिकृष्ण मुझसे आधा कदम आगे रहे होंगे। वह सावधानीसे किन्तु निर्भयताके साथ आगे बढ़ रहे थे। यकवयक वह अपनी जगह खड़े हो गये। उनका ठिठकना क्या था, मानों किसीने मेरे हृदय पर हजारो मनका कोई पत्थर दे मारा। मेरी अकल हैरान और दिमाग परेशान हो गया। उन्होंने सामनेवाले अन्धेरे पर एक वार ख्याल करके देखा, और मालूम होता था कि, देखनेके साथ ही मारे भयके अचेत होने लगे। उनके चेहरेका भयानक विकार उसी समय मालूम हो गया, जिस समयकी उन्होंने अपनी गर्दनको मोड़ा। दूसरे क्षण वह पीछेकी ओर हटे और झट मोमबत्ती मेरे हाथसे ले ली। जिस समय उन्होंने ऐसा किया, उसी समय मैंने नीचेको ओर देखा कि वह एक मृत शरीरके ऊपर खड़े थे। मैंने स्वास खींची और अपने पैर पीछे खींच लिये। किन्तु, मैंने देखा कि वह भी मेरे साथ पीछे हट आये हैं।

हरि—"ठहरो, मुझे देखने दो।"

मैं आगे न बढ़ा, और इसकी जरूरत भो न थी। अब हम उस अन्धेरेके अभ्यासी होगये थे। अब हमें उसमेंकी चीजें दिखलाई पड़ने लगी थीं। हमारे पैरोंके करीब ही एक मृत मनुष्यका शव था, जिसके शरीर पर नौसैनिक अफसर की वर्दी थी। वास्तवमें यह शव नहीं था, जैसा कि मैंने पहिली दृष्टिमें मालूम किया, यह एक मानव कंकाल था—एक भयानक पैशाचिक हड्डियोंका ढाँचा, जिसके ऊपरसे मांसका एक एक अणु, न जाने कबका लुप्त हो चुका था। वह धरती पर पड़ा हुआ था। मुंह उसका ऊपरकी ओर था। शिरकी ओर बाहोंके सीधे फैले होनेसे उसकी लम्बाई और भी अधिक होकर भयानक प्रतीत होती थी। हरिकृष्ण जब सीधे आगेको बढ़ रहे थे, तो यक-बयक उनके पैरोंके नीचे वही वस्तु आगई थी, जिसे वह देख न पाये थे। यदि वह पीछे न लौटते, तो दूसरे ही क्षण उसपर गिर पड़ते।

कंकाल तो हर वक्त ही देखनेमें भयानक मालूम होती है, किन्तु खासकर उस अनादि अन्धकारकी, उस नीरवतामें और उस परिस्थिति में। मैंने अपनी बत्ती ऊँचीकी। उस भयंकर दृश्यके सन्मुख, मैंने अपनी बुद्धि और तर्क-शक्तिको शान्त रखनेका पूरा प्रयत्न किया। फैले हुए हाथोंमेंसे चमक आते देख, मैंने अनुमान किया शायद वहाँ अंगूठी होगी। मैंने देखा, कि वहाँ बगलमें हथियार—रिवाल्वर चाकू आदि भी पड़े हुए थे।

हरि—"इधर देखो, यहां और भी कितने हैं।"

और भी! हाँ! वहाँ सचमुच और भी थे। जिस समय मैं उनकी अंगुली की ओर देखने लगा, मेरा शिर घूमने लगा।

दूसरे भी ? ओफ ! सारी जगह उनसे भरी हुई थी ! उस टिमटिमाती रोशनीमें, दिखाई पड़ा, कि वहाँ कंकालोंका ढेर लगा है। उनकी आकृतिसे उनकी मृत्युके समयकी अवस्था ज्ञात हो रही थी। उनमेंसे किसी किसीके ऊपर कपड़ा था, और कोई कोई सर्वथा नग्न। एक जमात तो दीवारके पास थी, यह मुंड-रहित कवन्ध थे। उनके शिर उनके घुटनोंके पास थे। न जाने वर्षोंसे वह वहां पड़े हुए हैं। समय पाकर उनके स्नायुवन्धन टूट गये, और अब वह अंग-भंग दिखलाई देते हैं। दूसरे कितने, जिनमें कुछ झुक कर एक पत्थरके सहारे घुटने टेके, मानो प्रार्थना कर रहे हैं। कोई कोई स्वच्छ श्वेत ढाँचेसे हैं, जिनपर किसी प्रकारके विकार या मृत्युका चिन्ह नहीं है। उनको देखनेसे यह समझना मुश्किल हो जाता है, कि वह मृत मनुष्य हैं। वह बहुत समयसे वहाँ पर हैं, किन्तु दूसरे पीछेके हैं। मैंने पूछनेकी कोई अवश्यकता न समझी, जब कि मुझे एक जगह, एक आदमीकी टोपी पर जहाजका नामसा दिखाई पड़ा। जितने अक्षर मैं पढ़ सका, वह थे 'पुष्प''''

हाँ ! यही महाराज जगदीशपुर और उनकी टोलीके लोप होनेका भेद था; इस विषयमें कुछ कहनेकी अवश्यकता नहीं। किन्तु वहाँ और भी रहस्य थे। थोड़ी देर तक हम शून्य-मस्तिष्क हो उधर ही देख रहे थे, कि हमारी दृष्टि एक आकृतिपर पड़ी जिसकी पोशाक और लेटना विशेष प्रकारका था।

मैं—"ओः ! उस पर नज़र डालिये।"

यह आदमी उन दोनोंके ऊपर गिरा हुआ था। जान पड़ता है, इसकी मृत्यु उनके ऊपर खड़े होते समय हुई। जब मैंने फिर उस पर

नजर डाली, तो देखा कि वह साधारण रीतिके कपड़ोंसे आच्छादित न था। हमें जो कुछ दिखाई पड़ता था, वह था—लाल मुर्चा जो पैरोंके कवच, शरीरके कवच, और छातीके आवरक पर लगा हुआ था। उसी प्रकारकी लाल वस्तु उसकी टोपीपर थी जिसके नीचे शिर ढंका हुआ था और अन्ततः खिंची हुई तलवार जो एक माँसहीन हाथमें थी का फल भी उसी लाल वस्तुसे ढंका था।

मैं थोड़ा और आगे बढ़ा कि भली प्रकार देखूं। जिज्ञासाने इस समय भयको भगा दिया था। किन्तु, जिस समय मैंने उन सबको इतना देख लिया, और कुछ कुछ तात्पर्य भी समझ लिया, तो भय फिर लौट आतासा जान पड़ा। मैं पीछे लौटना ही चाहता था, कि हरिने जल्दीसे कहा—

"जरा देर ठहरो। मैं देखूं तो।"

वह आगेकी ओर बढ़े। मैंने समझा था, कि शायद वह उस कवचधारी पुरुषकी परीक्षा करेंगे, किन्तु वह दूरवाले पैशाचिक मुंडकी ओर बढ़ गये। वहां एक आदमी खूब लम्बा पड़ा हुआ था। एक विशेष उत्सुकताके साथ उसके दोनों हाथ, एक अच्छे लम्बे चौड़े पत्थरके टुकड़े पर पड़े हुए थे। मुझे आश्चर्य होने लगा, जब मैंने देखा कि, हरिकृष्णने उस कवचधारीकी ओर कुछ भी न ध्यान दे, उस पत्थरकी ओर झुक कर उसे छूना सा चाहा। मैं बड़ी उत्सुकता भरी दृष्टिसे उनकी ओर देख रहा था।

यकायक वह सीधे खड़े हो गये, और उन्होंने अपने हाथको शिरकी ओर उठाया। इसके बाद वह लड़खड़ाने लगे जैसे अपने बोझको सम्भाल न सकते थे। मैं मुंह-खोले अचरज

से देख रहा था उसी समय वह गिर गये। वह उन मृत्युके भयानक चिन्होंपर से होते हुए नीचेकी ओर जा पड़े। जिस समय वह कंकालों परसे गिरे, उस समय एक प्रकारकी तड़तड़ाहट हुई, जिसने मेरे रक्त तकको सुखा दिया।

एकादश अध्याय

मोहनस्वरूपका भूत।

हरिकृष्ण मृत थे !

पहिले पहिल मेरे ऊपर एक बड़ा आतंक छा गया। अवश्य कोई सर्वनाशक चीज यहाँ है, जिसने उन्हें मार दिया, जैसे कि उसने दूसरोंको पहिले मारा था। जैसेही वह आगेकी ओर लड़खड़ाये, मैं बड़ेही भयकी दशामें पीछे हटने लगा। उस समय मेरे नीचेका पत्थर खिसक गया। मैंने अपनेको गिरनेसे बँचानेके लिये जिस वक्त प्रयत्न किया, उसी समय मेरी हाथकी मोमवत्ती नीचे गिरकर बुझ गई, मैं नीचे और बड़े गाढ अन्धकारमें अकेला था।

आह ! कैसी भयंकर स्थिति ! हमने एक ही बार ऐसी बात देखी थी, जब कि उस महागर्तमें अपने आपको गिराया था। इस अवस्थाने मेरे चारो ओर एक भयानक आतंक फैला दिया। हरिकृष्ण मृत, और कोई पैशाचिक खतरा, उस छायामें, मुझे भी अपना शिकार बनानेकी प्रतीक्षामें अपनी भयंकर आँख डाल रहा है। उस गुफाके मृत्युजालमें मैं एकाकी—बिलकुल एकाकी था। इसी लिये भयभीत हो गया। मैं गिर पड़ा।

यह गिरना ही था, जिसने हमारी प्राण रक्षाकी। मेरी चिल्लाहट की प्रतिध्वनि अभी शान्त भी न होने पाई थी, कि फिर मैं अपने पैरों पर था। यद्यपि भय अब भी था, किन्तु यह वैसा न था। एक

क्षणमें ही मेरा दिमाग शान्त और सोचने लायक हो गया। जिस समय मैं खड़ा हुआ, मेरी तबियत खराब और सुस्त थी। मैं दीवारके सहारे लगकर थोड़ी देर बैठ गया। उस समय मेरी नाकोंमें किसी प्रकारकी बड़े जोरकी गन्ध घुस रही थी, मेरे तालू पर एक अजब अरुचिकर स्वाद मालूम हो रहा था। किन्तु मेरे शान्त मस्तिष्कने इसे झट सोच निकालनेमें देर न की। मुझे ख्याल होने लगा कि, मैंने ऐसी गंध कभी और भी सूँघी है। इसका स्मरण होते ही मेरा सारा भय काफूर हो गया। मुझे गुफाके रहस्यका पता लग गया।

उसके बाद क्या हुआ? मुझे पूरा स्मरण नहीं है। यह उस समय भी अन्धकारका स्वप्न, जल्दी, आशा और भय था, और अब तक है। उस समय जो कुछ कि मैंने किया, उसमें तर्कका हाथ कम और चटकका ही हाथ अधिक था। मालूम हुआ, कि मैंने तुरन्त एक नहीं छै मोमबत्तियां एक साथ जलाकर पाँतीसे पथरीली दीवार पर रख दीं। तब मैंने दो रूमालोंको पानीमें भिगा अपने मुंह और नाकके ऊपर बांध दिया तब फिर उसी भयानक स्थान में कूद पड़ा, जहां से भागा था। यह सब करने में एक मिन्टसे कम ही लगा होगा।

इसके बाद स्वप्न कुछ साफ सा होना आरम्भ हुआ। मैं उन अभागे नंगे कंकालोंको लाँघकर अपने मित्रके पास गया। वह भयानक आँख एक बार फिर मेरी ओर चमकी, किन्तु मैंने उसकी ओर ध्यान न दिया। बड़ी सावधानीसे मैंने हरिकृष्णकी गर्दन और बाँहको पकड़, बड़े भयंकर जोरके साथ पहिले उन कंकालोंसे उन्हें बाहर

किया। फिर मैंने उस गड़हेसे निकल कर ऊपरके चट्टानपर, रखने का भीष्म परिश्रम किया।

यद्यपि यह काम मेरी शक्तिसे बाहरका था। हरिकृष्ण मुझसे अधिक लम्बे और मृतदशामें पड़े थे। मुर्देका बोझा सचमुच अवश्यकतासे अधिक भारी हो जाता है। किन्तु उस समय मेरे साहस, मेरे आन्तरिक भावोंने मुझे एक अद्भुत शक्ति दे दी थी। मैं जैसेही उन्हें उस स्थानमें ला सका, वैसेही वहीं उनकी बगलमें गिर पड़ा। एकक्षणमें फिर मैं खड़ा हो गया। मैं इस समय भय और निस्सहाय होनेसे काँपता और पसीने पसीने था। एकबार मेरे दिलमें आया। मैं यह नहीं कर सकूंगा—मैं नहीं कर सकूँगा जाने दो उन्हें मरने दो।

इसके बाद फिर स्वप्नकी सनक— सबसे बड़ी सनक सवार हुई। मैंने समझा, मैं कुछ आहट सुन रहा हूं—पैरकी। मैंने चारों ओर निगाह डाली, और बिल्कुलही आश्चर्यान्वित न हुआ, जबकि मैंने देखा कि एक मृतक खड़ा होकर मेरी ओर आ रहा है। किसी प्रकार वह अपनी हड्डियोंको एकत्रित कर मेरी मददके लिये आ रहा है। मैंने उसकी चमकती अंगुलियों और हाथोंको, उसके वीभत्स मुखको देखा। मैंने परिस्थितिके अनुसार अपने आपपर काबू करनेका प्रयत्न किया, भयको पास न फटकने दिया। वह उस छिछले गड़हेसे ऊपर आया, और एक अस्पष्ट, भूतों जैसे किन्तु परिचित स्वरमें बोला—

"मदद चाहते हो, क्यों दोस्त? आह! ठीक, क्या फिर तुम्हारा दाँतदर्द शुरू हो गया?"

नहीं, मैंने बिल्कुल नहीं आश्चर्य किया। आश्चर्य क्यों होगा,

जब कि कोई बात स्वप्नमें हो रही है। भयको सम्भावना न थी, क्योंकि भयकी अन्तिम किस्त तक मेरे पास आ चुकी थी, अब उससे अधिककी सम्भावना ही न थी। मैंने अपने मुंह पर की पट्टी तोड़ ली और कहा —

"बहुत देर नहीं की, ठीक समय पर तुम आ गये। हाथ लगाओ जल्दी इसे खींचकर ऊपर ले चलें। इस गढ़ेमें, और इसके आस-पास बहुतसी जहरीली हवा भरो है, मैं इससे बाहर हो जाना चाहता हूं।"

भूत—"बिलकुल ठीक कहते हो, अच्छा एक-दो-तीन!"

मैंने अपनी सारो शक्ति लगाकर उस शरीरको ऊपर उठाया, और साथ ही भूतने भो जोर लगाया। तीन बारके जोरमें हमलोग ऊपर आ गये। यद्यपि शक्ति अब समाप्त हो गई थी, किन्तु प्रसन्नता थी कि काम पूरा हो गया। हमने उस निस्सहाय सूरतको जमीनसे चार फीट ऊंचे कर पाया। भूतने कितना आश्चर्य-जनक परिवर्तन प्रदर्शित किया, जब हमने यह कर लिया, तो मैंने मजाकसे कहा—

"मुझे कभो यह ख्याल न था, कि तुम भी उनके पास तशरीफ रख रहे हो? सचमुच, मैं तुम्हारो हड्डियोंको न पहचान पाया। कंकाल, जानते हो न, संसारमें सबके एकसे ही होते हैं। लेकिन हाँ! जब मेरे ऊपर गाढ़ पड़ा, तो तुमको ही ख्याल हुआ, मैं कभी तुम्हारे इस उपकारका बदला चुकाये बिना न रहूंगा।"

भूत मेरो ओर ताककर मुस्कुराने लगा।

मैं—"मुस्कुराओ मत। अभी इसकी बिल्कुल अवश्यकता नहीं है। देखो, यहाँ बोतल है, इसमें शर्बत है, थोड़ा लेकर इसके मुंहमें

डालो। क्यों? तुम्हें इसकी नाड़ीका भी पता मालूम हो सकेगा, देखो तो चलती वलती है कि नहीं। देखो, जल्दी सब करो, मुझमें अब कुछ करनेके लिये ताक़त नहीं है।"

भूतने मेरी आज्ञाका अनुसरण किया। क्यों न करे, वह पहिले भी करता था। हाँ। करता था, चाहे मेरी आज्ञा सरासर अनुचित ही क्यों न हो।

उसने प्रसन्नताके साथ कहा—"अच्छा, ऐसा आदमी मिलना मुश्किल है। जरा होश होने दो. मैं उनसे तुम्हें परिचित कराऊंगा।"

भूत—"मैं बड़ा प्रसन्न हूँ। किन्तु यह तो बताओ यह कौन है?"

मैं—"अरे, यह हमारे तृतीय अफसर हैं, हरिकृष्ण ठाकुर! लेकिन मोहन, कब तक वह तुम्हें यहां रहने देंगे? क्या बारह बजने तक?"

भूत—"नहीं उससे कुछ पहिले ही तक कि?"

मुझे भूतकी सारी ही बातचीत अच्छी तरह शब्द-शब्द याद है। मुझे याद है, कि अंतमें भूतने मेरी ओर देखा और मुस्कुरा दिया। उसने अपने आपको जैसे कहा…'पागल, मैं समझता हूँ। अच्छा किन्तु मैंने ख्याल न किया था, कि यह ऐसे होगा।'

इस पिछली बातका कहना, मोहन स्वरूपका तकिया-कलाम था। यह ठीक उसी तरह उसके भूतके मुंहसे भी निकला। यह शब्द सीधे मेरे हृदयमें पहुंच गये, उस समय मेरी आँखे डबडबा आईं।

मेरा कंठ रुद्ध हो गया। हरिके पास चट्टानके सहारे मैं वहीं बैठ गया। मैंने देखा, भूत सबही काम कर रहा है। वह उसे इतना

अच्छो तरह कर रहा है, कि मेरी सहायताकी अवश्यकता ही नहीं है। मैंने ख्याल किया, मैं यहाँ दम ले रहा हूँ। ओः! भूत अभी फिर मुर्दोंमें, हड्डियोंमें चला जायगा। हाय, मोहन तुम मर गये! किन्तु तब भी तुम मेरे लिये इतना करते हो। यह तुम्हारे लिये ही शोभा देता है। ओः! इसी समय मेरी आँखोंसे आंसुओंकी धारा बह निकली।

भूत (अनुकम्पाके साथ)—"क्यों? क्या हुआ? क्यों तुम रो रहे हो? यह नहीं मरा है?"

मैं—"हाँ, यह नहीं मरा है? किन्तु तुमतो मर गये हो न? इसलिये मैं रो रहा हूँ। आः! मैं कैसे विना रोये रह सकता हूँ, जब अपने सर्वोत्तम मित्र, अपने बाल-संघातीको भूत बने देख रहा हूँ। कहाँ तुम्हारे प्राण हैं, मोहन?"

"एक दरख्तके ऊपर, मैं समझता हूँ।"—भूतने कहा—फिर एक उत्सुकताभरी दृष्टिसे देखा। इसके बाद हरिकृष्णके शिरपर फिर पानी भिगा भिगा कर रखने लगा।

मुझमें इतनी भी शक्ति न थी, कि मैं अपने आंसुओंको भी पोंछ सकता। मैं चुपचाप हसरत भरी निगाहोंसे उसकी ओर देखने लगा। मेरा दिल बराबर आशंकित रहने लगा, कि कब तक यह हमारे साथ रहने पायेगा। सचमुच यह घड़ीके बारह बजनेके करीब ही चला जायगा। अब मैंने एक बार उस अन्धेरी जगहकी ओर निगाह डाली, जिधर भूतके और साथी अब भी गाढ निद्रामें सो रहे थे। अबकी मुझे आँख न दिखाई पड़ी। क्या हुआ? क्या वह सर्वथा लुप्त हो गई? तब मैंने अपनी

छओं मोम वत्तियोंको पत्थर पर चिपके तथा खूब तेज जलते हुए देखा। आः! कितना भारी अपव्यय! कैसी मूर्खता? हरिकृष्ण क्या कहेंगे?

इसके बाद मालूम हुआ, कि जैसे सभी मोमवत्तियां एक साथ ही बुझ गईं मैं बेहोश हो गया और मेरा शिर हरिकृष्णके कन्धे पर गिर गया।

बहुत देरके बाद मैं जागा, अर्थात् मैं होशमें आया। बीच बीच में, मुझे मालूम होता था, कि होश कुछ कुछ आजाता था। उस समय आधा जागृत और आधा सुप्त होता था, उस समय मेरे आस-पास होती सारी ही बातें अस्फुट सो दिमागमें घुसती थीं। वार्तालाप का कोई कोई टुकड़ा, सुननेमें बहुत दूरसे आता ज्ञात होता था। फिर जान पड़ा, दो आदमियोंने मेरे एक एक हाथको अपने कन्धेपर रख, और अपने हाथोंको मेरी छातीके चारो ओर लपेटकर मुझे खड़ा किया। वह मुझे पथरीले रास्तेसे ले चल रहे थे। बीच बीचमें मेरा पैर भूमिसे छू जाता था और ज्ञात होता था, जैसे मैं चल रहा हूं। जब मैं ऊपरकी ओर जल्दी कर रहा था, जान पड़ता था, कि कोई पीला प्रकाश मेरे ऊपर चमकने नाचने लगता था। उस समय मेरे दोनों साथियोंके हाँफनेकी और मेरे कराहनेकी आवाज आती थी। उसके बाद फिर पैरोंके आगे पीछे पड़नेके साथ ऊपरकी ओर फिर वही नाचती हुई पीली रोशनी और उसका ऊर्ध्वमुखीन मार्गके प्रकाशित करनेका व्यर्थ प्रयत्न। यह यात्रा, जान पड़ी, हजार वर्षमें समाप्त हुई।

इसके बाद हिलना डोलना बन्द हो गया। जान पड़ा, मैं एक

चट्टानके सहारे पीठ लगाकर वैठा हूँ। मेरे मुंहमें शर्वतकी मिठास थी, मेरे मुंह पर हवा शीतल, स्वच्छ. सामुद्रिक और काफी लग रही थी। फिर मुझे समुद्रकी आवाज, गर्जन और हुंकार युक्त होते हुए भी चेतोहर और आनन्दप्रद सुनाई पड़ी। फिर जान पड़ा, कि सूर्यका प्रकाश मुझपर पड़ रहा है, इन किरणोंके साथ जीवन और चेतनाशक्ति भी मेरी लौट रही है।

बहुत दूर किन्तु धीरे धीरे समीपतर आता हुआ हरिकृष्णका शब्द सुन पड़ा—"हाँ, यह गैस (गन्दी हवा) का असर है। कार्वोनिक्र एसिड मेरी समझमें—, अथवा उससे भी भयंकर कोई वस्तु। यह उस जगह भी निकल आती है, जहाँ ज्वालामुखीकी गड़वड़ मची हो। यह गैस इतनी वजनी होती है, कि भूमिके तल ही पर रहती है। लेकिन एक घंटेके भीतर यह होशमें आ जांयगे।"

"उसे दूसरा धक्का लगैगा, जैसे ही वह मुझे देखेगा" भूतने कहा। जिस पर मेरी इच्छा हुई कि लड़कोंकी सी हँसी हसूँ। किन्तु उसके बाद जो सन्नाटा छाया, मैंने उसमें अपनी श्रुत बातोंसे कोई निष्कर्ष निकालना चाहा। यह जाग्रत और निद्रावस्थाकी सन्धि थी। इस सिड़ी भूतने वचन दिया था, कि वह मेरे जगने तक मेरे पास रहेगा। उस अस्पष्ट होशमें भी यह स्पष्ट जान पड़ता था, कि भूतकी प्रतिज्ञाका कोई मूल्य नहीं। तथापि एक छाया सदृश अतात्विक वस्तु, स्वयं भूतहीकी भाँति, मेरे सन्मुख झलकती जान पड़ी। स्वप्नकी प्रतिज्ञाको दिनके प्रकाशमें यद्यपि कोई भी पूर्ण होनेकी आशा न करेगा। स्वप्न उलटा होजाता है। ऐसेही, जब मैं जागूंगा, तो भूत न रहेगा।

कुछ क्षणके वाद सभी स्वप्न समाप्त हो गये । एक सच्ची हवा मेरे मुंहपर लग रही थी। एक वास्तविक समुद्र था, जिसका गम्भीर नाद मैं सुन रहा था, जिसे कि वह नीचे की चट्टानोंसे भिड़कर कर रहा था। मैं एक बड़ी भारी गुफाके मुंहपर बैठा था, जो एक खड़ी पहाड़ीकी जड़से सौ या अधिक फिट ऊंचेपर होगी । मेरे सामने समुद्रकी अनन्त नील जलराशिके अतिरिक्त और कुछ भी दिखाई न पड़ता था। चारो ओर क्षितिजोंसे मिली वह नीलिमा जगह जगह सफेद फेनोंसे रञ्जित थी। ऊपर चमकीले नीले आकाशमें सूर्य चढ़ा हुआ था। चारों ओर प्रकाश, उष्णता और गति थी। आह! उस अन्धकार और मृत्युके स्वप्नके बाद यह बड़ा मंगलमय जागरण था।

हरि—"वन्देमातरम्, माधव !"

वह मेरे पास खड़े थे, उनके स्वर और मुस्कुराहटमें मधुरता और स्निग्धता झलक रही थी। वह घुटनोंके वल मेरे पास वैठ गये, और मेरे हाथको अपने हाथोंमें लेकर वोले—

"क्यों, अच्छे तो हो ?"

मैं—"वहुत अच्छे। मैं आशा करता हूँ, कि मैंने आपको बहुत तकलीफ दी।"

हरि—"मुझे तकलीफ दी ? मेरे प्यारे माधव, तुमने मेरे प्राण वचाये।" मैंने चिल्लाकर कहा—'क्या ? गुफामें ? क्या सचमुच वह सब वास्तविक था ?"

हरि (धीरेसे)—"मुझे नहीं जान पड़ता, तुम क्या स्मरणकर रहे हो। किन्तु यह निस्सन्देह है, कि हमने गुफाद्वारा यात्राकी है। मेरे ऊपर एक जहरीली गैसने असर जमा लिया था, और

तुमने मुझे उसके पंजेसे बचाया। तुम्हें याद नहीं है ?"

"हाँ"। इसके बाद मुझे बहुतसी बातें याद पड़ने लगीं। मोहनस्वरूपके भूतके देखनेकी पिनक ? वह क्या हुआ ? किन्तु मैंने इसके बारेमें न पूछा। मुझे अभी बात करनेकी बहुत इच्छा न थी।

हरि—"कलरात अथवा नहीं आज प्रातःकी बातका जरा ख्याल करो। तुम्हें स्मरण है तुमने एक विचित्र स्वप्न देखा था। तुम्हें मालूम हुआ, कि एक पुकार, तुम्हारे मित्रकी अवाज सुननेमें आई।"

उनका क्या अभिप्राय था, मैं न पूछ सका।

हरि—"एकबार मैंने एक किस्सा—बड़ाही करुणाजनक किस्सा, पढ़ा था। वह भी इसी तरहका, दक्षिण-अटलांटिकका ही किस्सा था, किन्तु वह यहाँसे और दक्खिनका जहां आँधी और अनवरत समुद्री प्रकोप बना रहता है। दो जहाज एकही समय और एकही तूफानसे टूट गये, किन्तु उनके टूटनेकी जगह एक न थी। नंगे सुनसान फैले हुए, चट्टानोंके एकतो उत्तर और दूसरा दूसरी ओर टूटा था। टूटे हुए जहाजोंके आरोहियोंकी दो टोली किसी प्रकार किनारे पहुंची, जिनमेंसे एकके पास रसद अत्यधिक और जगह बहुत सुरक्षित सायादार थी, और दूसरोंके पास न रसद और न ऋतु-प्रकोपसे शरण लेनेके लिये कोई सुरक्षित जगह थी। दोनों टोलियोंके बीचमें एक पतलेसे टापूका अन्तर था, किन्तु उन्हें एक दूसरेसे मिलनेका संयोग न लगा। आखिर एक टोलीके सारेही आदमी भूख और जाड़ेसे मर गये, सिर्फ एक जीवित बचा, यद्यपि सौ ही गजके फासले पर भोजन, छाया, मित्रता सब कुछ मौजूद

थी । तुमने सुना, दक्षिणी अटलांटिकके एक टापूमें कैसा बीता ?"

मैं—"हाँ, किन्तु-किन्तु किन्तु—"

हरि—"बहुत कुछ वैसाही यहाँ भी हुआ है । जिस समय हमलोग द्वीपके दक्षिण ओरमें सुरक्षित पहुंच गये थे, उसी समय टापूकी उत्तर तरफ पाँच मीलदूर एक जहाज तूफानमें पड़कर, चट्टानोंसे टकरा गया । सारे ही आदमी डूब गये, सिर्फ एक जीवित बचा, और वह भी कितने दिनों तक एक पहाड़ीकी जड़में एक पतलेसे चट्टान पर कैद रहा । शायद वह वहीं भूकसे मर गया होता, किन्तु अन्तिम आशाने उसे पहाड़ीके ऊपर चढ़नेकी अनुमति दी । वह चढ़कर एक गुफामें पहुंचा । यद्यपि वहाँ भी आशाके लिये कुछ न था, किन्तु उसने अन्धेरेमें भीतर घुसकर खोजना आरम्भ किया, और उसका सौभाग्य था, कि उसने प्रकाश देखा, और शब्द सुने । इससे भी बढ़ कर उसे आश्चर्य तब हुआ जबकि उस गुफामें, उस अन्धकारमें उसने अपने मित्रका मुख चीन्हा ।"

मैं ने एक गहरी स्वांस ली । मैं ने हरिके मुंहकी ओर ताकनेका साहस न किया । वह उठा और चला गया । किन्तु ठीक उसी समय कोई एक दूसरा व्यक्ति आया और मेरी बगलमें बैठ गया—ठीक उसी जगह जहाँ हरि घुटनेके बल बैठा था ।

मैं ने इस आगत व्यक्तिके मुंहकी ओर न देखा; किन्तु मैं ने उसके नंगे पैर और पिंडली देखी जो छिले, फटे और भद्देसे मालूम होते थे, जिनपर फटे हुए कपड़ोंके चीथड़े लटक रहे थे। मैंने उसके हाथोंको भी वैसे ही फूटे छिले, अंगुलियोंको पिसी और छिली देखी । सचमुच, मुझे याद

आ गया, कि मैं उन हाथोंको जानता हूं दर्दके मारे मेरा दिल फिर टूटने लगा। उसने घबड़ाकर—जान पड़ता था, अबभी उसको डर था कि कहीं मेरे दिलको यकवारगी इस सूचनासे धक्का न लगे, कहा—

"ओः! प्यारे माधव! किन्तु मैंने ख्याल न किया था, कि यह ऐसा होगा?"

यहाँ भ्रमकी कोई बात न थी। अन्तमें मैंने घूमकर उस चेहरे की ओर देखा, जिससे मैं पूर्ण-परिचित था। आकृति बदल गई थी, भूखसे मुंह पीला और रूखा पड़ गया था ऊपरसे समुद्री नमकने उसे और विकृत बना दिया था। किन्तु ऊपरको उठी हुई नाक, काले कुंचित केश, पतले ओठ और गोल मुख अबभी उसी अपरिवर्तित दशामें थे। दिल भी, जो उन चमकती हुई काली पुतलियोंके द्वारा मेरी ओर झुक रहा था, वह भी वहाँ था। अब मैं कुछ बोल न सका। वास्तवमें वहाँ कहने हीको क्या था? कौनसे शब्द थे जो उस समय भाव प्रकट करनेमें असमर्थ न होते? थोड़ी देरके लिये इन्हीं विचारोंमें मैं शून्य हो गया। उसी समय यकायक मेरे हाथोंने उसके शरीरको वेष्ठित कर लिया, मैं उससे लिपट गया और मेरे मुंहसे अकस्मात् निकल पड़ा—"आः मेरे मोहन!"

इसके बाद कितनी देर तक हम नीरव और चेष्टाहीन रहे। बाहरकी ओरसे यद्यपि हम अन्धकारमें थे, किन्तु अन्तस्तल आनन्द के प्रकाशसे भरपूर था।

पीछे उसने बताया, कि यह सब कैसे हुआ! उसने हरिकृष्णके कहे हुए ही किस्सेको दूसरे शब्दोंमें दुहराया। पुराने दिनोंमें घरपर

हमने कुछ समुद्री कहानियां, मिलकर पढ़ी थीं। किन्तु उनमेंसे कोई भी ऐसी अद्भुत और मनोमुग्धकर रीतिसे न लिखी गई थी, जैसी कि यह हमारे सामने मौजूद थी। उसी तूफानने, जिसने कि 'इन्द्रायुध' को भगाकर मधुच्छत्र में पहुंचाया, 'शोभा' को भी अपने, रास्तेसे बेरास्ते कर दिया। एकदिन प्रातःकाल पोतारोहियोंने देखा, कि उनका जहाज एक पथरीले टापूसे दो मील वायव्यकोण पर है। उसे एक बलवती तरंगमाला उधरको ले जा रही है, और एक पहाड़ी दीवार पर धक्का खाकर रूईके गाले की तरह उछल रही है। घंटों उन्होंने जहाजको रोककर उसे दूर रखनेका यत्न किया। शायद वह इसमें सफल हो जाते, किन्तु अन्तमें उनके शत्रुओंका एक भयंकर आंधीने साथ दे दिया। अब अवस्था निराशामय हो गई और तीसरे पहर दिनको जहाज चट्टानसे टकराकर चूर चूर होगया। समय बहुत थोड़ा था, तो भी कुछ आरोहियोंने एक नाव पानीपर उतारी थी, किन्तु उसे भी लहरोंकी क्रोधपूर्ण आँखे न सह सकीं।

मोहन—"मुझे ठीक पता नहीं कि क्या हुआ। केवल मैं और एक मेरा साथी बढ़ई पोततलपर थे। वह कडुआ आदमी था, उस समय भी सिर्का ही पियेसा मालूम होता था। हम दोनोंके पास एक एक रक्षक-पेटी थी। हम दोनों जहाजके बीचमें पोततलपरके एक घरमें शरण लिये हुए थे। जिस वक्त जहाज टकराया उसी वक्त सारे मस्तूले समाप्त हो गये। और जान पड़ता है, मुझे उसी धक्केने बाहर फेंक दिया। मैंने देखा। वहाँ जल नहीं है! वहाँ तो फेन और गाजसे भरे जलमें जगह जगह लकड़ीके तख्तोंके परस्परके टकरानेकी आवाज

है। यह मेरी चतुराई नहीं थी जो तैरकर बाहर निकल आया। मैं कभी न जान सकूंगा, कि यह कैसे हुआ ? जिस समय यकवयक थक कर मैं बदहवास होना चाहता था, उसी समय मेरा पैर जमीनमें जा लगा। वहाँसे धीरे धीरे मैं पहाड़ीके नीचे एक ऊंची चट्टान पर आगया। मैं रातभर उसी पर पड़ा रहा।

"सबेरे भी समुद्रकी वही दशा थी। कभी कभी पानीका छींटा मेरे ऊपर तक आने लगा। मैंने कहा—अब क्या आशा है। एकही बड़ी लहर और मैं पत्थर परसे साफ। जहाजसे मेरे अतिरिक्त एक ही चीज वच सकी थी, और वह अस्ट्रेलियासे अमेरिकाको भेजे गये सेवोंमें से एक सेवका बक्स था। यह बक्स भी टुकड़े टुकड़े होगया था, और सेव पानी पर तैर रहे थे। मैंने उनमेंसे दो सौ सेव चुन लिये, मेरे पास खानेके लिये कुछ न था। मैंने बड़ी सावधानीसे उन्हीं पर नव दिन व्यतीत किये। पानी पीनेके लिये तो चट्टानोंमें से मिल जाता था। आखिर भूखे रहकर मरनेका दिन आया। एक वार तो दिलमें आया समुद्रमें डूबकर इस आफतसे छुटकारा पालूं किन्तु फिर मैंने पहाड़ीकी ओर देखा। मैं उसे बीस फीटसे ऊपर न देख सकता था। मेरे दिलमें आया. इसपर चढ़कर देखना चाहिये। यह चढ़ाई दरख्तकी चढ़ाई सी थी, किन्तु तुम्हें मालूम है माधव ! लड़कपनसे मेरा चढ़नेका अभ्यास है। उसके बाद मुझे पानीके गिरने का रास्ता मिल गया; जिसके सहारे चढ़ते चढ़ते मैं इस गुफाके मुंहपर आगया। इसी जगह मैंने अन्तिम दोनों सेवोंको खाया, एकको रात सोनेसे पहिले, और दूसरेको आज सबेरे, गुफामें घुसने के पूर्व।"

मैं—"और फिर तुमने हमें पाया ?"

मोहन—"हाँ, फिर मैंने दो सौ गजके करीब चलनेके बाद तुमको पाया। किन्तु जिस समय मैंने बत्ती और तुम्हारे मुखको देखा, तो मुझे स्वप्नसा मालूम हुआ। यह वास्तविक बिल्कुलही नहीं मालूम होता था। और तुमभी अपनेको स्वप्नाते समझते थे।"

मैं—"हाँ, सचमुच।"

मोहन मुस्कुराया—"यहाँ, बड़ा लम्बा चौड़ा स्वप्न मालूम हुआ। आज रात के भिनसहरेको मैंने भी तुम्हारा स्वप्न देखा था। मानो मैं नालन्दा-विद्यालयके मैदानमें हूँ। तुम्हारी प्रतीक्षा करते करते जब देर हो गई, तो मैंने पुकारना शुरू किया—'माधव, हो !'

मैं—"ओः ! इसे तो मैंने सुना था।"

मोहन (आश्चर्यके साथ)—"तुमने सुना था ?"

मैंने उसे बतलाया, कि मैंने कैसे इसे सुना था, कैसे मैंने इसे हरिकृष्णको बतलाया। लेकिन हरिने कहा····

इसी समय मैंने अपनी चारों ओर देखा। मैंने समझा था, वह पासहीमें कहीं विश्राम कर रहे हैं। किन्तु वहाँ मेरे पीछे गुफाके अतिरिक्त कुछ न था।

मैंने जोरसे कहा—"क्यों ? वह कहाँ गये ?"

द्वादश अध्याय

आँख।

मोहनने शान्तिपूर्वक कहा—"पीछे गये हैं।"

मैंने—"क्या पीछे चले गये ? कहाँ पीछे ?"

मोहन—"गुफा के दूसरे छोरपर। उन्होंने निश्चय किया है, आज रात्रिमें यहीं विश्राम किया जाय, क्योंकि तुम्हारा शरीर अभी चलने फिरने लायक नहीं हुआ है। इसी लिये वह सब रसद-पानी वहाँसे लाने गये हैं। घबराओ मत। अब खतरेका भेद खुल गया है, कोई डर नहीं है। मैं भी जा रहा हूँ, रास्तेमें चीजोंके लानेमें सहायता करुंगा।"

मैं—"किन्तु काम बड़े खतरेका है।"

मोहन—"हाँ, एक तरहसे; किन्तु अब हमें उनपर विश्वास करना चाहिये। मैं ठीक नहीं कह सकता, कि तुम्हारा साथी माधव ! किस तरहका आदमी है, क्योंकि अभी तुमने उसके बारेमें कुछ नहीं कहा. किन्तु जो कुछ कि मैंने इस थोड़ी देरके अनुभवसे जाना है, वह अनुगमन करने योग्य अच्छा नेता है।

तब मैंने सारी कथा कह सुनाई, जिसके छोटे छोटे अंशोंके समझानेमें आध घण्टा व्यतीत हो गया। अन्तमें मोहनने कहा—

"आः यह तो हमारे नालन्दाके सभी पुराने स्वप्नोंके कान काटती है! और हम दोनों अभी उसके बीचहीमें हैं। मुझे तुम्हारे 'गुप्तसमुद्र'

'पुष्पक' और भगेलूको देखनेकी बड़ी इच्छा है। मुझे आशा है, वह जल्द पूरी होगी। लेकिन, अब जरा पहाड़ी की वारी पर आओ, तो मैं उस जगहको दिखाता हूँ, जहाँ 'शोभा' टकरा कर चूर हुई।"

उसने मेरी काँखमें हाथ लगाकर धीरे धीरे किनारे पर खड़ा किया। मैंने वहाँसे उसके पहाड़ी पर चढ़नेका रास्ता भी देखा। बीचमें कहीं कहीं मुश्किलसे पैर रखनेकी जगह थी, सोभी पानीके बहनेसे चिकनी थी। पहाड़ी एक प्रकार से खड़ी थी। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, कि मोहनने छिपकलीके भी कान काट लिये। मुझे अब मालूम हुआ कि क्यों उसके हाथ पैर और अगुंलियाँ छिल गई थीं? क्यों उसके कपड़े जगह जगह फट गये थे। यह एक चीज थी, जिसे नालन्दाके दिनोंमें हम ख्यालमें भी न ला सके थे। साठ हाथ नीचे पहाड़ी जरासी तिर्छी हुई थी, किन्तु मैंने वहाँ कोई ऐसा स्थान न देखा, जिसपर कि उसने तूफानमें शरण ली थी। जड़के पास देखनेसे दो जगह चट्टान जरा जरा निकली हुई थी। इनका सिलसिला तीस हाथ तक चला गया था। इनमें यह दाहिनी ओरका भाग था, जिसपर आकर जहाज टकराया और उसका सर्वनाश हुआ। यहाँ पानी बहुत गहरा है, अतः तूफानी लहरोंका प्रबल होना अनिवार्य ही है।

मोहन—"मेरा विश्वास है, कि ऐसी भयानक रीतिसे कोई भी जहाज न टूटा होगा···किन्तु चलो फिर अपनी पहिली जगहपर, नीचेकी ओरका देखना कुछ लोमहर्षणसा हो रहा है। और अब यदि तुम्हारी आज्ञा हो, तो मैं तुम्हारे साथीके पास जाऊँ।"

मैंने उत्सुकताके साथ कहा—"लेकिन, गैससे खबरदार रहना। क्या मैं भी साथ नहीं चल सकता ?"

मोहन—"महाशय हरिकृष्णने इसे बड़े जोरसे मना किया है। अगर तुम्हारी हिम्मत हो तो, उनकी आज्ञा का उल्लंघन करो। अच्छा, जाता हूँ। रोशनी आते देखना, तो समझ जाना, कि हमलोग आ रहे हैं।

इस प्रकार मोहन गुफामें अन्तर्धान हो गया। मैंने थोड़ी दूर-तक उसका अनुसरण किया, किन्तु इतने में हाथकी बत्ती मार्गकी वक्रतामें छिप गई। अब फिर उस गुफाकी भयानकता और अन्धकार से मेरा दिल सिहरने लगा, और मैं जल्दीसे वहाँसे उठकर द्वारपर सूर्यके प्रकाशमें आ गया। रात्रिके दुःस्वप्नने मेरे चित्तपर भयानक प्रभाव डाला था। अब मुझे खुली हवा और प्रकाश दो चीजें बहुत अच्छी मालूम होती थीं।

मैं बड़ी देरतक वहाँ बैठा रहा। अब सूर्य धीरे धीरे समुद्रकी ओर झुकने लगा था। दिनका यह अवशिष्ट भाग हमारे लिये बहुतही आनन्ददायक होगा। मैंने वहाँ एक स्थान भोजनके लिये और दूसरा सोनेके लिये साफ कर लिया। चट्टानके एक छेदसे पानी पीनेके लिये जमा कर लिया। किन्तु मुझे प्रत्येक आवा-जाहीमें गैसका भय लगने लगता था। मान लो यदि वह न लौटे और जाकर उन कंकालोंमें सो गये तो ? यह ख्याल आतेही मेरे देहसे पसीना छूटने लगा।

तब गुफासे एक गूंजती हुई आवाज सुनाई। दूर देखनेमें एक धीमी नाचती सी रोशनी दिखाई पड़ी। मैं उनकी सहायताके लिये दौड़ गया। बेचारे मोहनके लिये मुझे बहुत ख्याल था। बत्ती हरिकृष्णके हाथमें थी।

हरिने प्रसन्नताके साथ कहा—"बहुत ठीक। तुम्हारा बालमित्र माधव ठीक उसी जगह मिला, जिस जगह मैं चाहता था—अर्थात् उन्हीं तीनों पैशाचिक पौड़ियोंपर। उसी जगहसे इस बड़े गठ्ठरको वह ला रहा है, जैसे कि तुम देख रहे हो। उसकी सहायता मेरे लिये बड़ी आनन्दप्रद हुई।"

हरिकृष्ण आगे आगे चले। मैंने मोहनका छोटा गठ्ठर ले लिया। मोहनने धीरेसे कहा—

"तुम्हारी कसम! माधव! तुम्हारे हरिकृष्ण कामकरनेमें बड़े बहादुर हैं। इन सभी चीजोंसे लदे हुए वह कंकाल-गर्त तक आ गये थे। साथही एक हाथमें उनके मोमबत्ती भी थी। वहीं यह सुस्ता रहे थे, कि मैं पहुंच गया। कैसा मजबूत दिल है? है न?"

मैं—"जरूर। किन्तु क्यों वह वहाँ सुस्ताने लगे?"

मोहन—"अब आगे बिना सहायताके बढ़ना असम्भव मालूम होता था, और क्या? मुझको ऊँची जगह पर मोमबत्ती लेकर खड़े रहनेको कह दिया, और फिर स्वयं अपने मुंह नाक पर मजबूत पट्टी बाँधकर नीचे गढहेकी ओर गये। नीचे उन कंकालोंको अच्छी प्रकार देखने-भालने लगे। मानो उनकी जन्म-कुण्डली खोजने अथवा उनके यहाँ आनेके समयका पता लगाने लगे थे। किन्तु वहाँ न जेब था, न कोई कागज पत्र। यहाँतककि वह कवचधारी भी खूखा ही था।"

"मैं—हाँ, तब फिर?"

मोहन—"फिर चट्टानोंको ढूँढने लगे। जूतेसे कोई कोई टुकड़ा उठाते थे, और उसकी परीक्षा करने लगते थे। बीच बीचमें पीछे हटकर स्वांस ले लेते थे। अन्तमें उन्होंने उन पत्थरोंमें डूबकर एक

बड़ासा पत्थर ढूंढ निकाला और उसे मेरे पास ले आये। फिर उस पर खूब अच्छी तरह कम्बल लपेटा। और उसीको वह ले चल रहे हैं।"

मैं—"क्या ? पत्थर !"

मोहन—"हाँ। एक बड़ा ही सुन्दर नमूना है। उसका वजन पन्द्रह सेर पक्का होगा। प्रातराशसे पहिले तक न जाने कितने और ऐसे ऐसे वह अभी और एकत्रित करेंगे। लेकिन कौन इन्हें ढोकर घर ले चलैगा ?

यह प्रश्न फिर सामने न आया। हम लोग गुफाके द्वार पर पहुंच गये। हरिने अपने नमूनेको एक कोनेमें डाल दिया। और थोड़ी देर तक उसी कम्बलपर लेट गये। जब हम लोग भी ऊपर आगये तो वह मुस्कुराये।

हरि—"मैं बहुत थक गया हूँ। भूक बड़े जोरकी लगी है। कितनी देरमें भोजन मिलेगा ?"

मैं—"बहुत अच्छा। तो माधव जल्दी तय्यारी करो। जरा अपना सब गुण खर्चकर तो दो। आजकी मिहनत पर हमलोग उसके योग्य हैं।"

यहाँ घर तो था नहीं, कि पर्याप्त वर्त्तन-भांडे और सारी चीजें मिलतीं, तो भी यथासम्भव तय्यारीमें कसर नहीं रक्खी गई। मेरा भोजनका चौका सचमुच बहुतही सुन्दर था। मेरे आनन्दका आधा भाग तो था, मोहनस्वरूपको खाते देखना। भूख कड़ी लगनेसे हमने भोजन बड़ी रुचिसे तथा अधिक मात्रामें किया।

हमारे इस भोजके आनन्दमय वायु-मंडलका क्या कहना है! जरा स्मरण करो! इस अन्तिम और अत्यावश्यक समयमें मोहनके अचिन्तित आगमनको, जो सचमुच एक जादू था। मैं सोचने लगा, कि अब पुष्पकको खुले समुद्रमें लाकर देशकी ओर घुमाना आसान होगा। मुझे आशा होने लगी, कि अब जल्दी ही हरिकृष्ण वर्तमान परिस्थितिके अनुसार भविष्य-कर्त्तव्य पर परामर्श करेंगे। किन्तु मैंने देखा, कि उनके दिमागमें कुछ दूसरा ही है।

भोजन-समाप्तिके बाद ही उन्होंने कहा—"आ जाओ, अभी अन्धेरा होनेमें एक घंटासे अधिक देर है। यहाँ मेरे पास बैठ जाओ।" उन्होंने कम्बल उस कोने पर बिछाया था, जहां सूर्यकी अन्तिम किरणें सुगमतासे पहुंच रही थीं। हम दोनों जाकर वहाँ बैठ गये। अब हरि वहाँसे उठकर दीवारके पास चले गये, जहाँ उन्होंने अपना नमूना ले आकर रक्खा था। सावधानीसे उसे लेते हुए वह हमारे बीचमें आकर बैठ गये, और उसे अपने पैरोंपर रख लिया।

उन्होंने पूछा—"तुम्हें मालूम है यह क्या है?"

मैं—"एक पत्थर है"

हरि—"हाँ, और उससे कुछ अधिक, इधर देखो।"

यह एक गोल छोटा सा मामूली पत्थर था, किन्तु बीचमें बारीक फाँक थी, जिससे चमक निकलती थी। हरिने इसे ऊपर घुमा दिया, जिसमें सूर्यकी किरणें अन्दर जासकें। उसे देखतेही हम और मोहन दोनोंही ठक हो गये। यकायक नानावर्णकी किरणें उसमेंसे फूट निकलीं।

मैं—"आंख !"

हरि—"हाँ, यही वह आँख है, जिसे गुफामें तुमने देखा था। इस पर तुम्हारे वत्तीका प्रकाश पड़ता था, जैसेकि इस वक्त सूर्यका पड़ रहा है। इधर नजदीकसे देखो।"

हमने देखा। वह रोशनी एक छोटी सी जगहसे, पत्थरके अन्दर से आरही थी। वहाँ कांचकी भाँति कोई एक चीज थी, जिसका बाहरका भाग चिकना था। इसी चिकने भाग पर जब प्रकाश पड़ता था, तो उसमेंसे अद्भुत लाल किरणें निकलने लगती थीं। इसीको देखकर मैं गुफामें डर गया था।

हरि—"यह तुम्हारी 'आँख' इस पत्थरमें मंढा हुआ एक छोटासा स्फटिक-खंड है, जो युग-युगान्तर तक कोसों नीचे पृथ्वीके उदरके भयानक अग्निमें पड़ा था। किसी ज्वालामुखीय तूफानके भयंकर ऊर्ध्वविरेचनमें पड़कर वह बाहर फेंक दिया गया; और वहां यह और वमन कीहुई वस्तुओंकी धारमें पड़ गया, जो इस गुफासे होकर समुद्रकी ओर जा रही थीं। किसी तरह यह बीचही में यहाँ गुफाके सबसे निचले भागमें पड़कर दीवारसे लगकर रह गया। और इस अन्धकारमें दस हजार वर्षोंसे प्रतीक्षा कर रहा था। अभी यह प्रतीक्षा मेंही था, कि इसी बीच बाहर आदमियोंने आजकलका संसार बनाया। उन्होंने असभ्यता जंगलीपनसे निकलकर बोलना, जोतना, घर बनाना, बस्ती बसाकर रहना, धर्मानुष्ठानकरना, राज्य, साम्राज्य, प्रजातंत्र स्थापन करना ऐतिहासिक वीरता प्रदर्शित करना, और अन्तमें दूर दूर के सामुद्रिक भागोंका पता लगाना सीखा। इस तरह एक समय इस टापूमें ऊंचे मस्तूलों और पालों वाला एक लकड़ीका

जहाज, जो आजकलके जहाजोंके सामने एक खेल सा होता, आया। उसपर बहुतसे बहादुर मनुष्य, जो आधे नाविक और आधे सैनिक थे जिनका अफसर एक कवचधारी और खड्गधारी वीर था। यह लोग पुर्तगीज थे, जो 'विस्की' या 'सेविल्ले' से यहां आये थे। यह वह लोग थे, जिन्होंने अपनी पहुंच भर पुरानी दुनियांको अधिकृत करके नई दुनियां पर धावा बोला था। उन्होंने खोजते खोजते गुप्तसमुद्र पा लिया, और मेहराबदार मोहानेके द्वारा अपने जहाजको वहाँ घुसा दिया। फिर टापूकी देखभालमें कई दिन लगाये। और शायद इन वीरान चट्टानों पर अपने बादशाहका झण्डा गाड़कर अपना अधिकार भी उद्घोषित किया। आखिरकार एक दिन वह उत्तरीय दीवारके पास पहुंच गये, और फिर उन्होंने इस गुफामें प्रवेश किया, जिसको कल हमने पाया था। उनका इरादा इसके खोजनेसे, समुद्र तक पहुंचनेका रहा होगा।

उसी समय यह घटना घटी। आगे चलने वाले आदमियोंके हाथोंमें मशाल थे, जब वह इस गड़हेमें आये. जहां 'आँख' बाट जोह रही थी, तो एकने इसकी चमकाहट वैसे ही देखी, जैसे कि तुमने देखी थी। और यही स्फटिककी चमक उनके जानकी गाहक हुई। पहिला आदमी चिल्ला कर आगे दौड़ा, कि इसकी परीक्षा करे। किन्तु भयंकर गैसने, जो पास ही एक चट्टानकी दरारसे निकलती है, उसे ढाँक लिया, और वह वैसेही वहाँ गिर पड़ा, जैसे कि तुमने उसे, हाथ चट्टानके ऊपर फैलाये हुए देखा। दूसरे भी उसकी ओर झुककर आँखें फाड़कर देखने लगे; और शीघ्र ही वह भी एक दूसरेके ऊपर गिर पड़े। सबसे अन्तमें, उस टोलीका कप्तान एक और

आदमीके साथ आया, कि देखें क्या हुआ। कप्तान स्थिति को खतरनाक समझ तलवार खींच कर, आगे बढ़ा। शायद कुछ देर ही तक उसने भौंचक्का इस हत्याकाण्ड को देखा होगा कि उसका भी समय आगया, और वह भी वहीं गिर पड़ा। किन्तु उसके साथीने जब यह दशा देखी, तो उसका होश उड़ गया। जब उसने देखा कि 'आँख' उसकी ओर घूर रही है, तो वह यहाँसे बेतहासा भाग निकला। किसी प्रकार वह जहाज पर पहुंच गया। वहां उसने यह सारी कथा बयान की, और उस मिथ्याविश्वासपूर्ण कालमें यह 'शैतानकी आँख' भयानक अटलांटिकके सम्बन्धमें एक मशहूर कहानी हो गई।

उस जालमें फँसे लोग, फिर अपनी जगहसे न उठ सके। थोड़ी देरतक उन्होंने लम्बी साँस ली। इसी बीच गैसने अपना पूरा अधिकार जमा लिया, और वह सर्वदाके लिये सो गये। इसके बाद यह काण्ड चारसौ वर्षोंके लिये अन्तर्हित हो गया। तब-सिर्फ बीसवर्ष हुए- एक दूसरा अन्वेषक—महाराज जगदीशपुर आये; जिन्होंने शैतानकी आँख वाली कहावत को पढ़ा था, और उसपर हँस दिया था। किन्तु, उनके दिलमें आया, कि इसका अवश्य कोई और रहस्य है, और इसी रहस्यका पता लगानेकेलिये वह इसकी तहमें घुसे। आखिर बत्तीको रोशनीसे आँख फिर चमकी किन्तु उस चमकके खोजनेके ख्यालमें उनके दिमागने गैस का कुछ भी ख्याल न किया; और वहभी उसी फंदेमें फँस गये। उनके पीछे एक एक करके उनके साथी और फिर उनके पता लगाने वाले भी उसी बला के शिकार हुए। वह सब यहाँ मौजूद हैं। माधव !

मैंने उन्हें गिना है ?"

बहुत पीछे मोहनने मुझसे अनेक बार कहा—

"देखो, माधव ! यदि हमने ऐसी एक कथा ही तय्यार करली तो यही हमारे लिये पर्याप्त होगी, हमें फिर किसी रोजगार की अवश्यकता न होगी।"

उस समय मैंने उसे कुछ न कहा। हरिकृष्ण अपनी बात समाप्त कर थोड़ी देर बैठे। फिर पत्थरको अपने पैरोंके बीचमें दबाकर उन्होंने एक नाविकोंवाला मजबूत चाकू अपने पाकटसे निकाला।

हरि—"अच्छा, अब आँखको इससे निकालना है ! यह कोई बहुत कठिन नहीं है।"

और सचमुचही यह कोई मुश्किल नहीं था। जहाँ तहाँ उन्हों ने चाकूको दबाया, और तिर्छे खींचा, कि टुकड़ा टुकड़ा अलग होने लगा। पाँच मिनटके भीतर सब पत्थरको काटकर आँखको अलग कर लिया। इसकी आकृति बहुत कुछ अंडाकार थी। उसके चारों ओर एक पतला चिकनासा पत्थरका पलस्तर था !

हरिने उसे बारबार उलट पलटकर बड़े आश्चर्य और उत्साहसे कहा—"यह है वह रहस्य, जिसने शताब्दियों तक संसारको अन्धकारमें रक्खा। जिसने एक विचित्र और भयानक कहावत प्रसिद्ध की। जिसने पृथ्वीके उच्चतम श्रेणीके मनुष्योंकी बलिग्रहण की। लेकिन यह विल्कुल छोटासा स्फटिकका चिकना टुकड़ा था। बस यही सब कुछ। जब तुमने इसको उस समय, उस भयानक दृश्यके बीचमें देखा था; तो यह कितना हृदय विदारक मालूम होता था ? वस्तुतः, किसी चतुर पुरुषको यह उक्ति विल्कुल सत्य है—मनुष्य कुछ नहीं, वह

परिस्थितिके हाथका एक खिलौना है। जरा सोचो 'पुष्पक' और उसके सारे आरोही इसीके शिकार हुए । शैतानकी आँख! सचमुच यह शैतानकी आँख है।"

मैंने घृणाके साथ कहा—"फेंक दो इस जघन्य वस्तुको। जाने दो इसे समुद्रमें सदाके लिये ।"

हरि—" नहीं, इसको हमें अवश्यकता है। जब हम अपनी कथा कहेंगे, तो उस समय यह उसका पक्का साक्षी होगी। इस समय इसे हमें अपने पास रखना होगा। हाँ! माधव! तुम्हारे पास बहुतसे पाकट हैं. लो इसे एकमें रख लो। मेरे पाकेट पहिलेसे भरे हुए हैं, और वेचारे मोहनके पासतो कोई है ही नहीं।"

मैंने उस टुकड़ेको रूमालमें लपेटकर अपने ऊपरवाले पाकटमें डाल लिया। यही 'पुष्पक' और उसके लुप्त आदमियोंकी कुञ्जी और मुर्दोंकी गुफाका रहस्य था।

त्रयोदश अध्याय

शैतानकी आँख।

मोहन—"इसबातका विश्वास कठिनाईसे होता है।"

मैं—"ठीक।"

मोहन—"अब भी, मुझे मुश्किलसे विश्वास पड़ता है।"

मैं—"और मुझे भी।"

यही बात हमने कई वार दुहरा दुहरा कर की। अन्तर यही था, कि कभी मैं प्रश्नकर्त्ता होता, और कभी मोहन। अन्तमें हम दोनों एक दूसरेके हाथको अपने हाथोंमें दवाकर एक निश्चयपर पहुँचे, कि यह सब निस्सन्देह सत्य है।

उस गम्भीर समयमें अपनी मानसिक शान्ति और स्वस्थतापर हमें बड़ा आश्चर्य होता है। शायद हम दोनों जोशमें थे, और इसके अतिरिक्त दो वर्षके बाद मिले थे। दोनों बड़े धीमे स्वरसे बात करते थे, इसके अतिरिक्त कभी कभी हाथ मिला लेते थे। हमदोनों एकही कम्बलके नीचे बड़े आनन्दसे सोये। उस समय मेरा मुंह मोहनके मुंहके पास था। हमदोनों इतने ही दिनोंमें बहुत बढ़ गये थे।

उस रात निद्रा असम्भव मालूम होती थी और हमने उसकी इच्छा भी न की। हमलोग आपसमें तरह तरहकी बात करनेमें लगे थे। हरि हमसे बीस गजके फासिलेपर छायामें सोये थे। उस भले मानुषने ऐसी जगह अपना बिस्तर किया था, कि जहाँ हमारी

फुस फुस नीचेकी समुद्रगर्जनाको पारकर न पहुँच सकती थी। निद्रा बहुत देरके बाद आई। अन्तिम बात मोहनने हरिकीकी थी—

"क्यों माधव ! तुम्हारा हरि पत्थर सा है"

मैं—"हाँ, ऐसाही।"

मोहन—"जानते हो, मुझे क्या ख्याल हो रहा है? मैं उसके पीछे आग-पानीमें कूद सकता हूं।"

मैं—"मैंभी, और उनके लिये भी। मैंने इस बातका उसी समय अनुभव किया, जिसदिन पहिले पहिल मैंने उन्हें देखा।"

मोहनने—"थकावटसे एक लम्बी स्वाँस ली। थोड़ी देर बाद अर्द्ध निद्रितावस्थामें जम्हाई ली, फिर बुरबुराया—

"मैंने नहीं सोचा था, कि यह ऐसा होगा ! यह—"

'यह अभी उसकी जिह्वापरही था, कि वह निद्रामें मग्न हो गया। उसका शिर उसकी दाहिनी बाँहपर था और बाई बाँह मेरी छाती पर थी मैं उसके इस आत्मसमर्पण पर मुस्कुराया और पाँच मिनटके बाद मेरी भी वही दशा थी।

यह पाँच मिनट अनेक विचारोंसे परिपूर्ण थे, यद्यपि वे विश्रृंखलित थे, जैसे कि निद्राके समयके विचार साधारणतया हुआ करते हैं। मुझे खूब स्मरण है, कि मैंने समुद्रसे अपनी भूलके लिये क्षमा माँगी। मैंने कहा—

"मैंने ख्याल किया था, कड़ी मिहनत मशक्कत तूफान और धक्काके अतिरिक्ततुम्हारे पास कुछ नहीं है; इसलिये मेरा विश्वास तुमपरसे उठ गया था। उस समय मुझसे यही आशा हो सकती थी; किन्तु अब तुमने मुझे बहुतसी चीजें दी, जिनमेंसे अन्तिम और

सर्वोत्तम मेरा बालमित्र मोहन है, जिसे तुमने दिया। समुद्र देव! मेरी क्षमाप्रार्थनाको स्वीकार करो, और मुझे अपना आज्ञाकारी सेवक समझो" इसके बाद मैं निद्रामें लीन हो गया। उस निद्रामें मुझे स्वप्न आतेसे मालूम हुए। नीचेकी लहरोंके धक्केसे वह पहाड़ी हिलने लगी।

मैं कई घंटे सोता रहा। मेरी निद्रा खुली। उस समय समुद्रोय ऊषा को रक्त किरणें नोचे समुद्रके उस स्थानपर खूब प्रतिफलित मालूम हो रहीं थीं, जहां कि तूफानने 'शोभा' को पटक कर तोड़ा था। थोड़ी देरतक सोये हुए मैं इस दिनके नवजात शिशु-सूर्यके महान् प्रयास को देख रहा था, जोकि सब जगह अपने शत्रुओंको परास्त कर अपना अधिकार जमाना चाहता था। मुझे उस समय कुछ ठण्डक मालूम होती थी, किन्तु जैसेही मैंने उठकर अपनी रगोंको कुछ हर्कत दी, कि फिर मेरी तबियत ताजा हो गई, मैं अपनेमें नूतन उत्साह पाने लगा। जवानीकी फुर्ती फिर लौट आई; मैंने स्वच्छ और खुली सामुद्रिक हवाको दिल खोलकर पान किया।

मोहन अब भी गहरी नींदमें था। मैंने उसे जगानेके बदले अपने आधे कम्बलको भी उसके ऊपर ओढा दिया। अब मेरे दिमागसे कलवाले स्वप्नकी गन्ध निकल गई थी। अब मेरे लिये मैं और मोहन दोनों ही यथार्थ थे। उसके आनेने कितना परिवर्त्तन उत्पन्न कर दिया। कोई भी वीरान द्वीप वीरान नहीं हो सकता, जिसमें मोहन हो। कोई भी निराशामय प्रदेश निराशामय नहीं हो सकता, जहां आशापूर्ण मोहन उपस्थित हो। अवश्य यह उपस्थिति हर एक वस्तुके आकारमें महान् परिवर्त्तन करेगी।

हरिकृष्ण भी अभी सो रहे थे, किन्तु उनकी स्वाँस बहुत धीमी

धीमी विना किसी प्रकारका शब्द किये चल रही थी। मैं शौचादिसे निवृत्त हो नाश्ता तय्यार करनेमें लग गया। मुझे ख्याल हुआ कि मैं अब इसे उदारताके साथ कर सकता हूं, क्योंकि अब हमारा मुंह घरकी ओर है, और शायद रात्रिके आनेसे पूर्व ही हमलोग उस जगह पर पहुँच गये रहेंगे, जहाँ हमने आते समय अपनी रसदका कुछ भाग जमा कर दिया है। यह तब यदि हम बंगले तक न पहुंच सके। मैंने खूब प्रथम दर्जेका नाश्ता तय्यार किया। फिर हरिकृष्णको जगाया—

"नाश्ता तय्यार है, सर्कार उठिये।"

उन्होंने अपनी आँखें खोलकर देखा। चीजें तय्यार करके आलमोनियमकी तश्तरीमें रखी थीं और दूध स्टोव पर चढ़ा हुआ था। हरि उठकर झट मुंह हाथ धोने गये। फिर मैंने मोहनको जगाया—

"उठिये कुम्भकर्णजी, तुम्हारे भाग्यसे फिर रात आयेगी।" मोहनने कम्बलके नीचेसे अपना स्मित मुख वाहर किया। उसने कहा—मैं जागता था, कितनी देरसे कि ? तुम्हारा सब देख रहा था।"

मैं—"जाओ जल्दी मुंह हाथ धोकर तय्यार हो आओ, नहीं तो देखना ही तुम्हारा हिस्सा रहेगा, समझे? मैं बड़ा भूखा हूं, मेरे लिये दो हिस्से अधिक न होंगे।"

प्रातः कालके छिटकते हुए प्रकाशमें वह नाश्ता बड़े ही आनन्दका मालूम होता था। यह सायंकालके भोजनसे भी मधुर था, क्योंकि उस समय हम थके मांदे थे और अब खूब ताजा। हरिकृष्ण चुपचाप खानेमें लगे हुए थे किन्तु मोहन बीच बीचमें अपना नटखटपन दिखाये विना न रहता था। बीच बीचमें हरिकृष्णको दृष्टि गुफाके

अन्धकारकी ओर चली जाती थी। मुझे उसके देखते ही फिर वह पैशाचिक दृश्य स्मरण आने लगा। मैंने उससे हटानेके लिये कहा—

"चलनेके लिये बड़े उत्सुक हैं क्यों ?"

उन्होंने विकसित वदन हो कहा—"हाँ, हमें बंगले पर चलना है। यहां तकका प्रोग्राम तो निश्चित हो गया। अब इसके बाद दूसरा अध्याय सोचना है। तुम्हारी क्या राय है ?"

मैं—"विल्कुल ठीक। भगेलू जब दोकी जगहपर हम तीनोंको देखेगा, तो कैसा अचरजमें पड़ेगा। यद्यपि इसमें सन्देह नहीं कि वह इस समय हम सबको सर्वथा भूल गया होगा, किन्तु सामने जाते ही उसे बातें फिर याद आने लगेंगी।"

मोहन—"इससे भी बढ़कर कितनी बातें उसे याद आयेंगी। मैं बड़ा उत्सुक हूँ कि उसके उस आनन्दको देखूँ, जो कि उसे मुझे देखकर होगा। अच्छा अब बांधा-बूंधी करें। मैं विल्कुल ठीक हूं। मैं समझता हूँ, एक पक्ष सेवका फलाहार आदमीके सभी रोगोंको चंगा कर सकता है। मैं जानता हूं, माधव ! जिस समय वह देखेगा, तो उसे स्वप्नकी भ्रान्ति होगी। वाह क्या खूब !"

मैं—"किन्तु वह तुम्हें खाते देखेगा, तो तुम उसके लिये महामारी हो जाओगे।"

मोहन—"उँह, यह वही, माधव ! अब भी है, चलो अब अपना क़ाम ठीक करें।"

हमने इसके बादका आधा घंटा गठरी बाँधनेमें लगाया। अब मैं निस्संकोच कह सकता हूं, कि अबकी वारकी बंधाई मुझे यात्रारम्भकी बंधाईसे बढ़कर मनोरंजक थी। बीच बीचमें

मोहन एकाध चुटकुले छोड़े बिना नहीं रहता था।

मोहन—"वाह। कितना, चीजोंका गट्ठर तुम बाँध लाये हो। तुमने तो रॉविन्सन क्रूसोकी चोटीपर भी लात दे दिया। स्वयंसेवकी झोला, स्टोव, वत्ती और क्या क्या! विचारा रॉविन्सन न हुआ, नहीं तो उसे कामके वहुतसे गुर अप्रयास ही मिल जाते।"

मैं—"हाँ ठीक कहा, किन्तु यहाँ उसको इसके लिये कोई गुर न मिलता, कि अपनेसे बड़ोंके सामने कैसे जवानमें लगाम देनी चाहिये। हाँ, अच्छा लो, जो गठरी चाहो चुनलो।"

मोहन—"यदि दो बुराइयोंमेंसे चुनना है, तो मुझे छोटी दो।"

मैं—"बिल्कुल ठीक। ठीकही कहा वच्चे! और यही अधिक भारी है।"

अब हमने उस भूमिको अन्तिम नमस्कार किया। अन्धेरेमें पहुंचते ही, मोमवत्ती जला ली गई। इसके वाद शनैः शनैः हमारी हँसी बुझ गई, क्योंकि उस अन्धकारके घरमें दाँतोंके खोलने का हुक्म न था।

हरि अपनी गठरीको लिये आगे आगे चल रहे थे, मोहन तथा मैं उनकी पीठ पर थे। यह उतराईका रास्ता था। उतराई, जो कंकाल-गर्त तक चली गई थी। हमारे लिये अब रास्ता कुछ नहीं था, क्योंकि हमको उसका अनुभव होगया था, वल्कि हमारे दो साथियोंने तो उसे दो वार तैकर लिया था। मेरा हृदयभी अब शान्त था, तथापि उत्सुकता भरे हृदयसे हरिने दो एक वार फिर कर मेरी ओर देखा।

हरि—"ज्वालामुखी अलाप-बिलापसे भरी यह गुफा है।

सम्भव है तुमको दूसरी 'आँख' देखनेमें आवे किंतु इसकी आशा कम है।"

उसके बाद मैंने अनेकवार अपने आसपासमें नज़र दौड़ाई। रास्ता बराबर जान पड़ा। यद्यपि हमने कई जगह उस चट्टानो दीवारके खनिज-कोषमें अनेक बार चमक देखी, किन्तु वह लाल लाल आँखे करके घूरने वाला स्फाटिकनेत्र फिर न देखनेमें आया।

अन्ततः हम कंकाल-गर्त पर आगये। वहाँ थोड़ी देर तक दम लिया। उस समय उस पैशाचिक स्थानके विषयमें हममेंसे किसी ने जिक्र न छेड़ा। एक तरहसे हम सभी मौनसे थे। सचमुच, मैं नहीं समझता, कि किसीने भी उस समय अन्धेरेमें उस दीवारकी ओर देखा होगा, जहाँ कि कंकालराशि थी। यद्यपि हमारे लिये यह बड़े आनन्दकी बात होती, यदि हम उनकी समाधि बना पाते, किन्तु वहाँ इसके लिये गुंजाइश न थी। गढ़े खोदने या पर्याप्त मिट्टीका संग्रह करना असम्भव था। जहाँ इतने दिनोंसे वह पड़े हुए हैं, वहीं उन्हें रहना होगा, अखंडित अन्धकार ही उनकी समाधि है।

अवशिष्ट गुफाकी यात्रा अब आरम्भ हुई। यद्यपि रास्ता साफ न था, किन्तु पूर्वपरिचित था। हमें पहिलेके कई स्थान याद थे। हम लोगोंने इस यात्राको इतनी अच्छी तरह तै किया, कि शायद प्रकाशमें पहुंचते पहुंचते हमें एक घण्टा भी न लगा होगा।

मोहन (लम्बी साँस ले)—"ओह! मलूम होता है, जैसे कोई अभागा गदहा हूं।"

मैं—"हाँ, लेकिन, शृँगयुक्त और पुच्छरहित। देखो न यह तुम्हारे शिरपर काली सींग है?"

फिर हम लोग चबूतरेपर चढ़ गये। वहाँ हमने झोरा-झण्टा नीचे पटक दिया, और विश्राम करनेके लिये पड़ रहे। यहाँ हम कुछ देर तक ठहरे, क्योंकि उस अन्धेरे और ऊभड़-खाभड़के चलने ने हमारे चित्तको न जाने कैसासा बना दिया था। यद्यपि आगेका रास्ता भी कोई अच्छा नहीं था, किन्तु उसमें वह कालरात्रिकी भयानकता तो नहीं आनेवाली थी।

हरि - "गुप्तसमुद्रसे यहाँ तक आनेमें हमें एक पूरा दिन लग गया था, किन्तु इसकी वजह यह थी, कि हमको रास्ता देखना जगह जगह ठहरना, और इधर उधर कभी कभी भटकना भी पड़ा था। यदि हम लोग सीधे चले गये, तो मुझे आशा है, कि सूर्यास्तसे पहिले ही किनारे पर पहुंच जायेंगे।"

मैं—"और बाकी तो सिर्फ झिझिरी खेलना होगा"। मुझे यह नहीं मालूम था, कि महापथके समाप्त करते ही, हमारी सबसे बड़ी समस्या आरम्भ होगी।

एक लम्बी दम लेनेके बाद हम लोग फिर उठ पड़े। हम जल्दी जल्दी हरिके पीछे पीछे चल रहे थे, और कोशिश कर रहे थे, कि जहां तक हो, नजदीकसे चलैं। किन्तु जितना ही हम आगे बढ़ते थे, उतनी ही हमारे मार्गकी कठिनाई बढ़ती जाती थी। यद्यपि मोहनको द्वीपके बारेमें कुछ अनुभव हो चुका था, किन्तु उसके लिये भी यह आश्चर्यकर था। उसने लथड़-पथड़ होनेसे पहिले ही कहा—"हायरे किस्मत! मैंने एक बार बद्रीनारायणके एक पर्वतकी, हाँ तुंगनाथकी चढ़ाईका वर्णन पढ़ा था, किन्तु मैं उस समय उसे ठीक न समझ सका था। मालूम होता है वह भी ऐस

ही होगी। लेकिन यह दृश्य माधव! अफसोस है, कि राजगृहमें नहीं ले जाया जा सकता, नहीं तो भाग्य खुल जाता।"

मैं—"हाँ, आठ आनेका टिकट, और लड़कोंके लिये आधा टिकट, देखनेके लिये। सारा पटना और बनारस उलट पड़ता कि? तबतो शायद बिहारवाले, रेलके बच्चेसे न काम चलता, पटनासे सीधी लाईन लानी पड़ती। लेकिन बच्चू! मैं इसके लिये भगीरथ नहीं बनने जा रहा हूं। बस! 'बकसें बिलार, मूष बाम्हा रहि हैं'। इन्हें यहीं रहने दो।"

इसके बाद मैंने देखा, कि मोहन आगे बढ़कर हरिके साथ होनेके लिये बड़ा जोर लगा रहा है। हरिकृष्णने दिग्दर्शक अपने हाथमें लिया था। जैसे ही जैसे दिन ढलता जाता था वैसे ही वैसे वह अधिक उत्सुक होते जारहे थे। अब उनका ध्यान रास्तेकी ओर इतना आकृष्ट था, कि बातें करनेकी फुर्सत न थी। मुश्किलसे एक दो बार उन्होंने मुझसे और मोहनसे हमारे थकनेके बारेमें पूछा होगा। किन्तु उसमें भी मैंने ख्याल किया, कि वह उत्तरकी प्रतीक्षा न करते थे। उनके अभिप्रायको जान कर हम लोग भी दिल तोड़कर साथ रहने की कोशिश करने लगे। यद्यपि मैं चलनेमें बदहवास था, किन्तु मोहनकी अवस्था देखकर बीच बीचमें एकाध बात उससे कहे बिना न रुकता था। एक बार मैंने कहा—

"कहो मोहन! तुमने कहा था, कि तुम्हारे जहाजके आदमियोंने जहाज परसे एक नाव उतारी, ठीक उसी समय जबकि वह टकराने के समीप पहुंच गई थी। तुम ठीक जानते हो, कि वह उलट नहीं गई?"

मोहन—"हाँ, ठीक, यद्यपि मैंने इसे अपनी आँखोंसे न देखा, किन्तु मुझे इस पर बिल्कुल सन्देह नहीं। क्यों?"

मैं—"क्योंकि, यदि वह उलटती नहीं, सीधे किनारे चली आती, तो आदमी 'गुप्तसमुद्र' का पता लगा लेते, और वहाँ आकर बंगला दखल कर लेते। और यह बहुत खराब होता, यदि वह आदमी उत्तम श्रेणीके न होते।"

मोहन—"इसके लिये बेखटके रहो. यह कभी नहीं हो सकता। मैं इसे स्वीकार करता हूँ, कि आदमी उत्तम श्रेणीके न थे—कोई कोई बड़े ही रूखे उजड्ड मल्लाह थे। किन्तु मुझे कदापि विश्वास नहीं कि वह जीवित हैं।"

मै भी सुस्थ न था, तिसपर हरिकी बढ़ती हुई उत्सुकताने और चित्तको चंचल कर रक्खा था। अब दिन समाप्त हो चला था. और तो भी अभी हम वहीं चट्टानोंके मैदानमें चक्कर खा रहे थे। हम अभी उस स्थानको न पा सके जहाँ हम रसदका एक हिस्सा रख गये थे, हरिने इसका जिक्र भी मुझसे न किया था। जिस समय मैं उन्हें इधर उधर अपनी तेज़ दृष्टि दौड़ाते देख रहा था, उस समय और भी मेरा होश उड़ रहा था। यद्यपि यह अकारण था, किन्तु ऐसी वह मनहूस जगह थी, जहाँ हजारों ऐसी अकारण बातें जमा थीं।

किन्तु यकबयक रंग पलट गया। जिस समय मैं यह सब सोच रहा था, उसी समय हरि एक चट्टान पर चढ़कर चिल्लाये—

"समुद्र, बस आधा घण्टा और!"

इस ज़ोशने एक नया असर पैदा कर दिया। इसने हमारी

नसों और जाँघोंकी थकावट भी भुलवा दी । हरि फिर आगे बढ़े, हमलोग साँस बन्द किये उनके पीछे थे । क्रमशः मार्गकी कृच्छ्रता दूर होने लगी, और रास्ता चौड़ा दिखलाई देने लगा । दस ही कदम और चले थे और सामने गुप्तसमुद्र आ गया ।

यह गोधूलीका समय था, दूसरे छोर पर छाया पड़ी हुई थी । बंगला भी साफ नहीं दीखता था, जान पड़ता था अन्धेरेमें कोई सफेद सफेद दाग है । मैंने देखा कि अब हम महापथसे प्रायः निकल आये हैं ।अब आगे एकसौ पचासगज ही बाकी रहा है । सौ गज तक फैले हुए पत्थर और चट्टान, और फिर पचासगज ही बालुकातट बाकी है । इसी बीचमें मैंने देखा, हरि आधो दूर निकल गये, किन्तु इसी समय एक चिकने पत्थर पर उनका पैर फिसल गया, वह एक कराहत. जो आधो दर्द भरी और आधो असन्तोष भरी थी. के साथ गिर पड़े । तुरन्त ही खड़े हो गये, किन्तु अब पैरपर बल न दिये जाने के कारण उन्होंने एक बाँह मेरे कन्धे पर रख ली ।

हरि—"यह बाधा पड़ी । मालूम होता है, मेरे पैरमें मुर्च आगई है ।"

मैं—"यह खुश-किस्मती है, कि आपने पहिले नहीं तोड़ लिया। आप समझते हैं कि, चल सकेंगे ?"

उन्होंने दो चार कदम चलकर देखा, किन्तु दर्द बहुत अधिक होता था । फिर वह रुक गये ।

हरि—"ना, मुझे बड़ा सख्त अफसोस है; लेकिन असम्भव है, अब तुम्हें नाव लानी पड़ेगी ।"

मोहन—"मानलो, यदि गोली दागी जाये । तो क्या भगोल

इसे नहीं सुनेगा, और नाव नहीं लावेगा ?'

आरम्भमें यह ख्याल अच्छा मालूम हुआ, किन्तु विचारने के बाद मैंने इसे व्यर्थ समझा—"छोड़ो, इसकी जरुरत नहीं। वह विस्तरे पर चला गया होगा। यदि वह सुनेगा भी, तो अपनी अनेक कल्पनाओंमेंसे इसे भी एक समझ लेगा, क्योंकि यह निश्चय है, कि अबतक वह हमें भूल गया होगा।"

हरिने स्वीकारते हुए कहा—"अच्छा है, तुम दोनों जाओ, मैं यहाँ बैठा प्रतीक्षा कर रहा हूँ। यदि बहुत अन्धेरा भी हो जायेगा, तो भी मैं तुम्हें पुकार सकूँगा अथवा वत्ती दिखा सकूंगा।"

मैं--"बहुत ठीक आपने फर्म्माया। आप समझते हैं. कि हम आप को अकेले छोड़कर चले जायेंगे ? नहीं, जनाब तृतीय अफसर साहब ! यह हमारा इरादा नहीं है। मोहन, अपने सेवके फलाहारके बाद भी, खतम होचुका है, उसे भी जरा दम लेनेकी अवश्यकता है। मैं अकेला बंगलेको जारहा हूं, नाव लेने। आप इसके लिये कोई चिन्ता मत करें। भगेलू मुझे पहिचान भी सकेगा, और मोहन उसके लिये एक विचित्र जन्तुसा होगा, जिससे वह यदि भड़क भी जाय, तो कोई सन्देह नहीं।"

मेरा तर्क लाजवाब था, अन्तमें दोनोंको इसे स्वीकार करना पड़ा। हमने अपनी अपनी गठरी वहाँ बालूपर रख दी, और कम्बलों को बिछा दिया जिस पर कि दोनों आराम करें। अब मैं खाली हाथ था। किन्तु इसी समय मैंने एक भारी भूल की। मैंने अपने जेबसे पिस्तौल निकाल कर, मोहनके कम्बलके पास रख दिया, यद्यपि अबतक उसे मैंने बराबर साथ रक्खा था। अब मैंने किनारे किनारे जहां तक मुझसे

हो सकता था, जल्दी जल्दी आगे बढ़ना शुरू किया।

मेरे चले जानेके तीन मिनट बाद हरिकी नज़र मेरे रिवाल्वर पर पड़ी, वह आश्चर्य और भयसे ठक हो गये, उन्होंने अपने ओठ खोले और चाहा कि मुझे वापस बुलालें, किन्तु मेरी थकावटका ख्याल करके फिर मुंह वन्द कर लिया।

चतुर्दश अध्याय

बंगलेमें क्या देखा सुना।

मैंने पहिले कहा था, कि गुप्तसमुद्रकी लम्बाई एक मीलसे कुछ अधिक होगी। अतः मुझे डेढ़ मीलके करीब चलना था। अब अंधेरा हो गया था। मेरे पैरोंके नीचेकी काली रेत बड़ी चिकनी और चलने में मुश्किल थी। मैं एक पैर जमाकर जैसे ही दूसरा पैर उठाना चाहता था, वैसे ही पहिला अपनी जगहसे आधा कदम पीछे हट आता था। मैं आगे बढ़नेकी कोशिशमें बहुत जल्दी कर रहा था, किन्तु मुझे सफलता मिलती नहीं जान पड़ती थी। मैंने बालू छोड़ ऊपरसे चलना चाहा, तो देखा कि वह उससे भी कठिन और भयानक काम है। वहाँ रास्तेमें बड़े बड़े पत्थर पड़ते थे, जिनसे उस अंधेरेमें पैर तोड़ बैठना आसान था। मैंने लाचार फिर वही रास्ता पकड़ा। देर हो किन्तु सुरक्षित तो था।

यह कहना कठिन है, कि क्यों, जितना ही मैं आगे बढ़ता जाता था मेरी बेचैनी बढ़ती जाती थी। शायद उस भयंकर टापूमें उस पैशाचिक अंधकारमें, उस जादूके समुद्रके किनारे, यह पहिला समय था, जबकि मैं अकेला था। इसके अतिरिक्त हरिकी वह उत्सुकता थी, जिसके चिन्ह मैंने स्पष्ट उनके मुखमंडल पर देखे थे। यह सभी बातें एकत्रित होकर मेरे ऊपर इतना अधिकार जमा चुकी थीं, कि बंगलासे आवाज पहुँचने भरकी दूरी पर पहुँचते

पहुंचते मुझे चारों ओर कुआं, और भूत-प्रेतका ही भ्रम होने लगा था। इसमें सन्देह नहीं. यदि उस समय अकस्मात् कोई एक कंकड़ भी खरवड़ाता तो मैं चिल्लाकर भाग उठता।

कोई भी इस प्रकारकी घटना नहीं हुई। अन्तमें जो चीज मुझे दिखाई भो दी, वह मेरे लिये अधिक आनन्द दायक और उत्साहप्रद थी। यह एक रोशनी—लैम्पकी रोशनी थी, जो शनैः शनै अधिक स्पष्ट होती जातो थी, वह बँगलेको एक खिड़की द्वारा आरही थी। पहिले पहिल जब मैंने देखा, तो मुझे इतनी खुशी हुई, कि मैंने चाहा, कि बूढ़े भगेलूको आवाज दूं। किन्तु इस डरसे कि इस हल्लासे वेचारेको नाहक कष्ट होगा, मैं अपने इरादेसे बाज़ आया। इसके बाद फिर एकबार भय मेरे चारों ओर जमा होने लगा। यद्यपि यह बेवकूफी थी, यह मैं जानता हूँ किन्तु हुआ ऐसा ही।

फिर कोई बात बड़े जोरसे मेरे सामने आई।

समुद्र अब घोर अन्धकारमें था, किन्तु उसमें दूरतक 'पुष्पक' श्वेत ढाँचासा मालूम होता था। वह वहाँ उसी तरह था, जैसा कि मैंने उसे पहिले नीरव, मृत और महान् देखा था। मैंने थोड़ी देर ठहरकर देखना चाहा, किन्तु वहाँ कोई वस्तु स्पष्ट न थी। इसके बाद मेरी नजर घाटपर पड़ी, जहाँ छोटी डेंगी सदा खड़ी रहती थी। वह अब भी बड़ी मजबूतीके साथ बँधी, सुरक्षित थी, जैसा कि भगेलू दोनों वोटोंके बह जानेके बाद सावधानीसे किया करता था। मैं उसके ढाँचे मात्रको देख सकता था।... मैं थोड़ा और ठहरा, उत्सुकता पूर्णदृष्टिसे अन्धकारको चीरकर उसे फिर एक बार देखना चाहा। वह ढाँचा डेंगीका न था। निस्सन्देह, वह नाव

जिसे मैं अस्पष्ट देख सकता था. डेंगीसे अधिक बड़ी थी।

यह बहुत अच्छा हुआ, कि मैं वहाँ देखनेके लिये खड़ा हो गया। मैंने दो तीन लम्बी साँस लेकर स्वाँसगतिको साधारण कर दिया। उधर बालूमें चलनेसे आती हुई आवाज भी वन्द हो गई। इस सन्नाटेमें बँगलेकी ओरसे कुछ आवाज आती जान पड़ी।

उन शब्दोंके साथ मुझे धक्कासा मालूम हुआ। यह आवाज भगेलू के रामायण पढ़नेकी नहीं थी, यह दो प्रकारकी आवाज थी। इतनी दूरसे यद्यपि मैं यह निश्चय न कर सकता था, कि वह किन की है। किन्तु एक बात निश्चय होगई। मैं अब खबरदार हो गया। अब मुझे वहाँ भय और सन्देह अनुभव होने लगा। अब वह उत्सुकता और प्रसन्नता मुझसे दूर भाग गई थी। मैं इसी अवस्थामें दबे पाँव आगे बढ़ा।

अब मैं बँगलेसे पचास गजकी दूरीपर उससे कुछ नीचेकी ओर था। जब मैंने एक क्षण उधर ध्यान लगाकर सुना, तो मेरी अकल ठीक हो गई थी, और वहाँसे हटकर मैं एक सुरक्षित जगहमें चला आया। अब मैं तटसे समथर भूमिकी ओर घूमगया। यहाँसे मैं बगलमें, तथा पीछेसे भी होकर स्वेच्छानुसार बँगलाके पास जा सकता था। अब मैंने अपने जूतोंको खोलकर अलग कर दिया।

इस समय मेरे बढ़ते हुए आतंकने बड़ा अच्छा किया। अब मेरी घबराहट दूर हो गई थी, और मेरे दिलमें हिम्मत आगई थी, जो कि दस मिनट पहले मुश्किल थी। उस पैशाचिक द्वीपके अन्धकार और नीरवतामें भयकी अपेक्षा, जीवित शत्रु विशेष जानने योग्य वस्तु हैं। मैंने निश्चय कर लिया कि चाहे कुछ भी हो, देर किये

बिना वास्तविक खरेका पता लगाना आवश्यक है।

बँगलेकी पीछेकी ओर कोई खिड़की न थी, अतः उधरसे कुछ पता लगना असम्भव था। मैंने देखा था, कि प्रकाश उस कमरेसे आ रहा था. जिसमें अपने मालिकके नमूनोंकी खबरदारी करते हुए भगेलू सोता था। मैं बिल्लीकी भाँति दबे पाँव बंगलेके कोनेपर पहुंच गया. थोड़ी देर मैं वहाँ खड़ा होकर सुनता रहा, सचमुच वहाँ दो धीमी धीमी आवाज खण्डित वार्तालापकी थी। मुझे यह जानने में देरी न लगी, कि भाषा अंग्रेजी थी। बंगलेका दर्वाजा खुला हुआ था, और उसी प्रकार उस कमरेका भी दर्वाजा था, जिससे आवाज आ रही थीं।

धीरे धीरे सरकते हुए, मैं दर्वाजेके पास पहुंच गया, और झाँक कर भीतर देखा। यद्यपि द्वार आधा खुला था, किन्तु मैंने कुछ न देख पाया। कुछ भी देख पानेके लिये मुझे खिड़कीका सहारा लेना होगा। मैं अब खिसकते खिसकते जंगलेके पास जा पहुंचा। अपने आपको प्रथम. आड़में छिपाकर फिर जरा पीछे हटकर, मैंने अपने शिरको जरा आगे बढ़ाया, और अन्दर झाँका।

कमरेकी छोटी मेज खिड़कीके पास रखी हुई थी। इसी जगह महाराज अपने प्रति दिनके नमूनोंको रखकर उनका पृथक्करण और सूचीकरण करते थे। भगेलूके सोनेकी चारपाई हमेशा कमरेके बीचमें रहा करती थी। किन्तु उस समय स्थानमें कुछ परिवर्तन दिखाई पड़ा। मैं चारपाईको बिल्कुल न देख सका, अतः अनुमान हुआ कि शायद ख चकर खिड़कीकी आड़में कर दी गई हो। मेजके पास दो आदमी बैठे हुए थे, जिनके शब्द अब भी मैं

सुन रहा था। भगेलूकी लालटेन मेज पर उनके बीचमें खूब बल रही थी। उनके सामने एक बोतल शराब, कुछ प्याले तथा और खानेके वर्तन थे। वह खाना खा रहे होंगे, किन्तु वह समाप्त हो गया था, और अब शराबके साथ साथ बात कर रहे थे।

इतना सब जाननेसे पूर्व ही मैंने उन आदमियोंको पहिचान लिया। किन्तु अब उनके शिर नंगे थे, मैंने इसतरह उन्हें न देखा था। दाहिनी ओरके आदमीके बाल बहुत छोटे और प्रायः श्वेत थे, और दूसरेके लम्बे काले काले गर्दन पर पड़े हुए थे। एकका चेहरा स्थिर भूरा और पतला था, और दूसरेका भारी, गम्भीर शान्तिद्योतक, जिसमें मोटे लेन्सके चश्मोंके बीचमें गहरी आँखे थीं। एक आदमी कदका छोटा और फूर्तीला था, और दूसरा लम्बा, मजबूत और भारी था। पहिली ही वार देखनेके बाद मैंने उन्हें अच्छी तरह पहिचान लिया। एक मौडमूलरका कप्तान स्टुअर्ट जेक्सन था, और दूसरा उसका साथी चुप्पा भूगर्भशास्त्रका प्रोफेसर।

मुझे आश्चर्य होता है. जब मैं ख्याल करता हूं, कि इतना पहिचाननेके बाद क्यों नहीं मैं आनन्दके मारे चिल्ला उठा, तथा उनके स्वागतके लिये दौड़ गया। यह स्वाभाविक भी होता क्योंकि, हमलोग उनके आने की प्रतीक्षामें थे। किसने मुझे रोकदिया—बँचा लिया, यह और कुछ नहीं एक लड़कपन एक बदमाशी थी। मैंने आनन्द ध्वनि नहीं की, न दौड़कर घरमें घुस गया। पता लगनेके पहिले धक्केके बाद मैं चुपचाप यह जाननेके लिये खड़ा हो गया, कि क्या खबर है? और उसका हम सबसे क्या ताल्लुक है? तब मैं धीरेसे दर्वाजेके पास गया। मेरे दिलमें यह इच्छा न थी, कि मैं एक

दम उनके पास चला जाऊं, मैं खड़ा खड़ा सुनना चाहता था, कि वह क्या बात कर रहे हैं, और इसीमें जब कोई अनुकूल प्रकरण आयेगा, तो उसी समय मेरा नाटकीय प्रवेश होगा।

मेरे विचारको कार्य रूपमें परिणत करनेका अच्छा मौका था। बाहरी द्वार खुला था, और अन्दरका अधखुला। मुझे सिर्फ वराण्डेमें खड़े होकर अपने अवसरकी प्रतीक्षा करनी होगी। मैंने यह सब काम बारीकीसे, बिना किसी प्रकारकी आहट दिये किया। मैं दबे पांव वराण्डेमें कमरेके द्वारसे दो हाथके फासिले पर चला गया। यहाँसे उनकी बात चीत मैं स्पष्ट सुन सकता था। उनके द्वारसे लैम्प वराण्डेमें प्रकाश फेंक रही थी, जो मेरे पैरोंसे एक गजकी दूरी पर पड़ता था। उतने प्रकाशके अतिरिक्त बड़े द्वार तक सारा वराण्डा अन्धकारमें था।

पहिलेसे मैं पकड़ न सका, कि वह क्या बात कर रहे हैं, क्योंकि मेरा ध्यान एक दूसरी चीजकी ओर था। इसी वराण्डेमें, जहाँ प्रकाश पड़ता था, उससे जरा आगे अन्धेरेमें, ढेरसी ढीली बंधी हुई कोई चीज थी। उस रोशनीको लांघकर उसे पास जाकर मैं न देख सकता था, क्योंकि इससे मैं दिखाई पड़ जाता। मालूम होता था, कोई लम्बा चोगा या ओवरकोट है; जिसे मैंने समझा कि नवागतोंमेंसे किसीने शायद असावधानीसे वहाँ फेंक दिया हो। इससे आगे मैं कुछ न सोच सका और मैंने इस ख्यालको छोड़ दिया। लेकिन धीरे धीरे अन्धेरेमें मेरी आँखें अभ्यस्त होती जा रही थीं। उस ढेरके करीब ही कोई चीज थी जो अन्धकारसे पृथक् कुछ सफेदी लिये हुए थी। यह सफेद चीज थी, जान पड़ता था कि

आदमीका हाथ जोरसे बंधा हुआ है…… और उसके नीचेकी ओरका काला दाग, यह क्या था ? क्या पानी था ?

मैंने साँस थाम ली। मेरे दिलमें भय होना शुरू हुआ। मैं सोचनेमें असमर्थ था—मुझे ज्ञान न पड़ता था कि क्या सोचूं। एक मिनटमें इस अवस्थामें रहनेके बाद दूसरा स्पष्ट विचार आया आदमीका हाथ ? अगर यह सचमुच हाथ है, तो यह ढेर कोट ओवरकोट नहीं हो सकता।……यह अवश्य आदमी होगा……

अब भयानक आतंक मेरे उपर—सारे शरीर और मनपर छाने लगा। आदमी ! कोई आदमी ऐसी जगहपर सोना न स्वीकार करेगा……और तिस पर उस ढेरमें स्वास और हर्कतका पता न था। यदि यह आदमी ही है, तो अवश्य एक मृत मनुष्य हो सकता है। और वह दाग—जिसपर हाथ पड़ा है ! पानी ?

इसके बाद सन्नाटा मेरे आतंकका सन्नाटा। मैंने कमरेके भीतर से शब्द सुना। यह पहिला स्पष्ट शब्द कप्तान जेक्सनकेस्वरोंमें था—

"किन्तु मैं खून नहीं पसन्द करता !"

मालूम हुआ, जैसे यह मेरे प्रश्नका उत्तर है। यद्यपि यह भयंकर था, किन्तु मेरे लिये लाभदायक हुआ। मैंने छायामें पड़े उस ढेरकी ओर ख्यालको हटाया। मेरी दशा उस समय ऐसी हो गई. जैसे किसी बेहोश होकर गिरते हुए आदमी पर ठंडा पानी पड़ जाय। मैंने आत्मस्थ होनेका प्रयत्न किया, और सावधान तथा चिन्ताशील हो गया। मालूम हुआ, वराण्डेके रहस्यकी कुंजी कमरेके अन्दर है, और मैं इसे चाहता भी था।

कप्तानके शब्दोंके जवाबमें एक हँसी सुनाई पड़ी। इस उत्तरने

उस दुबले आदमीके दिलमें बेचैनी पैदा कर दी, और उसने अबकी और स्पष्ट करके कहा। मैं ज़रा और आगेको खिसका, कि ज़रा झुक कर वक्ताओंको देखूं। कप्तानकी पीठ मेरी ओर थी, और प्रोफेसर बगलमें, अपने साथीकी ओर न देखते, अपने पासके फर्शकी ओर देखते हुए बैठा था।

कप्तान—"नहीं, मैं खून नहीं पसन्द करता। और मेरी समझमें महाशय! आपको इससे बचना चाहता था। इसकी यथार्थमें कोई अवश्यकता न थी।"

प्रोफेसर अब भी ऊपरको ओर ताक रहा था, उसने अबको शब्दोंमें उत्तर दिया—"मत बेसमझ बनो। यह आदमी नहीं था, यह था केवल भूत—छाया। मैंने उसे सिर्फ कैदसे मुक्त कर दिया है। इसके अतिरिक्त, मैं क्या कर सकता? जब तक वह जीता हम इस निधि को हाथ न लगा सकते थे। तुम्हें मालूम है, उसके पास एक पिस्तौल थी। वह जो कुछ भी जानता था, बस यही जानता था, कि वह यहाँका चौकीदार है। किन्तु उसे वह नहीं मालूम था।"

सन्तुष्ट करनेके लिये यह स्पष्ट गम्भीर तर्क था। इसका एक एक वाक्य हथौड़ेकी चोट थी। कप्तान जेक्सनने थोड़ी देर कुछ न उत्तर दिया, और जब दिया, तो वह स्थान भ्रष्ट हो चुके थे। कप्तान—"जो कुछ भी हो, यह खेदजनक है। यदि और किसीने जान लिया, तो मामला भयानक हो जायगा।"

प्रोफेसर—"हाँ, सचमुच यह खेदजनक है। किन्तु हम दोनोंके अतिरिक्त कोई नहीं जान सकता।"

मालूम हुआ, इन मिठुर दलीलोंसे कप्तानको सन्तोष हो गया।

उसने गिलास मुंहमें लगाया. जिस समय वह इसप्रकार शराब पी रहा था, मैंने देखा उसका रिवाल्वर उसके हाथके नीचे मेज पर लैम्पके नीचे रक्खा है। इसी समय मुझे स्मरण हो आया, कि मैं अपने रिवाल्वरको छोड़ आया। ओह! मैं कैसा बेवकूफ गदहा था! एक घूँट लेकर उसने पैंतड़ा बदल दिया—

"मैं स्वीकार करता हूँ, प्रोफेसर! कि तुम्हारे पास उत्तरकी दरिद्रता नहीं है, और जो कुछ तुम कहते हो, वह एक प्रवल तर्क पर अवलंबित होता है।····किन्तु संयोगका भी ख्याल करना चाहिये···· क्योंकि संयोग मिल सकता है।"

प्रोफेसर—"किन्तु इस काममें नहीं। यहाँ सब चीज पक्की है।"

कप्तान—"हाँ, ठीक जहाँ तक किया जा सकता है। मैं यह कहनेके लिये विल्कुल तय्यार हूँ कि आप इसमें उस्ताद हैं। किन्तु यहाँ एक और मार्ग है, उस गुफा वाला। मैं उसे विल्कुल नहीं पसन्द करता। किन्तु कुछ भी हो, वह एक ऐसी चीज है, जिससे संयोग भिड़ सकता है।"

तब प्रोफेसरने अपने शिरको ऊपर उठाया, और मोटे मोटे चश्मोंके भीतरसे अपने साथी पर उसने एक गम्भीर नज़र डाली। उसने कहा—

"उस गुफाको मैं आप पर छोड़ता हूँ। यह आपका काम है। किन्तु मुझे उसका डर नहीं है। हम लोग कुशलपूर्वक जहाज पर पहुंच सकते हैं।"

थोड़ी देरके ..... बाद कप्तानने धीमे स्वरमें कहा—

"और तब ?"

प्रोफेसर—" उसके बाद घर, अपनी निधिकी परीक्षामें, जैसाकि मैंने कहा। तब जैक्सन ! तुम्हारे लिये एक अच्छा इनाम; जो तुम्हें जिन्दगी भरके लिये मालामाल कर देगा—यदि हमारी निधि निराशाजनक न हुई।"

कप्तान जैक्सन फिर चुप हो गया, किन्तु एक ही मिनटके लिये। अब मुझे उसके ढंगसे मालूम होने लगा, कि उस पर शराबका असर हो आया है।

कप्तान—"और यदि यह निराशाजनक नहीं हुई तो प्रोफेसर! यह कहाँ जायगा ? क्या उसके पास जिसके राज्यमें यह चट्टानें हैं या उस बेचारेके उत्तराधिकारियोंके पास जिसने पहिले पहिल इस गुप्तकोषको ढूंढ़ निकाला ? या उनकेलिये कुछ भाग ? क्या ऐसे प्रश्नोंकी भी कोई अवश्यकता है।"

एक वार हँसते हुए प्रोफेसरने अपनी तीखी नज़रको अपने साथीकेचेहरे पर गड़ाकर कहा—"नहीं, जैक्सन ! इसके पूछनेकी कोई अवश्यकता नहीं।"

कप्तान—"यह ठीक है। मुझे दो टूक बात अच्छी मालूम होती है। तो आप इसकी सूचना न ब्राजीलवालोंको देने जा रहे हैं, और न संयुक्त-राष्ट्र अमेरिकावालोंको।"

प्रोफेसर—"हाँ ! कप्तान, इसके वारेमें मैं समझता हूँ आपको रोड़ा न अड़काना होगा, आप अपना हिस्सा लीजिये, और अल्ला-अल्ला-खैर-सल्ला"।

अब कप्तान कुछ होशमें आते हुए—"हाँ, प्रोफेसर, मैं आपका

अपमान करनेके ख्यालसे नहीं पूछ रहा था, अच्छा जाने दीजिये। लेकिन क्या हमलोग रात भर उस भूतको वराण्डामें रखे इस घरमें सोयेंगे या उसे किसी ठौर ठिकाने लगाना होगा।"

प्रोफेसर—"क्यों ? मुझे इसमें कोई हर्ज नहीं है, किन्तु यदि तुम्हारी इच्छा हो, तो इसे पानीमें फेंक आओ।"

कप्तान—"नहीं, जनाब, मैं नहीं। मैंने कह दिया, कि मुझे खूत पसन्द नहीं है। मैं बड़ा कृतज्ञ हूँगा, यदि आप स्वयं इसे करेंगे।"

मैंने प्रोफेसरकी ओरसे स्वीकार होनेका सा संकेत पाया। उसी समय मैं दबे पाँव वहाँसे बाहर निकल गया। कुछ ही देरमें मैं एक चट्टानकी आड़में चला गया, जो बंगलेके दर्वाजेसे दस हाथ पर अन्धेरे में थी। वहाँसे एक मिनटके बाद मैंने देखा एक आदमीके हाँथमें एक लम्बी गठरी सी है। वह आगे बढ़ा और थोड़ी देरमें मैंने पानीमें किसी चीजके गिरनेकी सी आवाज सुनी। तब वह आदमी बंगलेकी ओर लौटकर उसमें घुस गया, और उसने द्वार बन्द कर लिया।

पञ्चदश अध्याय

पुष्पकका अन्त।

हरि और मोहन मेरे लिये अब कुछ उत्सुक होने लगे थे। मुझे गये दो घंटे हो गये थे। यद्यपि हमने अन्दाज किया था कि इसके आधे ही समयमें बंगलेपर जा और नाव द्वारा लौट भी आऊंगा। नाव द्वारा लौटनेके ख्यालसे उनका ध्यान बराबर समुद्रकी ओर था। बहुत देरकी प्रतीक्षाके बाद उन्हें जानपड़ा कि दूर पानीके छींटा उठनेकी सी आवाज आई। निस्सन्देह उन्होंने इसे सुना होगा, किन्तु यह वही भगेलूकी अन्त्येष्टि थी।

इसके बाद वह लोग विश्वास और उत्सुकता भरे हृदयसे प्रतीक्षा करने लगे। उन्होंने निश्चय कर लिया कि, मैं चला आरहा हूँ, और यह ठीक भी था, किन्तु उस मार्गसे नहीं। कोई एक घंटा बीत गया, हारा थका, पसोने पसीने भय और घबराहटसे आधा पागलसामैं उनके पास पहुंचा। आप अनुमान कर सकते हैं, कि मेरी भीषण कथा सुनकर उनके हृदय पर कैसा प्रभाव पड़ा होगा।

"बंगला—डाकू हत्यारे! उन्होंने गरीब भगेलूको मार डाला—और समुद्रमें फेंक दिया। पहिले पहिल मैं बहुत घबराया हुआ था। मेरे मुंहसे बात तक न निकलती थी, क्योंकि मैंने अपनी आँखोंसे उस भयानक अभिनयका उपसंहार देखा था। मैंने समझ लिया, कि कथाको अच्छी तरह सुनानेके लिए स्वस्थ होनेकी अवश्यकता है।

फिर वहीं बैठकर साँस लेने लगा। मोहनने एक गिलास शर्बत देकर और अच्छा किया। फिर कम्बल पर झुके हुए मैंने एक एक करके सारी बात कह सुनाई।

एक बार सबके चेहरे पर सन्नाटा छा गया। उन के ढंगसे मुझे मालूम हुआ, कि इसका असर उन पर भी मुझसे कम नहीं हुआ है। जब मैं कथा कह रहा था, तो मेरे ऊपर प्रश्नोंकी बौछार पड़ने लगी। यथाशक्ति मैंने उत्तर देनेका प्रयत्न किया। फिर उन्होंने इसे असन्दिग्ध यथार्थ स्वीकार कर लिया। हरिके हृदयमें बूढ़े भगेलूके दुर्भाग्यहीपर सन्ताप नहीं था, किन्तु जान पड़ता था उनका ध्यान किसी और चीजकी ओर भी गया। उन्होंने बदला लेनेका प्रस्ताव ही नहीं उठाया। उन्होंने दृढ़तासे कहा—

"चढ़ाई करनेका ख्याल ही फ़जूल है। पहिली बात तो यह कि इन पैरोंसे मैं वहाँ पहुँच ही नहीं सकता, और दूसरे इससे कोई लाभ नहीं।"

मैंने विरोध किया—"हमारे पास दो रिवाल्वर हैं।"

हरि—"और उतने ही उनके पास भी हैं माधव। अधिक नहीं हों तो भी वह उनके प्रयोगको तुमसे अच्छा जानते हैं। वह हैं भी सुरक्षित स्थानमें। यदि तुम वहाँ गये, तो वह खिड़कीसे ही तुमपर फैर करेंगे।"

मैं—"तो फिर बेचारा भगेलू?"

हरि—"हाँ, ठीक, यह बड़ी ही गर्हित हत्या है, और इसका बदला अवश्य मिलना चाहिये। किन्तु उसके खूनके बदले हमें नाहक और खून न करने चाहिये। हमें भी एक बड़ी चाल चलनी

होगी, जानते हो न, वह बड़े ही चालबाज हैं ?"

मोहन बोल उठा—"खास करके प्रोफेसर।"

हरिने शिर हिलाकर स्वीकार किया। तब मैंने अपनी बात छोड़ दी। हम लोगोंके सामने एक बड़ा काम है, यह हमारे नेताके चेहरेसे मालूम होता था।

मैंने, कुछ न सोच सकते हुए कहा—"हमें क्या करना चाहिये ?"

हरि—"पहिले तो हमें तटसे हट जाना चाहिये, नहीं तो सवेरे शायद वह रोशनी या उजालेमें देख लेंगे। और यदि एक बार भी उन्होंने हमें देख लिया, तो वे हमारा सर्वनाश किये बिना न छोड़ेंगे।...एक खून दूसरे खूनके लिये मजबूर कर देता है, समझे! ....पीछेकी चट्टानोंमें हमें रातभर शरण लेनी चाहिये। फिर सवेरा होनेपर देखा जायगा, कि हमें क्या करना चाहिये।"

यह स्पष्ट और पक्की सलाह थी। इसमें जोशीलापन और उभाड़नेकी बात न थी। जोशीली और सीधी सादी होनेपर भी यह एक युद्ध घोषणा थी, जो एक ऐसे आदमी की ओरसे हुई थी, जो कि बहुतही विचारशील और हृदयका अत्यन्त दृढ़ था। जिसको अपने मन्सूबेसे डिगाना टेढ़ी खीर थी। जब मैंने यह देखा, तो मैं अपने ख्यालको छोड़ दिलसे उसका अनुयायी बना। मेरा स्वभाव है, चतुर और शान्त मस्तिष्कका अनुसरण करना। मैंने अपने हृदयमें दृढ़ संकल्प कर लिया कि चाहे कुछ भी हो इस युद्धमें उस दिमागके पीछे पीछे मैं अन्तिम समय तक लड़ूंगा। चाहे जहाँ भी वह भेजेगा, मैं जानेके लिये तय्यार रहूँगा।

अब हम अपने मुकामको वहाँसे तोड़ कर, थोड़ी दूर पीछे हट दो चट्टानोंके दर्मियानमें रक्खा । यद्यपि मार्ग वही था जिससे हम आये थे, और मारे भयके मोमबत्तोभी हम जला न सकते थे, किन्तु सौभाग्यसे हमैं वहाँ जानेमें कोई चोट फोट न आई । यह नई जगह सुरक्षित थी । यहाँ पर कम्बल विछानेके लिये भी हमें स्थान मिल गया । हरिके पैरमें दर्द था, और उसका जल्दी अच्छा हो जाना भी हमको अभीष्ट था, अतः अब उसकी चिकित्सा शुरू हुई ॥ मैंने थोड़ी स्टोव जलानेकी स्प्रिट निकाली और उसीसे पैरको पहिले धीरे धीरे फिर अच्छी तरह मलना शुरू किया । घण्टोंकी मालिशके वाद जब उसमें छूनेसे दर्द न जान पड़ता था, तब हरिके मोजेके साथ अपने भी दोनों मोजोंको पहिनाकर कपड़ेसे उसे कसकर बाँध दिया । हरिने दूसरे दिन कहा, कि यदि यह चिकित्सा न हुई होती, तो वह दूसरे ही दिन टहलने लायक न हो गये होते ।

कुछ देर तक तो इसी काममें रहे, उसके वाद भी नींदका आना कठिन हो गया । हम धीरे धीरे बात चीत करने लगे । हरिने बताया, कि उनके दिलमें क्या क्या ख्याल आ रहा है ।

हरि—"वह सवेरे यहाँसे चले जाँयगे । बहुत सम्भव है, वह ज्वारकी प्रतीक्षा कर रहे हैं । वह किसी तरह भी गुफाके अन्धकार की ओर कदम न रक्खेंगे । जिस वोटको तुमने माधव ! वहाँ खड़ा देखा था, निस्सन्देह वह उनका छोटा अगिनवोट था । तुमको याद होगा, उनके जहाजपर एक ऐसी नाव थी ।"

मैं—"हाँ, मैंने देखा था ।"

हरि—"और जब वह चले जाँय तो हम खुशीसे बंगले पर

चल सकते हैं। अब इसको सम्भावना नहीं है, कि वह फिर लौटकर आयेंगे। उनका मनोरथ पूर्ण हो गया, अब वह किसी प्रकार निकल भागना ही पसन्द करेंगे।"

मैंने उत्सुकतासे कहा—"लेकिन क्या था, जिसे वह चाहते थे? और वह निधि क्या थो, जिसकी बात डेलिंग करता था?"

हरि थोड़ी देर चुप रहे फिर बोले—"अच्छा, मेरे दिलमें एक ख्याल आ रहा है, किन्तु जबतक कुछ और न मालूम हो जाय, मैं उसे कहना नहीं चाहता। वह स्वयं भी उस विषयमें निश्चित न थे। तुमने उन्हें हताश होनेकी आशंका करते हुए भी सुना था? किन्तु यदि एकबार मैं बंगलाको अच्छी प्रकार देख सका, तो इसके बारेमें दृढ़तापूर्वक कह सकूंगा।"

मेरे दिमागमें भी एक कल्पना थी, जो शायद कल्पना नहीं किन्तु उससे कुछ अधिक—कुछ निश्चय सा था, किन्तु जब मैंने देखा, कि उन्होंने बात इस तरह टाल दी, तो मैंने भी अपने ख्यालको दिलहीमें रख छोड़ा। मोहन एक कदम आगे बढ़ा और बोला—

"उनके ख्यालमें वह कोई अच्छी चीज थो, अन्यथा वह हत्या करने पर उतारू न होते।"

हरि—"हाँ, किन्तु यह भी तुम्हें याद रखना चाहिये, कि डेलिंग जैसा आदमी एक मनुष्यके प्राणको वैसा ही नहीं समझता, जैसा कि हम समझते हैं। क्योंकि वह वैज्ञानिक है, और वैज्ञानिकों के कितने अपने सिद्धान्त हैं, जिन्हें सुनकर साधारण आदमी घबरा उठेंगे। दूसरे वह स्वार्थी था, जानते हो न 'अर्थी दोषं न पश्यति'।"

मैं—"किन्तु बूढ़े भगेलूको मार कर तो उसने आफत मोल ले

ली, यदि इसका पता लगा, तो अवश्य गिरफ्तार होकर दण्डित होना होगा ?"

हरि—"हाँ, तब भी उसे अपनी करनी पर असन्तोष नहीं हुआ। इसका एक मात्र साक्षी कप्तान है, दूसरे किसीकी उपस्थितिका उसे गुमान तक नहीं है। और कप्तानके लिये तुम्हें निश्चय है, कि उसे शपथ उठाते देरी न लगेगी। वह यह भी कह सकते हैं, कि धोखेसे हो गया। या इससे भी एक कदम आगे—उन्होंने आत्मरक्षाके लिये गोली चलाई। तुम जानते हो, भगेलूके पास एक रिवाल्वर था, और वह अवश्य अपने स्वामीकी सम्पत्तिके लिये जान तक दे दिये होता। निस्सन्देह उस सच्चे आदमीने इसी स्वामि-भक्तिमें अपने प्राण अर्पण किये। गिरफ्तारीके लिये तुम्हारी बात तक भी माधव! अच्छी तरह नहीं सुनी जा सकती है। समझे ?"

अब मैंने देखा और अनुभव किया, कि बात उतनी आसान न थी, जैसी कि मैंने ख्याल की थी। अब मैंने उनकी बातचीतका एक दूसरा अंश लिया—

"उसका इससे क्या अभिप्राय था, जब कि वह कह रहा था, यदि एक सप्ताह और चला जाता, तो फिर बात असम्भव हो जाती; फिर अवसर सदाके लिये हाथसे निकल जाता।"

हरि—"इसके विषयमें मैं कुछ नहीं कह सकता। मैं इसपर विचार कर रहा था, किन्तु मुझे कुछ भी नहीं समझ पड़ता। शायद इसका पता आगे चलकर लगे।"

इस तरह हम इस विषय पर उलट पलटकर कई तरहसे वार्तालाप करते रहे। आखिरकार प्रकृतिने मजबूर किया। निद्रा भगवतीको

पधरावनी हुई। मोहन सबसे पहिले चरणोंमें झुका। जब मैंने उसकी ओर देखा, तो उसका शिर कम्बल पर पड़ा हुआ था। हमने निद्रा-भंग होनेके भयसे अब बात करनी छोड़ दी। हरिका पैर अब अच्छा था। जराही देरमें उन्होंने भी आत्म-समर्पण किया। पहिले मैंने अपने इरादोंको दृढ़ रखा, मैं नहीं झुकना चाहता था। किन्तु अन्तमें मुझे भी परास्त होना पड़ा। यह ख्याल था कि सवेरे इनसे पूर्वही मैं जाग उठूँगा।

धीरे धीरे निद्राकी मोहनी गोदका प्रभाव मेरे ऊपर पड़ने लगा। पहिले पलकोंने अपना काम बन्द किया, फिर आँखोंके भीतरकी ओर पर्दा पड़ने लगा, अभी यह गाढ़ा न हो पाया था, कि मुझे स्मरण है, मैंने कुछ सुना। क्या सुना यह अस्पष्ट था। किन्तु सवेरे उठनेके बादभी मुझे इसका स्मरण बना रहा। यह कोई आवाज थी, जो गुप्तसमुद्रकी ओरसे आई। किनारे पर कुछ ऊंचे पानीकी थप-थपाहटसी जान पड़ी, किन्तु इससे मेरी निद्रामें विघ्न नहीं हुआ। मैंने भी, हाँ मैंने एक सच्ची ध्वनि सुनी थी। इसके बाद मैं गाढ़ निद्रामें पड़ गया।

जब मेरी नींद टूटी, तो मैंने अनुभव किया, कोई चीज मेरे शरीरमें लग गई है, यह चीज हरिका हाथ था। हरिने कहा कि मुझे तुम्हें जगानेमें कुछ दिक्कत पड़ी है, तुम खूब सो गये थे। किन्तु मुझे मालूम हुआ, कि मैं पहिली ही बारके हाथ लगानेमें जग गया हूं। अब दिनका उजाला खूब फैल गया था। हरि पेटके बल पड़े चट्टानोंके बीचसे दूसरी ओर कुछ देख रहे थे।

हरि—"हल्ला मत करो, और अंगुली भी देखो न दीखपड़ने पावे। बिना अपने आपको दिखाये, देखना हो तो देखो।"

मैं अब विल्कुल चुस्त हो गया था। मोहन अबभी खर्राटे भर रहा था। एकबार उसकी ओर देखकर मुझे मुस्कुराहट आगई। फिर मैं सरक कर चट्टानके दूसरे सिरेकी आड़में चला गया। यहांसे मुझे देखनेका अच्छा अवसर था। मेरे सन्मुख सारा गुप्तसमुद्र और बड़ी गुफावाला उसका मुहाना अच्छी तरह दिखाई पड़ रहा था।

उस नीरवतामें मेरी आँखोंके सामने सभी चीजें जीवित मालूम होती थीं। मैंने पहिले बंगलेकी ओर देखा। थोड़ी देरमें उसमें से घना धुआँ निकलता दिखाई पड़ा। फिर घाटसे एक नाव खुली, और उसका मुँह सीधा मुहानेकी ओर था। उसपर दो आदमी बैठे थे। एक छोटा और दुबला, दूसरा मोटा ताजा। नावमें दाँड़ पतवार कुछ नहीं था। समुद्रमें और कितनी चीजें जगह जगह तैर रही थीं, परन्तु मालूम होता था, वह उनका कुछ ध्यान न करते थे। उन्होंने सीधा मुहानेका रास्ता लिया जो अब ज्वारसे भर गया था। उन्होंने एकबार भी फिरकर पीछेकी ओर नहीं देखा।

अब वहाँ फैलते हुए धुएँके नीचे वह बंगला था और वही नीला गुप्तसमुद्र जिसपर कुछ चीजें तैर रही थीं।

तब मैंने देखा, दृश्यमें कुछ नवीनता है, कुछ भारी आशंका है। मैं फिर ख्याल करके देखने लगा। कोई चीज जैसे गुम हो गई है। क्या नहीं है? और तब एक बड़े धक्केकी सूरतमें बड़ीघबराहटमें सत्य दिखलाई पड़ा। इसके दो ही सेकण्ड बाद हरिने उद्विग्न स्वर में कहा—

"पुष्पक खतम !'

हाँ यही चीज थी, जिससे दृश्यमें भयानकता दिखाई पड़ती थी। सुन्दर जहाज लुप्त होगया । पहिले यह बात अविश्वासास्पद ज्ञान पड़ी, किन्तु थोड़ी देर बाद हम आँखोंको धोखा दे न सकते थे। अब 'पुष्पक' वहाँ लंगर डाले हुए न दिखाई पड़ता था। वह सर्वदाके लिये विलीन हो गया।

"उसे भी वह साथ लेते गये।" मैंने घबराहटके साथ चिल्ला कर कहा। इस चिल्लाहट पर मोहनकी भी नींद टूट गयी और वह उठ बैठा, किन्तु हमने इसका ख्याल नहीं किया था। इसी समय हरिका पीला और उद्विग्नतापूर्ण मुंह मेरी ओर घूमा।

हरि—"यह असम्भव है। उसको उन्होंने डुबा दिया।"

मोहन भी अब मेरी बगलमें आ गया। हरिने और स्पष्ट करते हुए कहा—"वह वहाँ रात था, हमसभोंने उसे देखा था; किन्तु उसके बाहर जानेको हमने बिल्कुल नहीं देखा। कप्तान खूब जानता है, कि कैसे उसके साथ चाल चली जा सकती है, धीरे धीरे उसमें फिर पानी भरने लगा होगा, और रातमें किसी वक्त आखिर को वह डूब गया।"

मैं चिल्ला उठा—"हाँ, मैंने रातको कोई आवाज सुनी थी। पहिले एक चमकनेकी आवाज सुनाई दी, फिर बड़ी बड़ी लहरोंकी किनारे पर थपथपाहट। किन्तु उस समय मेरे मस्तिष्क पर निद्राका आधा अधिकार जम चुका था।"

हरि—"वह आवाज पुष्पकके डूबनेकी थी। आः राक्षसो!"

मोहन और मैं एक दूसरेकी ओर घबराहटसे ताकने लगे।

अवस्था भयानक थी । यकायक हरि चिल्ला उठे—

"हाय ! उन्होंने बंगलेमें भी आग लगा दी।"

मुझे इसको मालूम करते जरा भी देर न लगी । उतना घना धुआँ भगेलूके चूल्हे का नहीं हो सकता था। और यह चिम्नीसे भी तो नहीं निकल रहा था । वास्तवमें यह उस छोटे घरकी एक खिड़कीसे निकल रहा था। हरिने एक ठंडी साँस ली फिर कहा—

"लेकिन मैं दौड़नेमें असमर्थ हूँ। देखो भाईयो ! तुम्हीं जाकर इसे करो । यह रिवाल्वर उठा लो, और चल दो । यदि वह नरपिशाच लौट कर आवें, देखते मात्र शूट कर देना। कैसे भी बंगला बचाओ। यदि अब भी अन्दर जाया जा सकता हो, तो लकड़ी पत्थर जो हाथ आवे, पहिले उससे आगको ढाँक दो। तेलके कनस्तरोंको जहाँतक जल्दी हो सके, दूर रख आना। जितनी भी रसद बचाते बने बचाना और उसे अलग करके रख रख आना। वह हमारे लिये जीवनाधार हैं। उनके विना हम मरे दाखिल हैं। सावधानीके साथ जल्दी जाओ, जल्दी, दौड़ो। मैं भी जितना जल्दी हो सकता है आ रहा हूँ।

हमें अब दूसरी वार कहनेकी अवश्यकता न थी। हम साँस लेने के लिये भी भूल गये। जब वहाँसे हम दौड़ने लगे तो हमने उन्हें, कड़कती आवाजमें कहते सुना—

"हा, राक्षसो, नरपिशाचो !"

षोडश अध्याय

हमारा घनिष्ठ संघ ।

हम वहाँसे जान छोड़कर दौड़े । रास्तेमें हम साँस भी लेना भूल गये। जल्दी पहुंचने और आगे भयंकर दृश्यके ख्यालने हमें उस समय हमारेमें पागलोंकीसी ताक़त भर दी थी। क़दम क़दम पर, उत्सुकताके साथ हमारे दौड़नेकी गति भी बढ़ती जाती थी। हमने समझ लिया था, कि यही जल्दोका अन्तिम अवसर है। मेरे साथ साथ बेचारा मोहन भी जी तोड़ कर दौड़ा चला आ रहा था। वह मुझसे आगे चला जाता, किन्तु नौ दिनके फलाहारने उसकी ताक़त आधी कर दी थी। जिस समय हम वहाँ पहुंच गये, तो उस समय हमारे सामने काम था, और कुछ नहीं।

हमने वहाँ पहुंचकर देखा कि अभी बंगला लपटमें नहीं है। खिड़कीसे धुआँ अधिक परिमाणमें निकल रहा था । आग हमें दिखलाई नहीं देती थी, किन्तु दिखाई देता था कि अधिक धुआँ उसी कमरेसे निकल रहा है, जिसमें रात दोनों शराब पीते थे। थोड़ा थोड़ा धुआँ दूसरे कमरेकी खिड़की और बड़े द्वारसे भी निकल रहा था। जब मैं बाहरकी ओर देख रहा था, मोहन वराण्डेमें घुस आया । वहां उस धुएँका इतना अन्धेरा था, कि किसी चीजका देखना असम्भव था। ढूंढते हुए यकायक दोनोंने एक साथ ही अन्धेरेमें हिलती, जगती और धीमी होती जाती एक

छोटीसी लौ देखी। फर्श पर पड़े हुए किसी प्रकारके ढेरसे यह निकलनेकी कोशिश कर रही थी। हमने समझ लिया, कि यहाँ असली खतरा है। पीछे हमने देखा वहाँ टुकड़े किये हुए कागजों, पुस्तकों, और बिछौनेके कपड़ोंको जमाकरके उनपर मिट्टीका तेल छिड़का हुआ है।

हमने अपना काम बाकायदा करना आरम्भ किया। पहिले दूसरे कमरेसे बहुतसा कपड़ा ढो ढो कर हमने उस ढेरको चारों ओरसे खूब मूंद दिया, जिसमें ताजी हवा इस छोटेसे भयंकर शत्रुसे न मिलने पावे। फिर कागजोंको अलग किया, तेलमें भीगे हुए कपड़ोंको दूरकिया, एवं क्रमशः स्थानको धूएँसे खाली कर दिया। तब हमने दम लिया।

मोहन—"जो दश ही मिनट और देर हो जाती, तो काम हाथ से बेहाथ था। अभी हो आग बढ़ने लगी थी। उन लोगोंने बहुतसा कागज डालकर आग लगानेमें भूलकी थी।"

मैं—"उनको यह क्या मालूम था कि यहाँ हम लोग आ रहे हैं। जो आकर हमने अलग अलग न किया होता तो फिर यह आग बड़े जोरकी हो जाती।"......ओ हो! यह देखो।"

यहाँ कोई चीज थी जिसे हम दोनोंमेंसे किसीने नहीं देखा था। यह छोटे मेजके बिल्कुल नीचे थी। यह विचित्र वस्तु बहुतही साफ, वर्गाकार छिद्र था, जो दो तख्तोंमें कटा हुआ और कम्बलसे ढाँका हुआ था।

मोहनने गम्भीरतापूर्वक कहा—"यह एक छिद्रसा है। हाँ, सचमुच छिद्र। वह देखो काठका टुकड़ा, मालूम होता है, इसका ढक्कन है।

यह उसपर ठीक आजाता है ।"

तख्ता अब कमरेमें दीवारके सहारे खड़ा था । मैंने आगे बढ़कर मेजको घुमा दिया, कि नीचे देखूं । वहाँ कोई भय करनेकी चीज न थी, वह एक खाली छिद्र था ।

मैं—"बूढ़े भगेलूकी चारपाई यहाँ खड़ी रहती थी, और कम्बल भी था । मैं समझता हूं, चारपाई जान बूझ कर यहाँ रक्खी रहती थी । मुझे इसका बड़ा ख्याल होता था, कि क्यों यहाँ बीचोंबीचमें चारपाई बिछी है ।"

मोहन—"हूं, यही सन्देह डाकूओंके दिलमें भी आया होगा । फिर उन्होंने खोजना आरम्भ किया, किन्तु बूढ़ा भगेलू उनके रास्ते का काँटा था, और मारा गया । लेकिन क्या चीज थी वह यहां गड़ी हुई ?"

सचमुच । किन्तु मैं नहीं बता सकता था । और अपने कच्चे विचारको अभी सामने रखनेमें मैं हिचकता था, कि शायद वह मूर्खता-पूर्ण हो ।

मैं—"अच्छा है, चलो अब हरिके पास चलें । उन्हें हमारी सहायता अपेक्षित होगी । और जब वह यहाँ आकर सब चीज देखेंगे, तो मोहन, सबकी कुंजीका मिलना दो मिनटका काम होगा ।"

अब हम हरिकी ओर चले, जो किनारे किनारे आरहे थे और अभी आधी मील दूर थे । जब सब कथा कहते कहते समाप्त हुई तो हम बंगलेपर पहुंच गये थे । अन्दर आने पर वह एक कुर्सीपर बैठ गये और एकबार नजर दौड़ाकर उन्होंने सभी चीजें देखीं ।

हरि—"ओफ ! उन्होंने सचमुच सभी चीजें बर्बाद करनी चाही

थीं। उन्होंने बूढ़ेको मार डाला, जहाजको डुबा दिया और मकान के जलानेके साथ सारे कागज पत्रको भी नष्ट कर देना चाहा था। एक एकको खोज खोज कर चौपट करनेका उनका इरादा था।

हरि इस समय अपनी प्रकृतिके विरुद्ध बड़े कड़वे हो गये थे। उनकी इस सारी बातमें उस कड़वाहटकी मात्रा पूरी दीख पड़ रही थी। जैसे ही उन्होंने अपनी बात समाप्त की; मैंने उनकी दृष्टिको देखा वह तीखी थीं। उससे अब असहायपन, घबराहट, क्रोध एक साथ मिले झलक रहे थे।"

मोहन—"यह सब समाप्त होचुका होता, जो आपने हमें जल्दी न भेजा होता, किन्तु हमने सब ठीक कर लिया।"

हरिके होठों पर एक टेढ़ीसी मुस्कुराहट थी—"जो कुछ भी हुआ सो हुआ, अब हमें देखना है, कि उन्होंने क्या हमारे वास्ते छोड़ा है। उन्होंने इन सारी ही पुस्तकोंको जलाकर खाक कर देनेकी कोशिश की थी। मैं समझता हूं, तबतक मैं इनको ठीकसे लगाता हूं, जब तककि माधव ! तुम जलपान तय्यार करते हो। क्यों ?"

मैंने और मोहनने एकसाथ हाँ कहा। तब मैं मोहनको रसोई घरकी ओर लेगया, कि कुछ गर्म गर्म नाश्ता तय्यार किया जाय। पन्ने पन्ने जोड़नेसे मुझे यह अच्छा भी मालूम हुआ। हमारा मन उसमें लगा था, यद्यपि बीच बीचमें उन नृशंसों के लौट आनेका ख्याल आ जाता था। हमें तबतक हरिका स्मरण न आया, जब तककि खाना तय्यार होजानेपर उनके बुलानेकी जरूरत न हुई। मैं पुकारनेके बदले उन्हें लिवाने वहां चला गया, जहांकि मैं उन्हें कुर्सी पर छोड़ आया था। देखा, उनके सामने छोटी

मेज़पर किसी हस्त लिखित पुस्तकके अलग अलग किये पन्ने रखे हुए हैं। अपना काम समाप्त कर अब वह जँगलेकी ओर देख रहे थे।

मैं—"जलपान परोसा तय्यार है, भाई साहेब !"

हरि—"धन्यवाद, बड़ी खुशखबरी।"

वह मेरे साथ वहांसे रसोई-घरमें आये।

मोहन—"मैंने जब पहिले इस घरको देखा तो, मुझे मालूम हुआ मैं जैसे दार्जिलिंगमें मामाके घरमें हूं। आह ! कैसा सुन्दर ख्याल। धन्य जन्मभूमि !"

जन्मभूमिके नामनेही मेरे हृदयमें आनन्दकी धारा प्रवाहित कर दी, किन्तु उसी समय मेरे चित्तमें एक बातका ध्यान आया औरमैंने घाटकी ओर देखकर कहा—

"और डेंगी कहां गयी ?"

हरि इसपर पहलेही विचार कर चुके थे—"वह भी समाप्त, सम्भवतः डुबा दीगई।"

मैं—"डुबा दी गई ! तबतो उसके बिना हमलोग सर्वथा निस्सहाय हैं। अब इस जेलसे निकलना असम्भव है।"

हरि (शान्तिपूर्वक)—"हाँ, इस समय।"

यह निराशाकी शान्ति न थी यद्यपि पहिले-पहल यह वैसी ही जान पड़ी।

हरि—"इस उपायसे नहीं, हम किसी दूसरे उपायके लिये सलाह करेंगे.....जरासी और भाजी मोहन ! इस समय हमारे सामने यह काम है। इसे समाप्त कर फिर तब दूसरे पर पैर रक्खा जायगा।"

इस प्रकार और वेदनाओंकी भाँति यह भी चली गई। हमलोगों

ने नाश्तेकी मौजमें सबको बहा दिया। फिर मुझे ख्याल आया। और ख्यालोंकी भाँति हरि को भगेलूके नाश्ता बनानेकी विधिका भी ख्याल बिना आये हुए नहीं होगा। खासकर जबकि जहाजकी रसद की भी अब आशा नहीं है। शायद उन्हें इसका भी विचार आया होगा, कि अब हमारे पास कितने दिनोंके लिये रसद है।

"भोजन समाप्तिके बाद एकबार उन्होंने भोजन भण्डार तथा और सभी चीजोंको देखभाल की। फिर बड़ी शान्तिपूर्वक कामकी बातके तरह सीधे साधे तौरपर कहा—

"हमारी अवस्था यह है। हमारे पास कुछ सप्ताहोंके लिये रसद रह गई है, सो भी सावधानीपूर्वक खर्चने पर। उसके बाद यदि हम यहां ठहरे तो हमारे लिये हैं उपवास और मृत्यु। पहिले हमें 'मौडमूलर' की आशा भी थी, किन्तु अब वह भी समूल उच्छिन्न है। गुप्तसमुद्र और उसके रहस्यको पा लेनेके बाद अब वह लुटेरे बहुत जल्द यहाँसे चले जाँयगे। अब उधर की प्रत्याशाकी डोर ही कट गई।

"और रहा रहस्यके विषयमें, सो वह यहां था, सब चोरी हो गया। निस्सन्देह इस भयानक पहाड़ीमें किसी प्रकारका खजाना था, जिसे महाराज जगदीशपुरने बीस वर्ष पहिले पता लगाकर पा भी लिया था। उसे उन्होंने फर्शके उस छिद्रमें छिपा दिया औरफिरउन्होंने अपने प्राण गँवाये। किस तरह, यह तुम्हें मालूम है। पीछे दूसरा भूगर्भशास्त्री आया और यह भी उसी परिणाम पर पहुंचा। उसके लिये महाराजकी सारी सावधानता, और बूढ़े भगेलूकी जांनिसारी बच्चोंके ख्याल थे। कप्तान अर्जुन सिंहकी लॉगबुकके पढ़नेके बाद उसने सम्भवतः ताड़ लिया, कि उसे किसकी खोज जरूरी है, और

उसे उसने फर्शके छेदमें पा लिया ! इसी छेदमें उसे महाराज का प्राइवेट लेख मिला, जिसे मैं अभी पढ़ रहा था। असली चीजके पा जाने पर उसने लेखको अपने ख्यालमें नष्ट कर दिया। यदि उसे हमारी विद्यमानताका पता भी होता तोभी वह इससे अधिक चतुराई नहीं कर सकता था।"

मैंने और मोहनने हैरान हो एक दूसरेके मुंहकी ओर ताका। फिर मैंने पूछा—

"किन्तु क्या था वह खज़ाना, और क्या था उसका मूल्य?"

हरि (धीरेसे)—"वह क्या वस्तु थी, यह स्पष्ट किसी जगह भी नहीं लिखा मिला। वस्तु का नाम यहाँ नहीं लिखा है। किंतु यह पता लगा है, कि महाराजकी दृष्टिमें वह मूल्यवान् थी। उनका विश्वास था, कि उन्हें एक खजाना मिला है, जिसका मूल्य कमसे कम दो अरब रुपया है।"

यहाँ अब सारे चुप थे।

मोहन—"ओ हो! ऐसा!!

हरि—"और यह उस बातको भी स्पष्ट कर देता है, जिसे माधवने रात सुनी। मुझे मालूम है डेलिंग इस खजानेके पीछे पड़ा था। उसने किसी तरह खजानोंके टापूके विषयमें एक पुरानी कथा सुन पाई। वह उसके अन्वेषणके लिये तैयार हो गया। उसकेलिये एक आदमीके जीवनके कुछ वर्ष कुछ महत्व न रखते थे।"

दो अरब रूपया!

मैं—"किन्तु वह सम्पत्ति भारतवर्षकी थी, क्योंकि एक भारतीय ने उसे पहिले पाया।"

हरि—"मुझे इसमें सन्देह है। यह पहाड़ियाँ भ्राजोल की हैं, यद्यपि उसने इनसे कभी कोई काम न लिया। यदि तुम दोनों मिनट दो मिनट ठहरो, तो मैं सुनाता हूँ, कि स्वयं महाराजकी इस विषयमें क्या राय थी।"

उन्होंने हमें मेजके पास छोड़ दिया, और थोड़ी देर बाद कुछ कागजोंको लिये हुए आये—

"यह आश्चर्य है कि, वह महाराजके कागजोंको अच्छी तरह नष्ट न कर सके, इसका कारण भी था। उन्हें विश्वास न था कोई दूसरा भी यहां आग बुझानेवाला पहुंच जायगा। दियासलाईको एक तीली ही, इनको सर्वदाके लिये अपठनीय बनानेमें समर्थ थी। किन्तु कितनी ही बार बृहस्पतिके कान काटने वाले भी धोखा खाजाते हैं। जैसे भी हो, यह देखो वह हमारे लिये मौजूद है। यह एक प्रकारसे महाराजका वसीयतनामा है। इससे यह भी पता लगता है, कि वह केवल एक सज्जन भारतीय ही न थे, बल्कि उनकी दृष्टि और हृदय बहुत ऊँचे थे। वस्तुतः जगदीशपुरके लिये यह स्वाभाविक था।"

लेखपत्र चार टुकड़ोंमें फाड़ा हुआ था, हरिने उन्हें ठीकसे मिला कर रख दिया। फिर इस भूमिकाके साथ—"महाराजने इसे एक सांकेतिकलिपिमें लिखा था, जिसका अभिप्राय यही हो सकता है, कि कोई दूसरा पोतारोहो न पढ़ ले। किन्तु इसकी भाषा शुद्ध सुन्दर हिन्दी है। मुझे महाराजके नाम और दो और नामोंको पता लगाते ही इस सांकेतिक लिपिका जानना भी आसान हो गया। अच्छा सुनो—

इस राशिका मूल्य जो मेरी समझमें जँचता है, सम्भव है, उसे कोई मुबालिगा समझे हो, किन्तु मैं ऐसा नहीं समझता। मुझे भूगर्भशास्त्रका पर्याप्त ज्ञान है। उस पर भी मुझे इस विषयका पूरा अनुभव भी है। मनुष्य निश्चय नहीं कह सकता, कि भविष्यके गर्भमें क्या है। अतः मैं यहाँ पर अपने उत्तराधिकारियोंके लिये, जिनके हाथमेंकि यह राशि पहुंचेगी, अपनी आकांक्षायें लिखता हूं।

यह द्वीप ब्राजील प्रजातंत्रके अधिकारमें है, अतः इस प्रकारकी निधिपर उसका दावा अयुक्त नहीं कहा जा सकता। कितना हिस्सा किसका होता है, इसपर मैं बहस करना नहीं चाहता, किन्तु यह निश्चय है: कि पता लगानेवालेको इसका एक भारी हिस्सा मिलैगा। और मैं इसे खूब साफ साफ लिखना चाहता हूं; कि इससे मेरे वंशको कुछ भी लाभ न उठाना चाहिये। हमारी अवश्यकताओं के लिये पर्याप्त धन-सम्पत्ति हमारे पास मौजूद है। इसलिये मैं अपने उत्तराधिकारियोंसे चाहता हूं, कि इसका विनियोग सार्वजनिक हित तथा विद्याप्रचारके कामोंमें होना चाहिये।

आजसे सात सौ वर्ष पूर्व तक नालन्दाका विद्यालय अपने अस्तित्वको कायम रक्खे हुए था, उसमें बहुत दूर दूरके विद्यार्थी पढ़नेके लिये आते थे। हजारों वर्ष तक अनवरत विद्यादान करके, अन्तमें मानवी क्रूर हाथों तथा हमारी उपेक्षासे वह विद्यापीठ नष्ट हो गया। बालपनमें जब मैंने चीनी भिक्षु ह्यूनसंगकी भारत-यात्रा पढ़ी थी। जब मैंने उनके मुंहसे नालन्दाके वैभव और यशकी भूरि भूरि स्तुति होते देखी थी, तभीसे मेरे

चित्तमें यह बात बड़े वेगसे उठने लगी—क्या भारतवर्षके गौरव, विहारके मुकुटमणि और आत्मस्वरूप उस नालन्दा विद्यालयका पुनरुद्धार करना हमारे प्रधान कर्त्तव्योंमें नहीं है ? विद्या सामाप्तिके बाद मैं कुछ राज्यके कार्य और कुछ अपने प्रिय विषय भूगर्भशास्त्रके अध्ययनमें निरत रहने लगा, किन्तु तो भी वह बचपनके हार्दिक भाव विस्मृत न हुए थे । मेरे दिलमें पक्का इरादा होगया था, कि अपनी रियासतसे कुछ सम्पत्ति विद्यालयके लिये अलग कर दूं । मैं यह जानता था, कि मेरे उत्तराधिकारियोंमें से किसी को यह रुचिकर न होती । खैर मेरे संकल्पका एक दूसरी ही रीतिसे पूरा होना था । अस्तु, संक्षिप्तमें मेरी यह आकांक्षा है, कि वह सम्पूर्ण निधि जो मेरे हिस्सेमें आवे, वह नालन्दाको मिलनी चाहिये ।"

हरि—"यह थे, महाराज जगदीशपुर, जिसे बूढ़ा भगेलू इष्टदेव की तरह पूजता था, और अन्तमें उन्हींकी सेवामें अपने आपको न्योछावर कर गया । तुम उसे कैसा समझते थे ?"

मैं—"भगेलू बहुत अच्छा था । आः, बेचारा भगेलू !"

हरिने उन टुकड़ोंको इकट्ठा करके खूब सावधानीसे मोड़कर रख लिया और कहा—

"यह पवित्र वसीयत है मेरे भाइयो ! और यह मेरे लिये भी पवित्र है । हम अब इस कारागारसे मुक्त होने जा रहे हैं अथवा, इसी प्रयत्नमें मरने । यदि बचकर निकल सके, तो मैं सारी शक्ति लगाकर उन लुटेरोंसे उस निधिको फेर लेने और दुष्टोंको उनके

अपराधका दण्ड दिलानेमें लगाऊंगा।"

मैं—"और हम आपके साथ हैं, क्यों मोहन?"

मोहन—"हाँ, चाहे आग हो चाहे पानी।" हमने एक दूसरेके हाथ पकड़े। मानो हम आपसमें प्रतिज्ञाबद्ध हुए; यद्यपि हममें से किसीने शब्दसे इस बातको न प्रकट किया।

हरि उठ खड़े हुए और बोले—

"अबसे एक घंटा पूर्व मुझे अवस्था शोचनीय मालूम होती थी, किन्तु अब मुझे अच्छा उपाय सूझा है, आओ।"

हमलोग बड़ी उत्सुकतासे उनके पीछे बंगलेसे बाहर और फिर उसके पीछेकी ओर गये। वहाँ टीनके नीचे एक लम्बा चौड़ा लकड़ियोंका टाल लगा हुआ था। मोहनने आश्चर्यसे कहा—"क्यों, यहाँ तो वहुत लकड़ी है।"

हरिने उत्तर दिया—"हाँ, यह उन लकड़ियोंमें से बंची हैं, जिन्हें महाराज 'मौन्तेवायदो' से इस घरके बनानेके लिये बीस वर्ष पूर्व लाये थे। सुरक्षित दशामें रहनेसे यह अब भी वैसी ही दृढ़ और कार्योपयोगी हैं जैसी कि उस समय थीं, वलिक उससे भी अच्छी हैं। अब हमें इनसे काम लेना है?"

मैं बोल उठा—"नाव बनाना?"

हरि—"नहीं, उसके लिये हफ्तोंकी अवश्यकता है, किन्तु हमारे पास उतना समय नहीं है।"

मोहन—"तो बेड़ा।"

हरि—"हाँ, इसीकी जरूरत है, और उसका नाम क्या होगा, जानते हो? 'सुभाशा'।"

सप्तदश अध्याय

शुभाशाका निर्माण।

आशा—हाँ, यह आशा है, जो महान् परिवर्तन कर देती है। उस दिन उसने हमारे भीतर कैसा परिवर्तन उत्पन्न कर दिया था। हम उन भयानक घटनाओं, उन लोमहर्षण यातनाओंको नहीं भूल सकते, जिन्हें अबतक हम अनुभव कर चुके थे। उसके आगे भी, हमारे नवीन प्रोग्रामके रास्तेमें कितनी विघ्न-बाधाएँ थीं, कितने भयानक सन्देह थे। क्या अनन्त जलराशिसे परिपूर्ण, असंख्य विराट तरंग-मालाओंसे उद्वेल्लित, अतल, विस्तृत, सागर, इन मनहूस चट्टानोंसे कम है ? किन्तु उन सबकी कुछ पर्वा न कर हम अपने काममें भिड़ गये हमारे सामने जलधिपार, हिमालय और विन्ध्याचलके मध्यकी सस्य-श्यामल भूमि थी। हमारे सामने जान्हवी और स्वर्णभद्राका मञ्जु मनोहर कल-कलनाद था। हमारे सन्मुख स्नेह सौहार्दपूर्ण स्वजन बन्धुओंके मुख थे। यह इतना परिवर्तन किसने उपस्थित किया क्या ? आशा ने।

हमने हरिकी सभी बातें सुन ली थीं। अब मोहनको तुरन्त, कार्यारम्भसे रोक रखना कठिन था। यही स्थान था जहां मोहनका 'शोभा' का अनुभव और ज्ञान बड़े काम का था।

उसने उत्सुकतासे कहा—"सब चीज ठीक है। बेड़ा बनानेका मेरा कुछ अपना भी ख्याल है। मैंने नाव बनानेके विषयमें बहुतसा

सीखा है। किन्तु यहाँ कोई बहुत मजबूत और भारी कड़ी नहीं है, जिसे बीच और अगल बगलमें आधारके तौर पर लगाया जा सके। अच्छा कोई हर्ज नहीं, दो तीन तख्तोंको नीचे ऊपर रखकर काँटी मार देनेसे काम चल जायगा। फिर हमें एक मस्तूल पतवार पाल और बेड़ेके चारो ओर एक कटहरेकी अवश्यकता होगी।

अभी घरमें कुछ काम करना था। इस लिये मैं तो उधर चला गया। और मोहन लकड़िओंकी तजवीजमें लगा। उसने कहा भी—

"एक आदमी था, उसने एक बालूके टापूमें अकेले ही एक नाव बनाई····(क्रूसो तो नहीं ?)। वह नाव बड़ी थी, और जब सब काम समाप्त हो गया, तो वह इतनी भारी थी, कि वह वहाँ से ढकेल कर पानी तक नहीं लेजा सकता था। किन्तु हम अपने बेड़ेको घाट पर बनावेंगे, और केवल आधारभर पानीसे बाहर बनावेंगे आधारके तय्यार होते ही उसे पानीमें डाल देंगे, और बाकी काम वहीं होगा।"

यह बड़ा अच्छा ख्याल था, सबनेही इसे एक रायसे पसन्द किया। इसके बाद मोहन एक कागज पेन्सिल लेकर बैठ गया। उसने उसका एक नकशा बना डाला। उसे दिखाते हुए उसने कहा—

"हमें एक ऐसे बेड़ेकी अवश्यकता है, कि जो कुछ खेया भी जा सके। हमारे पास हथियार, लकड़ी और समय मौजूद है। आप थोड़ा इन्तिजार कीजिये, और देखिये।"

हरिने केवल मुस्कुरा दिया। तब आरम्भिक काममें मैं और मोहन दोनों साथ ही लगे। हमने भगेलूके सुरक्षित रखे हुए हथियारों

और लकड़ीको घाट पर पहुंचाया। मोहनने इसे हलका और पतला कहा था, इसलिये हमने वराण्डेमें वाहर लगी हुई शहतीरोंको निकाला, जो कि मोटी और लम्बी चौड़ी थीं। अब खूब गर्मा गर्मीसे काम शुरू हुआ; तुरन्त ही वह जगह हथौड़ों और आरोंकी आवाजसे गूंजने लगी। उस दिनका काम देखनेसे भी हमें मालूम होने लगा, कि काम जल्दी और खूबीके साथ पार लग जायगा।

मुझे अक्सर ख्याल होता रहा, कि इस विषय पर पद्य लिखूं; किन्तु उससे गद्य ही लिखना अच्छा मालूम हुआ। इसमें वर्ण मात्रा का वन्धन न होनेसे बात पूरी विना संकोचके लिखी जा सकती थी। कथामें गीतकी भी अवश्यकता है, क्योंकि उसमें जगह जगह आरों, हथौड़ोंके संगीतके साथ मेरे मित्रका मृदुहास मिश्रित था। वह कविता वैसीही ओजस्विनी होती, जैसाकि किसी वीरवाहिनीका रणक्षेत्रमें प्रयाण। यद्यपि मैं उसे नहीं लिख सका, किन्तु वह पद्य, उसका वह मधुर संगीत अवभी मेरों कानोंमें गूंज रहा है। जब कभी मैं उस व्यस्त पूर्वाह्नको देखता हूं, तो अब भी हथोड़ों और आरोंको सुनता हूं, साथ ही अपने मित्रकी आवाजभी। और वह सब संगीतसे पूर्ण। यह वह संगीत है, जिसे शब्दोंमें प्रकट नहीं किया जा सकता। और सभीके साथ हरि शान्त और दृढ़ उसी प्रकार चिन्ताशील और प्रसन्नथे। सचमुच हरिका वह नेतृत्व हमारे लिये उन दिनोंमें बड़े ही अहोभाग्यकी वस्तु थी,।

मैं न प्रकृत कप्तान था औ न प्रकृत बढ़ई। मुझे वहाँ आज्ञाके अनुसार काम करना था; जिसमें घरका काम काज रसोई पानी आदि सभी था; इसलिये समय समयपर मुझे हथियार

रख कर चुपकेसे वहाँसे खिसक जाना पड़ता था। मोहनको इसका तब तक पता न लगता, जब तककि वह अपनी एक दो बातका उत्तर न पाता। उस समय वह रुक जाता था और देखने लगता था।

मोहनकी तजबोजने हरिके कुछ संशोधनोंके बाद एक ऐसे बेड़ेका रूप धारण किया जो देखनेमें दो बड़ी कड़ियोंपर एक लम्बा चौड़ा तख्त-पोशसा जान पड़ता था। कड़ियां आगेकी ओर कुछ नोकदार और दस हाथ लम्बी थीं। दो तख्तोंको मिलाकर फिर उसने एक पतवार बनाया और कड़ियोंके किनारोंपर भालेके नोककी आकृतिमें दो तख्ते जोड़ कर लगा दिये, जिसमेंकि पानो काटनेमें सुभोता हो। वास्तवमें इतनी तय्यारीके विना हमारा दोसौ मीलका सफर, किसीभो समुद्रमें करना असम्भव था।

मेरा काम यह था कि जहां जहां पानी आनेका रास्ता हो, वहां वहां तेल और पेन्ट को मिलाकर खूब गाढ़ा लगाता जाऊँ। आधार ऊपर तख्तोंका पहिला फर्श था। तब फिर कड़ी देकर दूसरा फर्श तय्यार किया गया था और फिर तीसरा। इस प्रकार हमारे बेड़ेका ऊपरी फर्श पानीसे काफी ऊपर था। वहां पानीका छीटा नहीं पहुंच सकता था। यद्यपि हमारा बेड़ा मजबूत था, किंतु बहुतसे उपयोगी हथियारोंके न होनेसे वह व्यर्थका वोझल और भद्दा होगया था। राम राम करके किसी तरह दूसरी रातको वह पानी पर तैरा दिया गया।

मोहनने साँस लेते हुए कहा—"आखिरकार, यह बहुत खराब नहीं है। वस एक दिनमें अब यह विल्कुल तय्यार हो जायगा। किन्तु अब सबकाम इसके ऊपर ही करना होगा।"

हरिने कहा—"हाँ, और बाकी काम अब हलका भी है। तुमने बहुत जल्दी की। सचमुच, मोहन ! मैं नहीं जानता तुम्हारे बिना हमारी क्या दशा होती ?"

प्रशंसासूचक बातोंसे प्रसन्न होते हुए मेरे दोस्तने कहा—"हाँ, सचमुच हमारा बहुत सा काम अब पूरा हो चुका। अच्छा कप्तान ! हम लोग इस तरह कब प्रस्थान करने योग्य हो जाँयगे ?"

हरिने शान्ति और दृढ़तापूर्वक कहा—"जितना जल्दी हो सके उतना।"

मैंने हरिके चेहरेसे चिन्ताकी झलक आते देख कर पूछा—"आप शायद रसदका ख्याल करते होंगे ?"

हरि—"हाँ, थोड़ासा। और भी बातें हैं जो शायद हमारे काम की जल्दी समाप्ति चाहती हैं। आओ आज रात भर काममें लगा रहा जाय,। काम पूरा होने पर तब हम बात करेंगे। इस समय बात का अवसर नहीं है।"

जब हरिकी बात इस प्रकारकी गम्भीरता लिये हुए होती हो, तो उस समय हमारे लिये बस एक ही काम रह जाता था, कि बिना पूछे उनकी इच्छानुसार काम करें। यद्यपि हम लोग बिलकुल थक गये थे, किन्तु फिर काममें जुट गये। हमारे पास अब भी मोमबत्तियोंका ढेर था। तो भी उनकी रोशनीमें काम करनेमें अड़चन जरूर मालूम होती थी। मैं उस समय सारी उन आवश्यक चीजोंको एकत्रित करने और बाँधने-छाँदनेका काम करता रहा, जिन्हें कि हमें साथ ले चलना था। कुछ कम्बलोंको खूब अच्छी प्रकार सीकर मैंने एक पाल भी तय्यार किया।

दस बजे रातका समय था। अन्धेरा अपने यौवन पर हो चला था। दिनमें सूर्यका प्रकाश एक दम न होनेसे समय कुछ रूखासा मालूम होता था। जब मैं अपने बाँधने-बूंधनेके काममें लगा हुआ था, उसी समय हरिने मुझे पुकारा। मै दौड़ा किनारे पर गया। मैं सारे वक्त बंगला में काम कर रहा था, इस लिये बाहरकी बात मुझे न मालूम होती थी। मैंने अब देखाकि परिस्थितिमें भारी परिवर्तन आगया है। आकाशमें धुंधसी छाई हुई है। गुप्तसमुद्रका तल एक पीली रोशनीसे भयंकर चमकके साथ चमक रहा है। पीछेके पहाड़ी शिखर भी उसी प्रकाशसे चमक रहे हैं। इस प्रकाशमें मेरे मित्रोंके चेहरोंकी रग रग दिखलाई देती है; जिसमें एक प्रकारका आतंक और घबराहट अंकित सी जान पड़ती है।

मोहनने धीमे स्वरमें कहा—"देखो।"

मैंने दृष्टि उधर फेरी, जिधर मोहन देखने को कह रहा था। पहाड़ी दीवारके ऊपर आकाश लाल था। कोई चीज वहाँसे कभी लहकती और कभी धीमोसी होती दीख पड़ती थी; जैसे दूरका कोई जलता भट्टा हो।

मोहन—'टापूके उस तरफ किसी जहाजमें आग लगी सी मालूम होती है। देखो वह आगकी लौ दिखलाई देरही है। शायद वह "मौडमूलर" है, ओह !!"

थोड़ी देरके लिये मैंने भी इसे ठीक समझा। किन्तु झट ही, हरिकी ओर विना देखे ही सत्यता प्रकट होतीसी जान पड़ी। हरिने उसे शब्दोंमें प्रकाशित किया—

"नहीं, मोहन! यह जहाजकी आग नहीं है। यदि यह

आग है, तो ज्वालामुखीकी आग है। वहाँ पर, टापूकी दीवारमें ज्वालामुखीने नया मुंह खोला है, और यह उसके भीतरसे निकलती लौ है।"

मोहन—"हा: क्या आप सचमुच समझ रहे हैं ?"

हरि—"सचमुच, इसमें मुझे कुछ भी सन्देह नहीं जान पड़ता।"

मैंने उत्सुकतासे कहा—"आपने क्या कुछ सुना या कुछ देखा ?"

हरि—"हाँ, अभी मैं सुन रहा था। मुझे कोई आवाज तोपके गोलेकी सी सुनाई दी। वह देर तक होती रही, किन्तु जान पड़ा बहुत दूर। और उसी समय पृथ्वी कम्पित हुई। इसीने मुझे चारों ओर देखनेके लिये मजबूर किया फिर मैंने प्रकाश देखा। यह यकबयक हुआ। शायद इसे दस मिनट न हुए होंगे।"

मुझे उस दिन सबेरेकी घटना याद आई; जबकि मैं गुफाके मुंह पर सोया था। मुझे उस समय भूकम्पसा प्रतीत हुआ था; जिसनेकि अटलांटिकके थपेड़ोंको पहाड़ी पर और जोरसे डालना आरम्भ किया था। क्या उसका भी यही कारण तो नहीं था ?

हरिने फिर कहा—"और यही इस बात को भी स्पष्ट कर देता है, कि क्यों तुमने गुप्तसमुद्रका पानी गर्म और बुलबुला उठते देखा था। ओफ, कितनी भूल ! शायद पृथ्वीके उदरमें फिर अब गड़बड़ी मची है, अब उसकी खट्टी डकारें और उसकी गन्ध, पुराने क्रेटरोंसे आनी शुरू हो गई। और एक नया मुख-विवर कहीं और खुल गया। अब हमें डेलिंगकी उस बातका भी अर्थ लग गया, जो उसने कहा था—एक और सप्ताह बीतनेके बाद काम हाथसे बेहाथ हो जाता। उसे मालूम होगया था कि यह आरहा है।"

मैं चिल्ला उठा—"क्या, अब हमारे पास निकलनेका समय नहीं रहा?"

हरि—"इसके विषयमें निश्चित कौन कह सकता है? यह भी सम्भव है कि इतना होनेके बाद भी कुछ न हो। किन्तु यह अच्छा है, कि प्रोफेसरके कहनेके मुताबिक, जितना जल्दी होसके हमें यहाँसे रवाना हो जाना चाहिये। हमें अब अच्छी तरह भोजन करके एक घंटा आराम करना चाहिये फिर काम शुरू करेंगे।"

थोड़ी देरके बाद भी हमने देखा, कि अवस्था और भयंकर ही होती जारही है, उसमें कमी होनेकी सम्भावना नहीं मालूम होती। दूर रेतोली खाड़ीकी ओर लपट और जोरसे उठतीसी मालूम होती है। अब हवाभी कुछ उठतीसी मालूम हुई। हमारी मोमबत्तियाँ एक झोंकेमें खतम होगईं। और वास्तवमें उनकी रोशनी इस तीक्ष्ण प्रकाश में भी पराभूत थी।

जिस समय हमलोग खाकर बेड़े पर लौटे, तो मैंने देखा वहाँ कोई सफेद चद्दरसी पड़ी है। उसपर कुछ काले काले धब्बे भी हैं। मैंने उङ्गली लगाई, तो कुछ आटासा मालूम हुआ।

मैं—"मोहन! देखो, यह क्या है?"

मोहन—"क्यों, मालूम नहीं है?"

अब उसने अंगुलीसे उसीपर मोटे अक्षरोंमें लिख दिया—

"भागनेकीसूचना।"

मोहन—"यही वह राख है, जिसने 'पास्पे' और 'हर्कुलेनियम' को दबा दिया।"

हमने रातभर बिना विश्रामके काम किया। कभी हमें अपनी मोमवत्तीका सहारा लेना होता था और कभी उस भीषण प्रकाशका। इस प्रकार हमें तीसरे दिन काम करनेकी अवश्यकता न पड़ी। सवेरा होते होते 'शुभाशा' बिल्कुल तय्यार होगई।

अष्टादश अध्याय

यात्रारम्भ।

हमने सब काम इतनी जल्दी जल्दी कर लिया, कि दोपहरसे पहिले ही बंगला हमारे पीछे था, और हम मुहानेकी ओर मुंह किये थे। अब दूरसे एक भयंकर गड़गड़ाहट सुनाई पड़ी, जिसके साथ ही पृथ्वी डगमगाने लगी। गुप्तसमुद्रका पानी हाथों ऊँचा हो गया और उसमें लाल, पीला हरा, तरह तरहका रंग दिखलाई पड़ने लगा। जब तब कोई बुलबुला नीचेसे जलतलपर उतरा आता था, और धीरेसे फूटकर वैसीही दुर्गन्ध फैला देता था, जैसाकि मैंने पहिले देखा था। हमारे बेड़े पर सभी चीजें लाद ली गई थीं, अब वह बिल्कुल यात्राके लिये प्रस्तुत था। कीलोंसे जड़ा हुआ मस्तूल उसके बीचमें खड़ा था।

मोहन—"भिनसहरेके समय हमने एक इंच मोटी राख गिरी देखी, यदि शाम तक और रह जाते तो निश्चय ही हम उसके अन्दर दब जाते।"

हरि—"बिल्कुल ठीक। किन्तु जो हवा इस राखको ला रही है, वही हमारी यात्रा—यहाँसे गुफा और फिर आगे समुद्रतक-के लिये भी बहुत उपयोगी है। अच्छा अब पालको तान दो।"

पाल पतली पतली रस्सियोंके सहारे मस्तूले पर चढ़ा दिया गया। हवाने हमारी मदद की, और अब "शुभाशा" शीघ्रतासे मुहाने

की ओर बढ़ने लगी। उसके नोकीलें मुंहने उसकी गतिमें और वृद्धि कर दी, और वह गुप्तसमुद्रके बुलबुलोंको चीरता आगे आगे बढ़ रही थी। इसी वक्त शुभाशाका मुंह दूसरे किनारेकी ओर होते देख कर, मोहन दाँड़ लिये माँगे पर जा बैठा, और मैं पोंछपर पतवार लिये जा धमका। जरासे इशारे पर शुभाशा फिर अपने सीधे रास्ते पर थी।

मोहन बोल उठा—"बोतलका मुंह बड़ा कुलकुला रहा है।" इसी समय मैंने भी जान लिया कि, हवा और बाढ़ अब मुहानेकी ओर बड़े जोरसे लौट रही है। इसीसे गुफाके मुंहसे बड़ी गर्जन सुनाई दे रही है। अब हमारा जहाज भी दौड़ने लगा था। वह एक तेज धारमें पड़गया था, जिससे हिलाना डुलाना अब हमारे काबूसे बाहर की बात थी। मैंने अब पालका कोना खोल दिया, और वह झण्डेकी तरह उड़ने लगा।

"वाह"—हरिने कहा, और अब हम लोग गुफाके अन्धेरेमें थे। इस समय हमारे ज्ञानतन्तु बेकार और कलेजा मुंहको आया था। हमने कहा—अब क्या ? जाने दो चाहे बेड़ा दीवारसे टकराये या बचे। 'कश्ती खुदाप छोड़ दो, लंगरको तोड़ दो।' हमने सुतली की उन चारों चक्रियों (वीड़ों) से कुछ भी काम लेना न चाहा, जो हमें समुद्रमें तैरती हुई मिलीं थीं, और जिन्हें कड़ी चीजके साथ धक्का लगनेसे रोकनेके लिये हमने "शुभाशा" में लटका रक्खा था।

अवस्थाकी भयंकरताने फिर हमें दौड़धूपके लिये वाध्य किया। कभी मैं माँगाकी ओर दौड़ता था और कभी हरि पोंछकी ओर। शुभाशाको ठीक रास्ते पर रखनेके लिये हम खूब परिश्रमकर रहे

थे। हरिके ललाटसे कितनीही वार पसीनेकी बूंद टपकी तो भी हमारा सारा प्रयत्न उस वेगके सामने किसी गिनतीमें न था। यह शुभाशा ही की भलमंसी थी, जो अगल बगलकी धाराओंके बहकावेमें न पड़कर वह सीधे रास्तेसे दौड़ रही थी। मेरी समझमें तो यह हमारा वही सौभाग्य था, जिसने महागर्त और महागुफासे हमें बचाया। नहीं तो जरासी चूकमें "शुभाशा" चूरचूर और हम सब अगाध जलधितलमें होते।

उस पानीका घर्घर और अन्धकारमें हम लोग बहुत देर नहीं रहने पाये थे, कि अब हमें दूर एक अंडाकार सूराख दिखाई पड़ने लगा। हम जितना ही आगे बढ़ते थे उतनी ही आवाज और भी तेज होती जाती थी। उस समय हम स्तब्ध, निस्संज्ञसे हो गये थे। जरा देर और, और अब हम सुरंगसे बाहर प्रकाशमें थे, यहाँ वह भयंकर धार नीलतरंगोंसे पर्यावृत अटलांटिकसे एक बड़ी गर्जन और सफेद गाजके साथ भिड़ रही थी। अब हमारे सामने प्रकाश, ऊपर नीला आकाश और चारों ओर ऊपर नीचे हिलती हुई सजीव नीली चादर थी।

"वाह, वाह"—यकवयक हम चिल्ला उठे। अब हमारे हृदयमें एक अद्भुत उत्साह और आनन्द मालूम होता था। हमको यह देख कर बड़ी खुशी हुई कि, इतनी भयंकर तरंगमें भी हमारे पोततलपर एक भी छिटकी नहीं आई है। "शुभाशा" अपनी प्रथम किन्तु अत्यन्त कठिन परीक्षामें उत्तीर्ण हो गई।

हरि—"पालको खड़ा कर दो माधव! अब उससे हमें बड़ी मदद मिलेगी।"

मैंने दाँड़को रख दिया—अब उसकी अवश्यकता भी न थी—और पालके निचले अंचलवाले बाँसको पकड़ लिया। फिर उसे मस्तूल में कसकर बाँध दिया, और बगलकी रस्सी अपने हाथमें पकड़ ली। वायव्यकोणकी हवा जो अबभी चल रही थी, पालमें जुट पड़ी, और हमारी शुभाशा फिर अटलाण्टिकके विस्तृत नीलगात्रपर दौड़ने लगी।

हरि मुंह पर दोनों हाथ फेरते हुए बोले।—"धन्य भाग्य। क्यों भाई! हमारे लिये कैसा यह सुंदर समय है?"

मैं—"हाँ, सचमुच। और मैं तुम कारीगरोंको क्या इनाम दूं। तुम्हारा जहाज. वाकई गजबका निकला।"

मोहनने खुशीसे टोपी उतारकर नीचे रखते हुए—"तुम मुझे तारीफ करके फुलाना चाहते हो। लेकिन एक बात। जब यह बात इतनी आसान थी, तो एक बड़ी नावके सहारे भी वह दोनों आदमी बीस वर्ष पहिले क्यों नहीं बाहर निकल सके?

मैं—"संयोग। वह धारमें पड़कर दीवारसे टकरा गये।"

हरि—"अरे, किस्मत समझो, जिसने हमें सुरक्षित बाहर निकाला।"

मोहन—"यह बेड़ा भी उस नावसे, बहुत भारी है, इस लिये यह आसानीसे मामूली धारके फन्देमें पड़ भी नहीं सकता। तिसपर हम बीचकी धारमें पड़ गये. जो बराबर हमारी मार्गवाहक रही।"" किन्तु अब जरा टापूको तो देखो।"

अब हम समुद्रमें अपने कारास्थानसे धीरे धीरे दूर होते जा रहे थे। गुफाका महान् प्रवेश-द्वार, अब बड़ी बड़ी पहाड़ियोंकी आड़में

हमारी आँखोंसे ओझल होगया था। सारे द्वीप पर धुयें और भापका बादल छाया हुआ था, जोकि बाहरकी ओर श्वेत और हल्का किन्तु भीतर धीरे धीरे काला होता गया था। यही वह पर्दा था, जिसने हमारे पिछले दिनोंको अशान्त-चिन्तापूर्ण बना दिया था। मालूम होता था, कि वह क्षण क्षण बढ़ता ही जा रहा है। यद्यपि दीवारकी बाहरी ओर इसका आकार धीरे धीरे विलीन होतासा मालूम होता था, किन्तु भीतरसे उसके आनेकी गति धीरे धीरे बढ़ती ही जा रही थी। 'रेतीली खाड़ी' के पारकी दीवारोंमें, जहाँ ज्वालामुखीने अपना नया मुंह खोला था, से वाष्प और गैसें बराबर निकलती ही आ रही थीं,। यह धुंध इतनी भारी थी, कि यद्यपि हवा अच्छी तरह चल रही थी, तो भी वह उसको सिवाय सारे टापू पर फैला देनेके, उड़ा नहीं लेजा सकती थी।

हरि—" 'नाविक' ने लिखा है—'इस टापू पर सदा बादल और कुहरा छाया रहता है,' और अब हम जानते हैं, कि यह बादल क्या है। यह निस्सन्देह क्रेटरसे निकले भाप और गैसोंका समूह है; और इन गैसोंमें से कुछ ज़हरीली भी हैं, इसी से इस द्वीपमें कोई जीवित प्राणी नहीं रहता, और न हरी घास ही उगती है।"

मोहन—"मेरी समझमें ज्वालामुखी किसी भयंकर षड्यन्त्र की तय्यारीमें है। मैं बड़ा आनन्दित हूं, कि हमलोग जल्दी उसके चंगुलसे बाहर आगये; नहीं तो यदि एकही बार गुफाकी छत बैठ जाती, और गुफाका रास्ता बन्द हो जाता, तो हम फिर क्या करते ?"

मैं—"करना क्या था, हम वहीं घुटकर मर जाते और क्या।

यदि इस वायुने हमारा साथ दिया, तो हम लोग दक्षिण ओर जाँयगे, किन्तु हमारे लिये तो उत्तर ओर हीका जाना अच्छा था, उधर किसी जहाजसे भेंट होनेकी सम्भावना थी।"

हरि—"हां, एक तरहसे। किन्तु इधर भी कोई हर्ज नहीं, हम धीरे धीरे "कैप"—और "मौन्ते-वायदो" के रास्ते पर पहुंच जाँयगे। उस रास्तेसे बहुतसा रोजगार चलता है। कुछ भी हो, इससे दूसरा हमारे अख्तियार हीमें क्या है।"

मैं—"हमारी चाल क्या होगी?"

हरि—"प्रायः चार कोस घंटा, और यह बहुत है।"

इसके बाद हमने कुछ न बात-चीत की। मैंने देखा, दोनोंकी आँखें भारी हैं। उन्होंने रात भर जागते हुए बड़ी मशक्कतका काम किया था। मैंने कहा—

"मैं देख रहा हूँ, कि तुम दोनों नींदसे मतवाले हो गये हो। तुमने बड़ा परिश्रम किया है। और इस वक्त कोई अवश्यकता भी नहीं है, इस लिये झटपट सो जाओ। मैं बैठा देख रहा हूँ। बस सिर्फ पालको ठीक रखनेका काम है। पीछे न जाने कैसा काम पड़े।"

उन्होंने जरा आनाकानी की, किन्तु अन्तमें मेरी राय बहाल रही, और दोनों आदमी कम्बलों पर पड़ रहे। थोड़ी ही देरमें वह खूब खर्राटे लेने लगे। मैं भी एक गद्दा खींच कर उस पर आरामसे बैठ गया। मुझे करना कुछ नहीं था, सिर्फ जब तब पालको ठीक कर देना होता था। वास्तवमें इससे अधिक काम था भी नहीं क्योंकि हवा चल रही थी। यदि कहीं हवा बन्द हुई, तो शायद हम तीनोंही

साथ सो सकेंगे ।

मैंने पीछेकी ओर देखा । हम द्वीपसे पाँच मील दूर थे । धुआँ जल्दी जल्दी बढ़ता जाता था। ईशानकोणमें एक जगहसे बराबर भाप उठ रही थी। यह लगातार उठ कर रुक रुक कर फक्क फक्क करती थी। यह फक्क-फक्काहट हरवक्त जल्द जल्द होती जा रही थी। हरएक फक्कमें एक पिंडीभूत वाष्पराशिकी उस फैले हुए बादलमें वृद्धि हो रही थी। ऊपर उठनेकी अपेक्षा उस बादलने सारे मधुच्छत्रको एक जालेकी चादरकी भाँति ढाँक लिया था। वह बादलकी चादर हवाके कारण सब जगह एक सी न थी।

तब मैंने आगेकी ओर दृष्टिकी। 'शुभाशा' पानीको चीरती आगे बढ़ रही थी। हवा तेज थी। यदि ऐसी ही रही तो तीन या चार दिनमें हम लोग जहाजोंके रास्तेपर पहुंच जांयगे। यह दो तीन दिन हमारे लिये दो तीन हफ्तेसे कम नहीं थे, क्योंकि हमारी रसद अत्यन्त परिमित थी। किन्तु यह प्रश्न मेरे विचारसे बाहरका था, इस लिये मैंने इसे छोड़ दिया। फिर मैंने अपने पिछले आश्चर्यमय जीवन पर एक दृष्टि डाली. जबकि मैं प्रथम प्रथम मधुच्छत्रमें आया और जब मुझे बंगला दिखाई पड़ा।

मेरा ख्याल दौड़ने लगा। क्या वह दुष्ट अपने कियेकी सजा पायेंगे ? क्या हम तीनों—दो लड़के और जरा सयाना—उन चालबाजोंको पकड़कर महाराजके खजानेको लौटा सकेंगे ? और क्या सचमुच जीते जी हम इस जलराशिसे पार हो सकेंगे ? अच्छा !

ऊनविंश अध्याय

जल भित्तिका।

सूर्यास्तसे जरा ही देर पहिले हवा बन्द हो गई। अब मधुच्छत्र उत्तर ओर धुन्धमें मिल गया था। हम अब चारों ओर अनन्त जलराशिसे घिरे हुए थे। समुद्र बड़ा शान्त था। वहां वीचियोंका स्पन्दन बिल्कुल मालूम न होता था। जान पड़ता था, जैसे गुप्तसमुद्रही अपनी दीवारोंको फाँदकर चला आया है।

हरि—"यह ऐसी चीज है, कि जिसे मैं पसन्द नहीं करता। इस प्रकारकी पराकाष्ठाकी शान्तिके बाद एक भयंकर तूफान अवश्यंभावी है। चाहे तूफान न भी आरहा हो, तो भी हमें जागरूक रहना चाहिये।"

मैं—"हाँ।"

अगले दिन भी हमें कोई काम करनेकी अवश्यकता न पड़ी। बेड़े परका वह दिन सचमुच, एक आलसी आदमीके लिये बड़े सौभाग्यका होता। हमलोग कम्बल ओढ़े चुपचाप लेटे थे। कभी थोड़ा सो लेते थे, कभी थोड़ी बात कर लेते थे और कभी कुछ सोचते थे। यद्यपि अब सूर्य अस्त हो गया, किन्तु सर्दी नहीं मालूम पड़ती थी। हवा निश्चल और गंभीर थी, किन्तु नभोमंडल बिल्कुल स्वच्छ था।

मोहनने एक बार चारों ओर देखा, और लम्बी साँस ली। वहाँ

कुछभी करनेको न था। तब उसने कम्बल अपने ऊपर लेलिया और सोगया। मैं हरिका अनुकरण करते हुए, रसदके एक वक्ससे लगकर आरामसे वैठा था। हम दोनों जब तब क्षितिजोंको निहारते थे। कभी स्वच्छ आकाशमें जगमगाते हुए, तारोंको गिनने लगते थे। अब शशिने भी सिन्धुकी गोदसे धीरे धीरे अपने प्रकाशमान मुखको वाहर किया। धीरे धीरे नीला आकाश और कृष्ण उदधि उसके मृदुहाससे परिपूर्ण हो गया। उसकी आभाके सन्मुख नक्षत्र पीले पड़ गये, किन्तु सम्पूर्ण जल-जगत दुगुनी चमकसे जगमगाने लगा। 'शुभाशा' वड़ी मन्दगतिसे सुनहले सागरपर विचर रही थी। हम उस दिगन्त व्यापी सौन्दर्य साम्राज्यको देखकर चकित थे। किन्तु, इसी समय हमारे ऊपर असारताका ध्यान प्रभाव जमाने लगा। यद्यपि हम इस शोभा-साम्राज्यमें थे, किन्तु इसके विलीन होते कितनी देर लगती है। थोड़ी देरके वाद वह शोभा साम्राज्य हमारे लिये असह्य हो उठा, उसमें हमें भय और वैषम्यकी गन्ध आने लगी। अपनी मानसिक अवस्थामें इस क्रान्तिको देखकर, हम अधिक देर तक चुप रहकर उस निर्दय प्रकृतिका एकान्त सेवन न कर सके। हमने मन्दस्वरमें बात करना आरम्भ किया।

मैं—"यह वहुत सुन्दर है, किन्तु तो भी इसमें वीभत्सता प्रतीत होती है। वेचारे भगेलू और उसके भीषण अवसान पर जरा ध्यान दीजिये तो।"

हरि थोड़ी देर चुप रहे, फिर वोले—"बार बार मेरे दिलमें उसका ख्याल आता रहा है। शायद यही कारण है, कि वह मेरे स्वप्नमें आया। मैंने उसके विषयमें स्वप्न देखा—बड़ाविचित्र स्वप्न।"

मैं—"सुनूं तो।"

हरि—"सचमुच वह बड़ा अच्छा स्वप्न है। मैं स्वयं उसे कहना चाहता हूँ। उसने मेरे ऊपर बड़ा प्रभाव डाला, है, उसने मेरे विचारमें परिवर्त्तन पैदा कर दिया है। मैंने प्रथम निर्दयता और नृशंसता देखी थी. इस लिये मेरे हृदयमें जम गया था, कि मैं उन्हें दण्ड दिलानेके लिये प्रयत्न करूं। स्वप्नमें बूढा भगेलू मेरे पास आया—मैं समझता हूँ, यहीं इसी बेड़े पर। जानते हो माधव! उसका मुख-मंडल आन्दसे पूर्ण था, वह प्रफुल्लित था। उसने इस प्रकारकी प्रसन्नताके साथ बातकी. कि मेरे लिये वह दिव्यदर्शनसा मालूम हुआ। जानते हो, उसने क्या कहा?—"मेरे चित्तमें उनके लिये कुछ भी द्वेष और घृणा नहीं है बाबू। उनका भला हो, उनने तो मेरे साथ बड़ा उपकार किया। उन्होंने मुझे कारागारसे मुक्त कर दिया, कि मालिकको पाऊँ। मैं उन्हें बड़े आनन्दसे मिला। पुष्पकारोही सारे मालिककी संगतिका आनन्द लूट रहे थे, एक मैं ही वंचित था। नहीं. मैं उनके प्रति किंचिन्मात्र भी द्वेष नहीं रखता, रत्तीभर भी नहीं। मैं उनका ऋणी हूँ।"

मैं—"क्या बस इतना ही था?"

हरि—"हाँ, मैं इतने हीमें जाग उठा।"

थोड़ी देर हम चुप रहे। फिर मैंने कहा—

"किन्तु वह अब भी वैसे ही अपराधी हैं।"

हरि—"मैं मानता हूँ। और यह एक स्वप्नमात्र था, तो भी यह तस्वीरका दूसरा पहलू दिखलाता है।"

"हाँ, सचमुच। मैं इस पर विचार करने लगा। सचमुच वृद्ध

भगेलूकी एक बड़ी कैदसे रिहाई हुई। चाहे वह कैसे ही भयानक तौरसे हुई, किन्तु हुई रिहाई अवश्य। वह अब मनुष्य-समाजके योग्य न था। उसका मस्तिष्क और बातोंके लिये जवाब दे चुका था। उसे केवल अपने मालिक और उसकी सम्पत्तिका ख्याल था। ऐसे भी वह उसकी रक्षाके लिये जान देता, और वैसे भी उसीकी रक्षामें दिया। जो कुछ भी हो, उसकी मृत्यु उसके लिये बड़ो हितकर हुई।

नीरवता फिर छा गई। हरि ऊँघने लगे। थोड़ी देरमें उनका शिर उनके हाथों पर गिर गया और वह निद्रामग्न हो गये। अब वह दोनों सो गये, मैं अकेला बैठा रह गया।

हरिके सोते ही मैंने भगेलूका ख्याल भुला दिया। अब मैं दूसरी दूसरी बातों पर विचार करने लगा। इसी बीचमें मुझे अपने जेबमें किसी बोझका ख्याल आया। मेरे चित्तमें उसे देखनेकी इच्छा हुई। मैंने ऊपरकी जेबसे रूमालमें बँधी एक छोटी पोटली निकाली। मैंने धीरे धीरे गाँठ खोली, और एक क्षणके बाद 'शैतानकी आँख' मेरी हथेलीपर विराजमान थी।

उस दिन पाकटमें रखनेके बाद, हम इतने कार्यासक्त थे, कि मुझे इसके निरीक्षणका याद ही न रहा। अब मुझे यह झूठ मूठका बोझा बहुत बुरासा मालूम होने लगा। और यदि हरिने यत्नसे रखनेके लिये न कहा होता, तो मैं उसे निकाल कर फेंक दिये होता। मैंने उसकी ओर आश्चर्यसे देखा। मुझे उसके साथ घृणा होने लगी। मेरे दिलमें ख्याल आया, यह वही चीज़ है जिस पर अनेक वीरपुरुषोंका रक्त लगा हुआ है। जब मैंने उसे उलटा, तो यकायक उसका चिकना भाग ऊपर आगया। चन्द्रकिरणके उस पर पड़ते ही, फिर वही हृदयवेधक

चमक निकलने लगी, जिसेकि मैंने मुर्दोंकी गुफामें, उस कंकालगर्तमें देखी थी ।

मैं स्तब्ध हो गया । एक ही क्षणमें मारे आतंकके मेरा हृदय शून्य हो गया । मेरे लिये आसानीसे स्वाँस लेना कठिन हो गया । फिर वह सारा ही गुफाका अतीत दृश्य एक एक करके बड़े स्पष्ट रूपमें मेरे सन्मुख आना शुरू हुआ । अब यह अभागा काँच मेरे लिये असह्य हो चला । भयकी झोंकमें मेरा हाथ उठा, और शायद दूसरे क्षण वह समुद्रके अन्धकार पूर्ण गर्भमें सदाके लिये चला जाता, और वहाँ फिर उसे कोई आँखों देख न पाता, किन्तु उसी समय मोहनने करवट ली और कुछ बरबराया । अब मेरी अकल कुछ ठिकानेसी हुई । मेरा भय चला गया । मैंने झट उसे फिर रूमालमें बाँध पाकटमें रख लिया । किन्तु यह निश्चय कर लिया कि हरिके जागते ही, इसे उन्हें देदूंगा । इस अभागे काँचके टुकड़ेको मैं कदापि न रक्खूंगा । हरि समझते हैं, इसका कुछ मूल्य है, यह साक्षीका काम देगा; किन्तु मेरे लिये तो इसकी साक्षी अवांछनीय, असह्य और भयंकर है ।

यह मोहनका बरबराना था, जिसने उस काँचके टुकड़ेको बचा लिया, और साथही हम लोगोंको भी । क्योंकि उसी समय स्मरण आया कि मैं देख भाल के लिये वैठा हूँ । मैं एकाग्रचित्त हुआ, और उसी समय मैंने कुछ सुना । जिसके सुनते ही मैं झटपट उठ खड़ा हुआ । क्या यह कोई जहाज तो नही है ?

चन्द्रिका इस समय अपने यौवन पर थी । शशि इस समय हमारे शिर पर थे । मैंने प्रकाशमार्गके साथ उसकी ओर नज़र

डाली। निस्सन्देह मैं कुछ देख रहा था। क्या यह कोई श्वेतपाल उस सुनहले प्रकाशमें तो नहीं दिखलाई देरहा है? मैंने अपने हाथों से अपनी आँखोंको मला, फिर देखा। फिर मैं अपने समीप वाले मस्तूलको पकड़ कर खड़ा होगया, और ध्यानसे देखने लगा। पाल? नहीं यह पाल नहीं हो सकता। यह चाँदनीमें सफेद कानविसकी चमक नहीं है। यह चमकीले फौलाद पर किरणोंका प्रतिफलित होना ही हो सकता है। किरणें हिल रही थीं। हाँ, इधर ही आरही थीं और जल्दी जल्दी। इसका जो भाग किरणोंके सन्मुख पड़ता था वहाँसे चमक उठती थी। किन्तु अगल बगलमें कुछ काली छायासी मालूम होती थी। इस अद्भुत और भयंकर वस्तुका मुंह हमारी ओर था। यह चुपचाप किन्तु शीघ्रतासे हमारी ओर आरही थी।

मैं जल्दीसे बोल उठा--"मोहन! हरि!" साथ ही मैंने अपने पैरसे हिलाया भी। मैं उस चीजकी ओरसे अपनी दृष्टिको हटाना नहीं चाहता था। हरिने उठकर जम्हाई ली। मोहनने नींदमें उँह उँह किया।

मैं---"खड़े हो जाओ, जल्दी!"

हरि झट खड़ा हो फुसफुसाये—"क्या है?"

मैं—" नहीं जानता देखो।"

कितनी जल्दी वह आई। अब वह सर्वव्यापक शान्ति एक भयंकर गम्भीर शब्दमें परिवर्तित होगयी। दूरसे बहुतसा जल आने की आवाज मालूम हुई। अब मैंने जाना—वह चन्द्रमाकी चमक थी, जो कि एक विशाल जलभित्ति—समुद्रीय महान् लहर—पर

प्रतिफलित होरही थी, उसकी गति बड़ी तेज थी । मैं चिल्ला उठा ।

"लहर है लहर ! पकड़ो जोरसे ।"

मोहन उठकर झट मस्तूलको पकड़ लेट रहा । मैंने और हरिने दूसरे मस्तूलको जोरसे पकड़ लिया । इसी समय लहरने झटका दिया और बेड़ा उसपर टँग गया । यह बड़ा अच्छा था, जो हमने सभी चीजोंको बेड़ेके साथ खूब जकड़-बन्द कर दिया था । रसदके बक्स भी काँटी ठोंककर अचल कर दिया गया था ।

मैं—"ठीक है न, मोहन !"

मोहन—"विल्कुल ठीक, अपनेको ठीक रक्खो ।"

हरिने चिल्ला कर कहा—"पकड़ो जोरसे अपने आपको ।"

उसी वक्त बेड़ा काँपने लगा । हमलोग ऊपर ऊपर चढ़ते गये । वहाँसे बेड़ा इतना सीधा हो गया था, कि हमारे कम्बलका कोना पानीमें गिरकर भींग गया, बेड़ेको मानो किसीने पहाड़ पर चढ़ा कर पटक दिया । थोड़ी देर तक तो हमलोग निराश होगये थे । बेड़ेकी टँगानके साथ हमारे प्राण भी टँग गये थे । थोड़ी देर बाद अब लहरों के ऊपर हमारा बेड़ा गेंदकी भाँति फेंका जाने लगा । पानी हमारे ऊपर थप्पड़ मारने लगा । अब बेड़ा कुछ सुरक्षित सा मालूम होने लगा; यद्यपि समुद्रकी हलचल बन्द न हुई थी । अब मैं बैठकर एक लम्बी काली रेखाको निहारने लगा, जोकि दक्षिणकी ओर जा रही थी ।

भयंकर आपत्ति आई, किन्तु उसने हमें छोड़ दिया । हम किस्मत के मारे हुओं पर उसने भी दया दर्शायी । मरेको मारना उसे भी कायरता मालूम हुई । थोड़ी देरतक तो मैं बोखलासा गया, फिर

घबराहटके साथ बोला—

"यह बड़ी भयंकर लहर थी, किन्तु वह चली गई, और हम अब भी यहाँ हैं।"

मोहन—"धन्य भाग्य ! यह कहाँसे आई ? यह इधर साधारण बात है क्या ?"

हरि ही एकमात्र इसका उत्तर दे सकते थे। उन्होंने कहा—"नहीं, यह साधारण बात नहीं है। ज्ञात होता है, यह किसी जलमग्न भूकम्पसे उत्पन्न हुई थी, अथवा उसी टापूमें कोई बात हुई है। हाँ, सच यही बात है। मधुच्छत्रमें एक भूडोल आया, और सभी चीजें उसकी समुद्रके गर्भमें चली गईं। खुद वह स्थानभी अब अगाध जल-राशिका स्थान हो गया। ऐसी बातें पहिले भी भूमंडलके अनेक भागोंमें हुई है।"

अब हम अच्छी तरह जानते हैं, कि उनका अनुमान ठीक था। उसी रातको जीर्ण ज्वालामुखीने अन्तिम जीवनके लक्षण प्रदर्शित किये, और अन्तमें वह सदाके लिये समुद्रतलमें विलीन होगया। अब भी तुमको नकशेमें 'मधुच्छत्र मग्न' के नामसे उस स्थानका निशान मिलेगा।

मोहन अब होशमें आने लगा था। उसने कहा—"अच्छा, यदि फिर इस आस-पासमें ऐसा हुआ ? मुझे आशा है, हमारे रहते रहते न होगा, और यदि हुआ भी तो लहरें न उठेंगी। मुझे समुद्रका रहना पसन्द है, किन्तु समुद्रके ऊपर रहना, समुद्रके नीचे नहीं, करोड़ों मन पानीके अन्दर नहीं।"

अब प्रकृतिमें परिवर्तन आगया। अब वायुमंडलमें कुछ गति

थी। सभी चीजें सजीव मालूम होती थीं। चन्द्रमा फिर सुन्दर मालूम होने लगा। यहाँतक कि 'शुभाशा' ने भी जलतरंगों पर जाना आरम्भ किया। अब हमैं भी कुछ काम करनेका अवसर मिला हरिने कहा—

यह शायद अग्निकोण होगा, किन्तु पूर्वकी ओर कुछ अधिक झुका हुआ है, यद्यपि यह वह रुख नहीं है, जो हमैं अभीष्ट है, किन्तु जोई हो सोई। अब पालको एकदम तान दो।"

पाँच मिनट भी नहीं होने पाया, कि बेड़ा फिर ठीक हो गया। उसने पानी काटते हुए आगे बढ़ना शुरू किया। अफ्रीकाके किनारे का उसने रास्ता लिया। यदि सौभाग्य हुआ तो, हम एक मास या कुछ अधिकमें वहाँ पहुंच सकेंगे। अब सब चीजोंको फिर कायदेसे जहाजके ढंगपर सजा दिया। हरिने बागडोर हाथमें ली। उन्होंने कहा—

"माधव ! अब तुम्हारी वारी है, सो जाओ। हम और मोहन अब ड्यूटी पर हैं। यदि फिर कोई बात हुई, तो हम तुम्हारी ही तरह तय्यार रहेंगे। अच्छा आराम करो।"

मैं इतनी गाढ़ निद्रामें और इतनी अच्छी तरह सोया, कि मुझको स्वप्न भी न आया। चन्द्रमा पश्चिमी समुद्रमें डूब गया। उषाके आगमनसे तारे पीले हो गये। उसी समय एक परिचित आवाज सुनाई दी—

"माधव ! जाग जाओ, उठो, यह देखो।"

मुझे पहिले एक विचित्र छोटीसी छाया पानीमें दिखाई पड़ी। फिर किसी चीज पर लहरोंको खेलते देखा। उसके चिकने पृष्ठ पर

चढ़ती है और फिर दूसरी ओर कूद जाती है। हरिने इसे एक मृत ह्वेल मत्स्य समझा था, किन्तु मेरे जगानेसे पूर्व उनके विचार परिवर्त्तित होगये थे। वह वस्तु किसी समुद्री प्राणीसे कई गुना भारी थी। वह स्वयं न चलती थी, और हमसे तीन सौ गजकी दूरीपर पड़ी थी। हमारा हल्का बेड़ा नजदीक आता जारहा था। अब प्रकाश भी अधिक हो चला था। हमने नजदीकसे और भी उसकी आकृतिको देखा।

मैं—"यह तो जहाज है।"

हरि—"हाँ, स्टीमर, और 'मौडमूलर'के आकारका। शायद हमने द्वीपको उनसे पहिले छोड़ा। उनको भाप तय्यार करना तथा और तय्यारीभी करना था, अथवा डेलिंगने अटकल लगानेमें गल्ती खाई, अथवा कप्तानने उसकी राय स्वीकार करनेमें गफलत की। अर्थात् वह द्वीप हीमें थे, जबकि अन्तिम घड़ी आ पहुंची। उस भयंकर लहरने स्टीमरको लौकेकी भाँति उठाकर उलट दिया, फिर उसे यहाँ तैरते छोड़ दिया। माधव! यह टूटा फूटा नहीं है; यह लोहेकी कब्र है।"

तीन दिनतक हम इसी तरह चलते गये। चौथे दिन सबेरे हमारे दुःखका अन्त हुआ, जबकि 'पर्नम्बकू' हमें उठाकर रायो-दि-जेनेरोकी ओर चला।

———

विंश अध्याय

आँखका जानकार।

"पर्नम्बकू" के पोतारोहियों और कप्तानने हमलोगोंके साथ बहुत ही सहानुभूति दिखाई। उस समय मेरी तबियत खराब थी, किन्तु, उन ब्राजीली बन्धुओंने सब तरहका प्रबन्ध स्वजन बान्धवोंकी भांति किया। मैं पोर्तुगीजी नहीं जानता था, किन्तु अंग्रेजी द्वारा हमारा काम बखूबी चल जाता था। जब हम "रायो-दि-जेनेरो, ब्राजीलकी राजधानीमें पहुंचे, तो "पर्नम्बकू" के कप्तानने हमारे सारे वृत्तान्तके साथ एक परिचयपत्र दिया।

यद्यपि अस्वस्थ होनेसे मैं जहाज पर कुछ कर न सका था, किन्तु मुझे प्रसन्नता हुई, जब मालूम हुआ, कि मेरे मित्रोंने बहुतसी उपयोगी सूचनायें वहाँ संग्रह कर ली थीं। वहीं पता लग गया था कि, 'रायोंमें बौद्ध प्रचारकसंघका केन्द्रीय कार्यालय है। प्रधानभिक्षु भद्रघोष यहीं पर रह हैं। 'रायो' में गर्मी अधिक थी, इस लिये, हम दो एक दिन आश्रम पर ही रहे। पीछे प्रधानजी तथा एक दूसरे भद्रपुरुषकी भी राय हुई कि कुछ सप्ताह हमारा पेत्रोपोलिस में रहना अच्छा होगा, यही यहाँका शिमला है। स्वामीजीने पेत्रोपोलिसके कार्यकर्ता श्रीधर्मरत्नजीको पत्रभी लिख दिया। हम लोग वहाँसे पेत्रोपोलिस गये। धर्मरत्नजी और उनकी धर्मपत्नी सुमित्रा देवी दोनों हीं बड़े सज्जन हैं।

उन्होंने हमारे साथ सौहार्द और सहानुभूति करनेमें हद कर दी।

तीन दिनके बाद मेरी तबियत बहुत कुछ अच्छी हो गई, और छठे दिनके बाद, तो यदि कोई बीमार कहता तो मुझे क्रोध हो आता। मैं अपना बहुत समय आश्रमके बागमें बिताता था। हरि और मोहन दोनों रोज 'रायो' जाया करते थे, जिसमें हरि तो कामसे जाते थे, किन्तु मोहनका काम मेरे लिये सिर्फ तरह तरहकी खबरें संग्रह करना था। मुझे मालूम हुआ, कि हरि हमलोगोंके घरकी यात्राके प्रबन्धमें हैं।

पेत्रोपोलिस आनेके सातवें दिन फिर घटनायें घटित होनी आरम्भ हुई। उस दिन हरि, मोहनके साथ लौट कर न आये। और मोहन भी देरसे करीब तीसरे पहर आया था। उसके देखने मात्रसे मालूम हुआ कि, आज कोई विशेष समाचार है। वह आकर मेरे पासकी कुर्सी पर बैठ गया। मैंने उत्सुकताके साथ पूछा—

"कोई खास बात है, क्या?"

मोहन—"क्या खास बातकी बड़ी खाहिश है?"

मैं—"क्यों नहीं, तुम्हारी खबरोंमेंसे, दोस्त।"

मोहन—"तुम निस्सन्देह अब बहुत अच्छे हो, किन्तु उस्ताद जरा भी कृतज्ञ नहीं होते।"

मैं—"कृतज्ञताके लिये भी तुम्हें अलग टिकट कटाना होगा, जानते हो भारत बहुत दूर है। अच्छा, जाने दो, सुनाओ क्या बात है?"

अब मोहन बातें स्मरण करने लगा। फिर बोला—

"हरि दूसरी ट्रेनसे आ रहे हैं। वह किसीकी प्रतीक्षामें रुक गये हैं। उसे वह तुम्हें देखनेके लिये ला रहे हैं। मैं भी साथ ही आनेवाला था, किन्तु फिर उन्होंने क्या सोचकर पहले भेज दिया। चलो तुम्हें खबर पहलेसे तो मिल गई।"

मैं—"मेरी तबियत तो इस देखा-देखीमें और खराब होती जा रही है। यह नहीं बताओगे कि कब चलना होगा?"

मोहन—"जब तुम्हें जरा सभ्यता आजाय। तुम्हें इसी समय बीमार होनेको किसने कहा था? अच्छा जो उत्सुक हो तो सुनो। हमारी यात्राका प्रबन्ध हो गया है। ठीक आजसे छै दिन बाद डाक के जहाज 'दामिनी' से हम रवाना होंगे; किन्तु यदि सर्कार अपने आपको तय्यार कर सकें तब?"

मैं—"अच्छा, इस पर विचार किया जायगा। लेकिन यात्राके व्ययके लिये हमें जहाज पर काम करना होगा न?"

मोहन—"जरूर, तिसमें आप तो पूर्णाहुति कर देंगे। नहीं बच्चू! हम लोग मुसाफिरके तौर पर चलेंगे और फर्स्टक्लासके कमरेमें। सुना?"

मैंने मेजपरसे एक अच्छा अंगूर चुना और उसे मोहनके ऊपर पर फेंकमारा। उसने कहा—"हाँ, यह पारितोषिक? किन्तु हँसी नहीं बात बिल्कुल ठीक है। भारतीय राजदूतसे हरिने परिचय प्राप्त किया। फिर उनके द्वारा महारानी जगदीशपुरसे फोन द्वारा वार्तालाप हुआ। महारानीने पाँच हजार रुपयेका तारमनीआर्डर भेजा है। और हम लोग अब अमीरोंकी भाँति यहाँसे प्रस्थान कर रहे हैं।"

मैं—"उन्हें कथा सुनानेके लिये, क्यों?"

मोहन—"इतनाही नहीं, वहाँ दूतागारमें लोग 'मौडमूलर' के नष्ट होनेकी बात कर रहे थे।"

मैं—"वाह।"

मोहन—"इतना ही नहीं। भूकम्प तूफानका पता लगते ही, सैनिक जहाजोंने भूकम्पके प्रदेशकी पड़ताल आरम्भ की, कि देखें कोई यात्री जहाज खतरेमें तो नहीं। किन्तु सौभाग्यसे मधुच्छत्र प्रधान प्रधान सामुद्रिक मार्गोंसे दूर है, इसलिये मार्गके जहाजोंको कोई हानि न हुई। उन्हीं जहाजोंमेंसे एकने 'मौडमूलर' के शवको पाया और टकरानेके खतरेसे बचनेके लिये तोप दागकर उसे डुबा दिया।

मैं—"और उसको भी, जो कुछ कि उसमें था?"

मोहन—"निस्सन्देह। उसे डेलिंगके रहस्यका पता न था। वहीं मधुच्छत्रका रहस्य भी उसकीही भाँति समुद्रतलमें विलीन हो गया और महाराजकी निधिभी।"

मैंने इस पर लम्बी साँस ली। किन्तु मेरे लिये वह निधि एक काल्पनिक निधि थी। मैंने कभी उसके विषयमें विशेष ध्यान न दिया था। महाराजकी दो अरब वाली बात मेरी समझसे बाहरकी बात थी। हाँ, बूढ़े भगेलूकी हत्या मेरे लिये दिल खौला देने वाली बात थी। खैर, आखिरकार उन नरपिशाचोंको उनके योग्य ही दण्ड मिला।

इसके बाद मेरा दिमाग घर और कमलाकी ओर गया। मैंने तुरन्त पूछा—"मैं समझता हूँ, हरिने देश पर तार दे दिया होगा?"

मोहन—"भारतीय राजदूतने हमारे आनेके बाद तुरन्त ही

दे दिया। तुम्हें डरनेकी जरूरत नहीं। वह लोग जान गये हैं, कि तुम अब सुरक्षित हो।"

मोहनने ऐसा कहा, और उसे ऐसा ही विश्वास था किन्तु पीछे हमें मालूम हुआ, कि राजदूतके समझनेमें गलती हुई। उनका संक्षिप्त तार था—" 'शोभा' के यात्रियोंमेंसे तीन आदमियोंको एक बेड़ेपरसे एक जहाजने उठाया है, वह दक्षिणी अमेरिकाके एक बन्दर पर उतारे गये हैं। मोहनके सम्बन्धियोंने बड़ी आशा और उत्सुकतासे इस सूचनाको पढ़ा, किन्तु मेरी बहिन बिल्कुल अन्धेरे ही में रही। बादमें फिर हमने पत्र भी न लिखा, क्योंकि पहिली डाकके साथ हम रवाना होनेवाले थे।"

न जानते हुए मैंने कहा—"अच्छा तो ठीक। और भी कोई खबर ?"

मोहन—"बहुत आदमियोंकी जीभ इतनी बढ़ जाती है, कि चाहे उनका पेट भरकर फटता जाता हो, लेकिन उन्हें सन्तोष नहीं होता। अगर दोस्त तुम ! और खबर चाहते हो, तो दूतागारमें उसकी कमी नहीं है, और तुम्हारा स्वागत भी वहाँ तुम्हारे योग्य ही होगा।"

हमारी बात अभी चलही रही थी, कि हरि आगये। बागमें न आ वह सीधे घरमें चले गये। वह अपने साथ एक लम्बे चौड़े मध्य वयस्क भारतीय भद्र पुरुष को भी लाये थे।

मोहन—"हाँ, मेरी समझमें वह इन्हीं देवताजीके लिये रुके हुए थे।"

मैं—"दूसरे डाक्टर ?"

मोहन—"मैं समझता हूँ, कोई विशेषज्ञ। तुम्हारी दशा ऐसी है, और हमें दूसरे सप्ताह प्रस्थान करना है।"

मैं—"किन्तु, मैं उनसे नहीं मिलूंगा। मैंने पिछली वार हरिसे साफ कह दिया, कि यदि अब फिर कोई डाक्टर लाये तो मैं उससे एक बात भी न करूंगा। इस लिये आप ही जाकर, अपनी नस-नाड़ी दिखलाओ।"

हरि घरसे निकल कर हमारे पास आये। यद्यपि धूपसे आये थे, किन्तु उनका चेहरा वैसा ही शान्त और शीतल था। मुस्कुराते हुए उन्होंने पूछा—"कहो माधव! कैसा है? मोहनने खबर सुनाई न?"

मैं—"मैंने थोड़ी ही झपट पाई है। लेकिन तय्यारी जल्दी होनी चाहिये।"

हरि—"तय्यारी सब ठीक है। किन्तु महाराजके सम्बन्धकी बातके लिये कुछ परीक्षा और प्रतीक्षाकी अवश्यकता थी। वह भी ठीक हो गया। अब सिर्फ एक बात है, यदि तुम्हारी मर्जी हो, तो वह भी एक घंटेमें तै हो जाती है।"

मैंने लम्बी साँस ली और कहा—"मैंने आपसे कह दिया था, कि मैं अब किसी डाक्टरकी सूरत देखना नहीं चाहता। मैं अब भला चंगा हूँ। और वह मुझे फिर बीमार करेंगे। किन्तु जब तुम उसे लिवा ही लाये तो अब क्या करना है। किस बातका विशेषज्ञ है वह? नाड़ी, दाँत, आँख या किसका?"

कुछ सोचनेके बाद हरिने कहा—"आपकी आँख, महाशय! उसीकी परीक्षा की जायेगी।"

मैं—"क्यों उसमें क्या है ? जरासी उठ आई है। और यह तो मामूली बात है. सभीको कभी कभी उठ आती हैं।

आखिर मैंने समझ लिया कि जान नहीं बचैगी। मैं वहाँसे उठा, और दोनों आदमी मुझे घरमें ले चले। नवागत सज्जन हमारे बैठके में कुर्सीपर बैठे थे। हरिने मुझे एक कुर्सी दी और आगत महाशयका 'महाशय विजयशंकर' के नामसे परिचय कराया। फिर हम दोनोंका 'वन्देमातरम्' हुआ।

हरि—"यही महाशय माधवस्वरूप हैं, महाशय विजयशंकर! आँख वाले। (फिर मुझसे) महाशय विजयशंकर एक मनोरंजक बात कहने वाले हैं, क्या वह आरम्भ करैं ?"

मेरी तबियत इन सभी उपचारोंसे और बिगड़ती जा रही थी। मैंने अनमनासाही हूँ, कर दिया। अब महाशय विजयशंकरने आरम्भ किया—

"मैं आप से मिल कर, महाशय माधवस्वरूप! बहुत प्रसन्न हुआ हूँ, और आपके उस भयानक जगह से बचनेके लिये अनेक धन्यवाद, साधुवाद या बधाई। यह बड़ी विचित्र कथा है, किन्तु आज मुझे आपको कारबारके विषयमें एक सूचना देनी है। मैंने सचमुच आँखकी परीक्षा की है। ऐसी और भी कितनोंकी की है। और अब मेरा सौभाग्य है, जो मैं अपनी परीक्षाका परिणाम आपसे कहने जा रहा हूँ।"

मैं हैरान रह गया। क्या सचमुच यह ऐसा विशेषज्ञ है, जो तीन गज दूरसे सिर्फ दो मिनटमें मेरी आँखोंकी परीक्षा कर डाले, और फिर उसका परिणाम बतावे ? क्या बात है ? जिस

समय मैं इन्हीं आश्चर्यमें डालने वाले विचारोंमें गोते खारहा था, उसी समय मैंने अपने पीछे कुछ आवाज सुनी। मुझे मोहन के खाँसनेकी सी आवाज सुनाई दी। मैंने समझा आज कोई भारी मजाक होने जा रहा है। मैं अब सजग रहनेकी कोशिश करने लगा।

अब मैं स्थिर होकर प्रतीक्षा करने लगा। महाशय विजयशंकर को इस मजाकका कोई पता नहीं था। वह बिचारे अपने काममें लगे थे। उन्होंने अपने पाकटसे चमड़ेसे मढ़ा एक छोटासा डिब्बा निकाला, और उसे मेज पर रख दिया।

विजयशंकर—"शायद अपनी मेहनतका परिणाम दिखाना ही पहिले अच्छा होगा। मेरी समझमें बादमें बात करना आसान हो जायगा।"

उन्होंने डब्बेको स्प्रिंग दबाकर खोला। अब ढक्कन पीछे गिर गया। और वहाँ मखमलके ऊपर कोई चीज रक्खी जान पड़ी। कुछ चीज? अस्तु। यह और कुछ नहीं था, एक बड़ा हीरा था, मुर्गीके अंडेसे बड़ा और अत्यन्त ही सुन्दर। पहले पहल देखनेमें कुछ न मालूम हुआ। मालूम हुआ कोई स्फटिकका काटा हुआ टुकड़ा है। किन्तु घरमें खिड़कीसे पूरा प्रकाश आ रहा था। जब मैंने उसकी ओर देखा तो मालूम हुआ, वह सारी किरणोंको जमाकर फिर उसे हजार गुना करके आश्चर्यमय नाना वर्णकी किरणोंके रूपमें देना चाहता है। अब मुझे मालूम हुआ, कि जैसे वह चीज जीवित होगई। प्रकाश और किरणोंको बढ़ाते बढ़ाते अन्तमें जान पड़ा जैसे बल उठी। कुछही क्षणमें मालूम होने लगा, कि कमरेके सभी प्रकाशों

की वह नाभि है। महाशय विजयशंकरने उसे उठा कर जब हाथमें उलटा पलटा, तो जान पड़ा प्रकाशकी झड़ीसी लगी हुई है!

मैंने आश्चर्यके साथ कहा—"हीरा"।

फिर हरिने स्पष्ट करते हुए कहा —

"वही मुर्दोंकी गुफावाली तुम्हारी शैतानकी आँख है। सिर्फ कटाई की गई है, और कुछ नहीं। महाशय विजयशंकर इसके विशेषज्ञ हैं। वह इसीके बारेमें तुमसे बातचीत करने आये हैं।

तब मुझे बातकी तह मालूम होने लगी। यह वही काँचका टुकड़ा है, जिसे कंकालगर्तसे लेआया गया था, और जिसे मैं समुद्रमें फेंक चुका था, यदि जरा ही देर और मोहन करवट न लेता! मुझे इसकी बात भूल ही गई थी।

विजयशंकर मुस्कुराकर बोले—"यह हमारे जैसे लोगोंके लिये बड़ी लालसाका काम है, यद्यपि इसमें जोखिम भी था। हमारी कोठीके लोग इस गौरवके लिये अभिमान करते हैं, कि उन्हें इस महान् रत्नकी परीक्षा और काटनेका काम सौंपा गया। पहिली ही नजरमें हमलोगोंने मालूम कर लिया, कि यह एक हीरा है, शुद्ध और बड़े मूल्यका। हमारी सारी ही परीक्षाओंमें यह पक्का निकला। इतना ही नहीं इसमें कुछ औरभी बातें हैं, जो इसे और हीरोंसे ऊँचा दर्जा देती हैं। देखिये मैं दिखाता हूं।"

उन्होंने पत्थरको हाथमें लेकर मेरी ओर घुमाया। और एकदम उसी एक पहलसे एक लाल चमकीली रोशनी निकलने लगी, जो मानों उसके हृदयमें वर्त्तमान प्रचण्ड अग्निकी किरण थी। थोड़ी देर

इसने मुझे चकित कर रक्खा, फिर मुझे कंकालगर्दका वह भीषण कांड, चन्द्रिकामें उसका प्रकाश, सभी बातें याद आने लगीं।

म० विजय—"आपने देखा, इस रत्नमें कुछ विशेषता है, जो इसके सौन्दर्य और मनोहारिताको बढ़ा देती है। हम बहुतसे प्रसिद्ध हीरोंको जानते हैं, किन्तु इस प्रकारका हीरा हमें कहीं न देखनेको मिला। यह संसारका एक बड़ा हीरा, एक सर्वोत्कृष्ट वज्रमणि आपके सन्मुख है। ब्राजीलकी हीरेकी खानें मशहूर हैं, किन्तु यहाँ भी ऐसा हीरा कभी नहीं मिला। इसका वजन करने पर तीन सौ करेट है, अर्थात् 'कोहनूर' (१०३ करेट) और 'मुग़ल आज़म' (२०० करेट) से भी अधिक। यह शोभामें ब्राज़ीलसे निकले 'दक्षिणी तारा' से भी बढ़कर है। चूंके हम इस रत्नकी महत्ताको समझते हैं, इसलिये दक्षिणी तारासे दूना दाम, अर्थात् पन्द्रह लाख रुपया इसके लिये आपको देनेको तय्यार हैं। हमें आशा है कि आप महाशय माधव-स्वरूप! इसे स्वीकार करेंगे। हम यह नहीं कहते, कि आपको इससे और अधिक कीमत न मिलेगी। किन्तु आपको हमारे जैसा ही ग्राहक खोजना होगा। आप जानते हैं, यह वह रत्न नहीं जो गलीके कोनेमें बेंचा जा सके।"

मैंने थोड़ी देर तक सोचना शुरू किया। फिर हरिसे पूछा—

मैं—"क्या कहते हो हरि?"

हरि—"यह तुम्हारे हाथ की बात है, मैं इसके विषयमें क्या कहूँ? किन्तु मैं यह अवश्य कहूँगा, कि महाशय विजयशंकरने गैरवाजिब नहीं कहा है। यह श्री विजयशंकर कृष्णप्रकाश कोठी के भागीदार हैं। ब्राजीलमें भी यह सबसे प्रसिद्ध जौहरी हैं।"

राहुलजीकी ग्रन्थ[illegible]

प्राप्तिस्थान
रामनाथ त्रिवेदी
हिन्दी कुटिया

युनाइटेड प्रेस लि० पटना ।